मैथिली लोकगीत

संग्रहकर्ता तथा संपादक
श्री रामइक़बालसिंह 'राकेश'

भूमिका-लेखक
पंडित अमरनाथ झा

२०१२
हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग

प्रकाशकीय

श्रीमान् बडौदा नरेश सर सयाजीराव गायकवाड महोदय ने बम्बई सम्मेलन में स्वय उपस्थित हो कर पाँच सहस्र रुपये की सहायता सम्मेलन को प्रदान की थी। उस सहायता मे सम्मेलन ने सुलभ-साहित्य-माला के अतर्गत अनेक सुन्दर ग्रन्थो का प्रकाशन किया है। अन्य हिन्दी-प्रेमी श्रीमानो के लिए स्वर्गीय बडौदा-नरेश का यह कार्य अनुकरणीय है।

प्रस्तुत 'मैथिली लोकगीत' के सग्रहकर्ता श्री रामइकबालसिह 'राकेश' ने परिश्रम के साथ सुन्दर तथा सुरुचिपूर्ण ढग से मैथिली लोकगीतो का सग्रह किया है। उनका यह प्रयास श्लाघ्य है। पण्डित अमरनाथ झा ने इसकी विद्वत्तापूर्ण भूमिका लिख कर पुस्तक का महत्त्व बढा दिया है।

—साहित्य-मंत्री

विषय-सूची

भूमिका

ग्राम्य-साहित्य साहित्य का एक वहुत वडा अग है। कोई भी साहित्य जीवित नही रह सकता है जिसका मौलिक सम्वन्व जन-स धारण से न हो। कुछ थोडे से विद्वानों द्वारा कोई साहित्य अधिक दिन तक प्रफुल्लित, उन्नत अ.र पल्लवित नही रह सकता है। साहित्य के कुछ अग तो ऐसे है जो राजाओ और धन-सम्पन्न सज्जनो के आश्रय में रचे जाते है, कुछ ऐसे जो केवल प्रकांड पंडितो के योग्य होते है, और कुछ ऐसे जो जन-साधारण के लिए होते है। तीनो प्रकार के साहित्य का अपना अपना महत्व है और सव को अपना अपना मूल्य है। परन्तु यदि किसी देश अथवा समाज की यथ.र्थ झलक कही मिलती है त तीसरे प्रकार के साहित्य में। यह साहित्य वहुधा मौखिक हुआ करता है। दादियो से सुनी हुई कहानियो, कृपको की कहावतों स्त्रियो के गानो में यह साहित्य मिलता है। परन्तु काल इतना परिवर्तन शील है और जनता की रुचि इतनी शीघ्रता से वदलती रहती है कि कुछ ही दिनो में यह साहित्य टीका की अपेक्षा करता है। इसलिए यह आवश्यक है कि इनका सग्रह यथाशीघ्र पुस्तक रूप में प्रकाशित किया जाय जिससे इनको मुद्रित अमरत्व प्राप्त हो। राकेश जी कोई सात-अ.ठ वर्ष से मिथिला के भिन्न-भिन्न गाँवो में जा-जाकर लोकगीतो का सग्रह कर रहे है। जिस लगन से, परिश्रम से, एकाग्रमन से इन्होने इस महत्व का काम किया है उसकी प्रशसा जितनी की ज.य, कम है। प्रस्तुत पुस्तक में उनके सग्रह का थोडा ही भाग प्रकाशित हो रहा है। इसी पुस्तक के आकार के एक ग्रन्थ की सामग्री और तैयार है, और आशा है कि समय अनुकूल होने पर वह भी प्रक.शित हो जायगा। राजस्थान और वुन्देलखड, व्रज-मडल और छत्तीस गढ के लोक गीतो का सग्रह प्रकाशित हो चुका है अथवा हो रहा है। क्य

ही अच्छा हो यदि इस प्रकार का काम और भी उपप्रान्तो में किया जाय। यह इतना बडा काम है कि साहित्य-सस्थाओ को इस ओर प्रवृत्त होना चाहिए। राकेश जी ने अकेले, बिना किसी की सहायता से, यह कार्य सम्पन्न किया है और सम्मेलन को इसे प्रकाशित करते हुए बडी प्रसन्नता है।

लोकगीतो की विशेपता यह है कि इनमे हृदय के वास्तविक उद्गार है और ये सद्य हृदयग्राही है। शिष्टता और सभ्यता का वाह्य प्रभाव जो भी हो, शिक्षा और समाज-द्वारा व्यक्ति विशेप में जो भी परिवर्तन हो, किसी के मनुष्यत्व में, मानवता में कोई भेद नही होता है--कोई चाहे गाँव का रहने वाला हो अथवा नगर का, झोपडी मे अथवा महल में, मूर्ख हो अथवा पडित, सन्तान के जन्म के अवसर पर, एक ही प्रकार का आनन्द सब को होता है। पिता-माता के देहावसान से सभी को समान शोक होता है। विवाह के समय एक ही प्रकार की खुशी मनाई जाती है। नव-विवाहिता कन्या जब अपने घर जाने लगती है तब उसके माता-पिता का दु ख बहुत ही करुणा-पूर्ण होता है। किसी प्रियजन के विरह का शोक, दारिद्रय के कष्ट, यौवन के उमग, वालकाल की क्रीडायें, वृद्धावस्था का असामर्थ्य, रोग, इत्यादि सब सभी युग और समाज की सभी श्रेणी में समान है। प्रकृति के दृश्य, ऋतुओ की सुन्दरता, वर्षा की कमी, सदा हृदय में भाव को उत्तेजित करने का सामर्थ्य रखती है। इन्ही विषयो पर लोकगीत है। इन साधारण विपयो पर हृदय के यथार्थ और सत्य भावो का उद्गार इनमें है। जब कोई किसी नदी पर नाव मे यात्रा करता है तो उसे कही तो गगन-चुम्बी पर्वत देख पडता है, कही जल-प्रपात, कही घने जगल, कही बडी सुहावनी वाटिका, कही खेत, कही ऊसर भूमि, कही झोपडे, कही श्मशान—ये सभी प्रकृति के अश है और ये सब मिल कर प्रकृति की सम्पूर्ण और यथार्थ छवि दिखाते है। इसी प्रकार मनुष्य के जीवन में उल्लास, खेद, विरह, मिलन, क्रोध, ईर्ष्या, स्नेह इत्यादि सभी भावो का कभी-न कभी अनुभव होता है। इनमे कुछ तो जीवन के मर्म्म तक पहुँच जाते है, कुछ केवल क्षणिक प्रभाव उत्पन्न करते है, कुछ व्यक्तिविशेष तक रह जाते है, और कुछ का प्रसार बहुत जनो

तक होता है। लोकगीत के विषय में, "सुहृदसंघ" के वार्षिक अधिवेशन में मैंने कहा था ("इन सरल पदो मे देश की यथार्थ दशा वर्णित है, यहाँ की सस्कृति इनमें सुरक्षित है। सभ्यता तो वाह्य आडम्बर है, कल तुर्कों की थी, आज अग्रेजो की है। भारतीयता हमारे गाँव के रहनेवालो में है, जो शहरो के क्षणभगुर आभूषणो से अपने स्वाभाविक रूप को छिपा नही चुके है, जिनमें युगो से वेदना सहन करने की शक्ति है, जो सुख-दु ख में, हर्ष विषाद में, जगत्स्रष्टा को भूलते नही है, जो वर्षा के आगमन से प्रसन्न होते है, जो खेतों में, जाडे गर्मी में, प्रकृति देवी के निकट, अपना समय बिताते है। इन गानो मे हम मनुष्य जीवन के प्रत्येक दृश्य को देखते है, कन्या के ससुराल चले जाने पर माता के करुण स्वर सुनते है, पुत्र के जन्म पर माता-पिता के आनन्द की ध्वनि पाते है, खेतो के वह जाने पर हताश किसान के क्रन्दन, व्याह के अवसर पर बधाई के गान, गृहिणी के विरह की व्यथा, सन्तान की असामयिक मृत्यु पर मूक-वेदना—अर्थात् मानविक जीवन की नैसर्गिक कविता का रसास्वादन करते है।")

मैथिली भाषा और साहित्य बहुत प्राचीन है। प्राचीन ग्रन्थ के अनुसार मिथिलाप्रान्त की सीमा यो है

गंगाहिमवतोर्मध्ये नदीपचदशान्तरे।
तैरभुक्तिरिति ख्यातोदेश· परमपावनः॥
कौशिकीं तु समारभ्य गडकीमधिगम्य वै।
योजनानि चतुर्विंश व्यायाम· परिकीर्तित॥

इसको मैथिली में एक कवि ने यो लिखा है

गगा वहथि जनिक दक्षिण दिशि पूर्व कौशिकी धारा।
पश्चिम वहथि गंडकी, उत्तर हिमवत वल विस्तारा॥
कमला त्रियुगा अमृरा धेमुरा वागवती कृतसारा।
मध्य वहथि लक्ष्मणा प्रभृति से मिथिला विद्यागारा॥

आठवी शताब्दी से अब तक इस प्रान्त की मातृ-भाषा, मैथिली में

साहित्य-रचना होती चली आ रही है। प्रारम्भ में तो मैथिली-अपभ्रंश में ग्रन्थ लिखे गये, जिसका एक ज्वलन्त उदाहरण विद्यापति कृत "कीर्त्तिलता" है। इसी अपभ्रंश में "बौद्धगान तथा दोहा" लिखे गये। विद्यापति ने संस्कृत की अपेक्षा देशी भाषा को अधिक महत्व दिया—वह कहते हैं

सक्कय वाणी बहुअ न भावइ, पाउँअ रस को मम्म न पावइ।
देसिल बअना सब जन मिट्ठा, तँ तैसन जम्पओ अवहट्टा।।

विद्यापति ने "कीर्त्तिलता" मे जिस भाषा का प्रयोग किया यह आज की मैथिली के बहुत समीप है। यथा

बूडन्त राज्य उद्धरि धरेओ। प्रभुशक्ति दानशक्ति
ज्ञानशक्ति तीनुहु शक्तिक परीक्षा जानलि। रूसलि
विभूति पलटाए आनलि।

तेरहवी शताब्दी मे ज्योतिरीश्वर ठाकुर ने मैथिली में "वर्णरत्नाकर" नामक सुन्दर ग्रन्थ की रचना की। इसकी लेखनशैली "कादम्बरी" से समता रखती है—यथा अन्धकार का वर्णन

पाताल अइसन दु प्रवेश, स्त्रीक चरित्र अइसन दुर्लक्ष्य, कालिन्दीक कल्लोल अइसन मांसल, काजरक पर्वत अइसन निविड, आतकक नगर अइसन भयानक, कुमन्त्र अइसन निफल, अज्ञान अइसन सम्मोहक, मन अइसन सर्वतोगामी, अहंकार अइसन उन्नत, परद्रोह अइसन अभव्य, पाप अइसन मलिन, एवं विध अतिव्यापक दु सचर दृष्टिवधक भयानक गम्भीर शुचि भेद अन्धकार देखू।

इस भाषा मे मैथिल हिन्दू और मुसलमान, सब ने ग्रन्थ लिखा और यह साहित्य कम से-कम छ सौ वर्ष से विविध विषयो मे पूर्ण है। मुसलमानो ने मैथिली मे मर्सिया भी लिखा—यथा

एहि दसौ दिन सैयद बँसवा कटौलकै रे हाय हाय।
से हो बँसवा भेलै विसरनमा रे हाय हाय॥
एहि दसौ दिन सैयद लकडी चिरौलकै रे हाय हाय।
से हो लकडी भेलै विसरनमा रे हाय हाय।

आज कल भी यथेष्ट सख्या में मैथिल अपनी मातृभाषा में ग्रन्थ लिख कर अपनी परम्परागत साहित्य-सम्पत्ति की वृद्धि कर रहे हैं।

जैसा कि ऊपर कहा गया है यह सग्रह अपूर्ण है। "राकेश" जी के पास अभी और वहुत सामग्री है। केवल 'नचारियो' की ही सख्या एक सहस्र के लगभग होगी। नचारी मिथिला की एक विशेष वस्तु है। कई सौ वर्ष से शिव-भक्ति-पूर्ण ये गान वहा गाये जाते है—"आईने-अकवरी" में इसकी चर्चा है, विद्यापति के समय से अब तक इसकी रचना होती आई है। चन्द्र कवि के (जिनको अपनी वाल्यावस्था मे मैं प्रात नित्य देखा करता था और जिनका रचित "मैथिलीभापा रामायण" एक विलक्षण गन्थ है) दो नचारी मैं यहा उद्धृत करता हूँ।

(१)

चलु शिव कोवराक चालि हे, दोपटा ओढ़ू भोला।
अछि भरि नगर हकार हे भलमानुन टोला॥
हाडक हार निहारि हे हेरथि वघछाला।
हसति वसति सति आज हे जत आजोति वाला॥
भूधरराज जमाय हे छाउर करु त्यागे।
वहु विधि अतर सुगन्ध हे लागत अग रागे॥
प्रणत कहथि कवि 'चन्द्र' हे सुनु शम्भु निहोरा।
एजनहु घरि कि सुखाय हे रानिक दृगनोरा॥

(२)

शिव प्रिय अभिनव गीत प्रीति सौं रचितहुँ।
शिव-तट विगत विकार भक्ति सौं नचितहुँ॥

महोदार करुणावतार कां जँचितहुँ।
अन्त समय हम काल कराल सँ बचितहुँ।।
अछि भरोस मन मोर दया प्रभु करता।
शरणागत जन जानि सकल दुख हरता।।
मोर जीव दुखिया जानि सदाशिव ढ़ड़ता।
जे चाहथि से करथि भवानी भरता।।

विद्यापति के पद जो अन्य प्रदेशो में प्रसिद्ध हे अधिकतर राधा-कृष्ण विषयक है, परन्तु उनके रचित अनेक उत्तम नचारी भी है—यथा .

घर घर भरमि जनम नित
तनिकां केहन विवाह।
से आव करब गौरीवर
ई होए कतय निवाह।।
कतय भवन कत आँगन
बाप कतय कत माय।
कतहुँ ठओर नहि ठेहर
ककर एहन जमाय।
कोन कयल एह असुजन
केओ न हिनक परिवार।
जे कयल हिनक निवन्धन
धिक धिक से पजिआर।।
कुल परिवार एको नहि जनिका
परिजन भूत वेताल।
देखि देखि झुर होय तन
के सहय हृदयक साल।।
'विद्यापति' कह सुन्दरि
धरहु मन अवगाह।

जे अछि जनिक विवाही
तनिकाँ सेह पै नाह ॥

"श्यामा-चकेवा" के सम्बन्ध में पाठकों को यह जान कर उत्सुकता होगी कि इसका उल्लेख "पद्मपुराण" में है। "समदाउनि" एक बहुत ही करुणोद्भावक राग में गाई जाती है—विदा के काल की यह वस्तु है। संस्कृत साहित्य में इसका विशिष्ट उदाहरण "अभिज्ञानशाकुन्तल" के "श्लोकचतुष्टयम्" में है। ,समदाउनि कई अवसर पर गाई जाती है। नवरात्रि के पश्चात् जब दुर्गापूजा समाप्त होती है, तब का एक गीत यह है :

कि कहब जननि कहय नहि आवय छमिअ सकल अपराध ॥
नवओ रतन नव मास वितित भेल तुअ पदलगि परमान।
चललहुँ आज तेजि सेवक गण आकुल सब हक परान ॥
सून भवन देखि थिर न रहत हिअ नयन झहरि रह नोर।
गदगद बोल अम्ब तन थर थर हेरि अलोचन कोर ॥

कन्या जब माता-पिता से विदा होकर ससुराल जाती है उस समय उसको सम्बोधित करती हुई समदाउनि

धिया हे रहब सबहक प्रिय जाय ॥
एतय छलहुँ सभ के अति प्रिय भेलि
नेनपन देखि जुडाय।
ओतय रहब सभ के अनुचरि भेलि
भेटति ओतय नहि माय ॥
नेनपन सँ हम कतेक सिखाओल
बहुत बुझाय बुझाय।
जइतहि ओतय रहब तहिना भेलि
जनु दिअ नाम हँसाय ॥
बाजि सकी नहि, बहुत कहब की
आब कहल नहि जाय।

सेवा सभक करब तत्पर भय
लेब हम तुरन्त अनाय।।
छोडथि पैर नहिं माय कहथि नहिं
गद्गद कंठ सुखाय।
भन 'विन्ध्यनाथ' वियोग काल में
कानब एक उपाय।।

और आम की फस्ल समाप्त होने पर समदाउनि

फल हे! तेजह किएक समाज।
तोहरहिं बसें किछु गनल न उचनिच छोडल गेहक काज।
तुअ गुण अवुधि छुबुध मन होएत ई तोहि कत गोट लाज।।
मन अभिलाष लाख हम धयलहुँ यतनहि हृदय नुकाय।
उमडि उमडि से मगन ओतहि की एहन कठिन हिअ हाय।।
कोमल सरस विदित त्रिभुवन तो अकपट तथिहुँ विशेष।
प्रकृत बूझल तुअ गरल भरल हा सरल मनोहर वेष।।
गद्गद स्वर पुलकित तन थरथर आब कहल नहिं जाय।
भन 'गणनाथ' उदास कहब कत थकलहुँ बहुत बुझाय।।

चौठ चन्द के गीत, प्रभाती, ताजिया के गीत, रास, मान, योग, उचती, लगनी, चाँचर, विरहा, मगल इत्यादि और अनेक प्रकार के लोकगीत है, जिनका सग्रह राकेश जी ने किया है और जो, यदि सम्भव हुआ, तो द्वितीय भाग में प्रकाशित होगे।

हमे आशा है कि साहित्य-प्रेमी इनको आदर की दृष्टि से देखेंगे और इनमें यथार्थ भारतीय सस्कृति की झलक पायेंगे।

आश्विन कृष्ण ५
१९९९ सम्वत्

—अमरनाथ झा

प्राक्कथन

[१]

मिथिला प्राकृतिक सौन्दर्य्य से परिपूर्ण प्रान्त है। इसकी लावण्यमयी मंजुल मूर्त्ति, मधुरिमा से भरी हुई सरस वेला और उन्मादिनी भ वनाये किसके हृदय को नही गुदगुदा देती ? यहाँ के वसन्तकालीन सुहावने समय, बाँसो के झुरमुट मे छिपी गिलहरियो के प्रेमालाप, सुरञ्जित सुन्दर पुष्प, सुचित्रित पशु-पक्षी और कोमल पत्तियो के स्पन्दन अपने इर्द-गिर्द एक उत्सुकतापूर्ण रहस्यमय आकर्षण पैदा कर देते है। कही ऊदे-ऊदे बादलो की आँखमिचौनी, कही झहर-झहर करती हुई बलखाती नदियो की अठ-खेलियाँ, कही धान से हरे-भरे लहलहाते खेतो की क्यारियाँ—मतलब यह कि यहाँ की जमीन का चप्पा-चप्पा और आसमान का गोशा-गोशा काव्य की सुरभि से सुरभित हो रहा है और सगीत की निर्मल निर्झरिणी सदा अविराम गति से कलमल करती हुई दौड रही है।

'मिथिला' नामक महत्त्वपूर्ण पुस्तक के लेखक श्री लक्ष्मण झा के अनुसार मिथिला पूरब से पश्चिम तक १८० मील और उत्तर से दक्षिण तक १२५ मील है। इसका क्षेत्रफल २२५०० वर्गमील है। दरभगा, मुजफ्फरपुर, पूर्णिया, चम्पारन, उत्तर भागलपुर तथा उत्तर मुगेर के जिले इसके अन्तर्गत है। पश्चिम की ओर सदानीरा—शालग्रामी तथा पूरब की ओर कौशिकी के बीच की तराई भी इसमें सम्मिलित है। पाँच हजार वर्षो को पार कर चला आता हुआ इसका इतिहास ससार के प्राचीनतम इतिहास के रूप में प्रतिष्ठित है। इसकी जमीन का भूतात्त्विक रचना-काल पाँच लाख वर्ष प्राचीन है, और भूगर्भवेत्ताओ के अनुसार इसका भूपृष्ठ पृथिवी के भूपृष्ठ की अपेक्षा आधुनिक है। आज से

लगभग दस लाख वर्ष पूर्व इस प्रदेश की स्थिति जिसको हम मिथिला कहते हैं वैसी नही थी, जैसी कि आज है। यह समुद्र का ही एक खड था जो विन्ध्य-गिरि-मेखला से हिमालय को विभक्त करता था, और पश्चिम-पयोधि—अरब सागर को बगाल की खाडी-पूर्व सागर से मिलाता था। उस समय शैलाधिपति हिमालय समुद्र के गर्भ में ही समाधि-मग्न था।

मिथिला के पुर और जनपद दोनो ही नदियो के आश्रित है, और कई दृष्टियो से धन-धान्य की धात्री इन नदियो का अस्तित्त्व अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। यदि दक्षिण भारत के निवासियो की मनोभूमि को रमणीय पर्वतो तथा गम्भीर द्रोणियो का सान्निध्य—सख्यभाव प्राप्त है तो मिथिला-वासियो की मानस-भूमि को स्वच्छसलिला नदियो की प्राणदायिनी धारा अपने जीवन-रस से सिञ्चित करती है, जिसका प्रमाण 'तीरभुक्ति' (नदी-किनारे की भूमि अथवा नदी-तटवर्त्ती प्रदेश) शब्द में उपलब्ध होता है।

यहाँ की भाषा मैथिली है, जिसकी लिपि देवनागरी लिपि से थोडी भिन्न है, और उसमें बँगला-लिपि का आभ स दृष्टिगोचर होता है। विहार की प्रादेशिक भाषाएँ तीन है—(क) मैथिली, (ख) मगही, और (ग) भोजपुरी। मैथिली चम्पारन, दरभगा, पूर्वी मुंगेर, भागलपुर, पूर्णिया के पश्चिमी और मुजफ़्फरपुर के पूर्वी भागो में बोली जाती है। लेकिन दरभगा जिले के गाँवो में ही यह अपने शुद्ध रूप में प्रचलित है। मैथिली और मगही एक दूसरे के अधिक निकट है, और इन दोनो प्रादेशिक भाषाओ के बोलने-वालों के रीति-रिवाज और रहन-सहन में भी कोई विशेष अन्तर नही। उच्चारण के लिहाज से भी मैथिली और मगही भोजपुरी की अपेक्षा एक-दूसरे से अधिक मिलती-जुलती है। मैथिली में स्वर वर्ण 'अ' का उच्चारण स्पष्ट और मधुर होता है। भोजपुरी मे स्वर वर्ण का उच्चारण (मध्यभारत में प्रचलित भाषाओ की तरह) थोडा रूखा है। इन दोनो भाषाओ—मैथिली और भोजपुरी का यह अन्तर इतना स्पष्ट है कि इनके जुदे-जुदे निवासो को पहचानने में देर नहीं होती। सज्ञाओ के शाब्दिक रूपकरण की दृष्टि मे भोजपुरी में सम्बन्ध-कारक का रूप सरल नहीं है। मैथिली

और मगही मे मध्यम पुरुष का रूप, जो अक्सर बोल-चाल में इस्तेमाल होता है, 'अपने' है, और भोजपुरी में 'रऊरे'। मैथिली के 'छई' और 'अछि' क्रियाओं के बदले मगही में 'है', और भोजपुरी में 'बाटे', 'बारी', और 'हवे' प्रयुक्त होते है। अन्य भारती भाषाओ की तरह क्रिया-विशेषण के सयोग से वर्तमान काल बनाने में ये तीनो प्रादेशिक भाषाए एक-सी है। मगही का वर्तमान काल 'देखा है' भी एक सिफत रखता है। भोजपुरी मे 'देखा है' के बदले 'देखे ला' इस्तेमाल होता है। मैथिली और मगही में क्रिया के भिन्न-भिन्न रूपान्तर—धातुरूप सरल नही है। उनके पढने और समझने में पेचीदगी पैदा होती है। लेकिन बगाली ओर हिंदी की तरह भोजपुरी के धातुरूप साफ-सुथरे और बाअसर है। इनके पढने और समझने में दिमाग मे पसीना नही आता, और न इनके शब्द मन में अलग-अलग तस्वीरें पैदा करते है। इन तीनों प्रादेशिक भाषाओ मे और भी कितने अन्तर है। लेकिन ऊपर जो भेद दिखलाये गये है वे ज्यादा उपयोगी और उल्लेखनीय है।

मैथिली ग्राम-साहित्य-सागर के विस्तीर्ण अन्तस्तल में न मालूम कितने अनमोल सुन्दर हीरे यत्र-तत्र बिखरे पडे है, जो एकता के सूत्र में पिरोये जाने पर हिन्दी-साहित्य के भडार को पूर्ण बना सकते है। मैथिल ग्रामीण कवियो ने साहित्य के विभिन्न पहलुओ, जैसे—नाटिकाएँ, विनोद-पद, कहानियाँ, पहेलियाँ, कहावतें आदि सभी को समान-रूप से स्पर्श किया है। वे अपने परिमार्जित और सयत गीतो के रचयिता ही नही, बल्कि अनेक नूतन छन्दो और तालो के उत्पादक भी है। हाँ, कही-कही एक ही छन्द बहुरूपये-सा रूप बदल कर जुदा-जुदा लिबासो मे प्रकट हुआ है। उनमे कुछ ऐसे है, जो तेज रेती के समान कठोरतम इस्पात को भी काट सकते है; कुछ ऐसे है, जो पतझड-से जीर्ण-शीर्ण आत्मा का वासन्तिक निर्माण करते है, और कुछ ऐसे है जो फूल की कोमल कली की तरह वनदेवी की गोद में मचल रहे है।

मैथिली लोक-साहित्य के आकाश में गीतो के विहगम अहर्निश उडते-

फिरते हैं। जनवरी से दिसम्बर तक वारहो महीने गीतो की वहार रहती है। स्फूर्तिप्रद भोजन, और आहार-विहार जिस तरह ज वन का आवश्यक अग है, उसी तरह मीठे नैसर्गिक गीतो का प्रेम-गान भी यहाँ के लोगो के जीवन का दैनिक अग वन गया है। पुसवन, सीमन्तोन्नयन, शिशु-जन्म, उपनयन, विवाह आदि षोडश सस्कारो की वात का तो कहना ही क्या ? प्रात, दुपहरी, सध्या, मध्यनिशा आदि भिन्न भिन्न समय के लिए भी यहाँ भिन्न-भिन्न शैली के गीत ईजाद किये गये है। नववयस्क और युवक-युवतियो के अतिरिक्त यहाँ छोटे-छोटे वच्चे भी स्वर्गीय सगीत को झकार से स्थानीय वातावरण को प्रतिध्वनित करते रहते हैं। वे अपनी काव्य-सहचरी को मिट्टी के पकवान वना कर तृप्त करते, और "जो माला" तथा करौंदे की लटकन से शृगार कर धूल के रगमहल मे उसके साथ क्रीडा करते है।

मिथिला के इन ग्रामीण गीतो को पुनरुज्जीवन प्रदान करने का अधिक श्रेय लग्न-उत्सवो और हिन्दू पर्व-त्योहारो को है। सगीतमय हिन्दू-त्योहारो मे रक्षा-वन्धन, तीज, यम-द्वितीया, दीपमालिका और छठ उल्लेखनीय है। कजरो के दल जो अपने काफिलो के साथ एक स्थान से दूसरे स्थान पर पडाव डालते फिरते है, पुरातन लोक-गीतो के चलते-फिरते पुस्तकालय है। लग्न-उत्सवो पर खँजरी वजा-वजा कर मगलात्मक वधाई गीत गाना इनकी जीविका का साधन है।

लोक-गीतो को प्रोत्साहन देने मे मुसलमानो के करुण पुर-दर्द मर्सियो का भी, जो मुहर्रम के दिनो मे हसन-हुसैन की याद मे गाये जाते है, वडा जवरदस्त हाथ है। ताजिये की निश्चित तिथि से कई-कई दिन पूर्व ही वाँस की खपाचो के वने वाजे वजा-वजा कर हिन्दू-मुसलमान सम्मिलित स्वरो मे गान करते है, और उक्त तिथि के पहुँचने पर रग-विरगे कागज के वने ताजियो को सिर पर लेकर स्त्री-पुरुषो की टोलियाँ जमीदारो के दरवाजो की फेरी लगाती है। कर्वला की सवेदनशील अभिव्यजना के साथ-साथ इनमें वीर-रस की लडाइयो का भी पुरजोश जिक्र आया है, जिनका एक-एक लफ्ज इस्लाम के वुलन्द सितारे की दुन्दुभि है।

तपे अगारो-से जलते ऊवड-खावड खेतो मे दिन-भर काम कर हलवाहे और मजदूर सध्यां को थके-मांदे चूर लौटते है। और भोजनोपरान्त रात्रि में ढोल, डफ और झाल के स्वरो मे स्वर मिला कर ताल-लय-सयुक्त वाणी का अजस्र वर्पण करते है। उस समय वे पल-भर के लिए दीन-दुनिया भूल कर अलमस्त हो किसी अचिन्त्य प्रदेश में पहुँच जाते है, और उनकी विद्युत् भरी स्वरलहरी गाँवो के प्रशान्त सन्नाटे को चीर कर गगन मे झूम-झूम कर विलीन होने लगती है।

गो-दोहन के समय, जव प्रात काल अपनी श्यामल सुफेदी लिये पदार्पण करता है, चरवाहे दल-के-दल अपने जानवरो के साथ—गाँवो के वाहर—घास के हरे-भरे वागो में निकल पडते है। वहाँ पशुओ को चरागाहो पर छोड कर स्वय किसी स्थानीय आम्र-निकुज की शीतल छाया में वैठ कर पत्तो की सनसनाहट और भौरो की भनभनाहट के साथ स्वर मिलाते हुये अपने उल्लासमय जीवन का गीत गाते है। प्रकृति-अकन ही इन गीतो का ताना-वाना है। कही-कही कवि ने वेलो और लताओ से आवेष्टित झोप-डियो का वर्णन वडी सफलता से किया है।

कदम-कदम पर मिलते है यहाँ जीवन के सुनहले गीत। एक-से-एक वढ कर मार्मिक गीत। किसी की आँखों मे प्रसन्नता का वसन्त। किसी की आँखो में मुसीवतों की वदली। किसी के मुख पर मध्याकालीन एकान्त। किसी के मुख पर मौत का-सा अन्धकार। किसी के अश्रु-कण प्रकाश में चमक रहे, तो किसी के आँसू अन्धेरे में वन्द।

कविवर दिनकर से सुना हुआ एक लोक-गीत याद आता है।

> झोकटी धोती पटुआ साग
> तिरहुत गीत वडे अनुराग
> भाव भरल तन तरुणी रूप
> एतवै तिरहुत होइछ अनूप

कोकटी धोती, पटुआ का साग, प्रेम से शरावोर तिरहुति गीत, रूपवती तरुणी का भाव-भरा सौन्दर्य्य मिथिला की ये इतनी चीजे उल्लेखनीय है।

लोक-गीत की दुनिया में करुणा की वेगवती धारा एकान्त भाव से प्रवाहित है। कृषको के सादे जीवन के मार्मिक दृश्य, सामाजिक स्थिति के गोरखधन्धे, ग्राम-प्रदेश के चित्र, मजहब की नाजवरदारियाँ, समाज का खोखलापन, पारिवारिक उत्सव और अनुष्ठान, भाई-वहन का प्रेम, देवरानी का निष्कलक जीवन, ससुराल में नव-वधू की व्यथा और सास ननद के अत्याचार चित्र-पट की तरह हू-वहू हमारी आँखो से गुजरते हैं।

प्रेम-रस मे शरावोर किसी विरहिणी का एक विरह-गीत सुनिये

आम मजरि महु तूअल
तँ ओ ने पहुँ मोरा घूरल
दीप जरिय वाती जरल
तँ ओ ने पहुँ मोरा आयल

"आम में वौर लग गये। महुआ चूने लगा। लेकिन हे सखी, मेरे प्रियतम नही आये।

दीये की लौ मन्द पड गई। वत्ती जल गई। लेकिन मेरे प्रियतम नही आये।"

जीवन की निविड रात्रि में करवटे वदल-वदल कर विरहिणी ने विहान किया होगा। 'दीप जरिय वाती जरल, तँ ओ ने पहुँ मोर आयल' से यह वात स्पष्ट हो जाती है। सर्प की जादू-भरी नजर मे व्यर्थ निकल भागने का प्रयत्न करनेवाली चिडिया की तरह उसकी आशा निराशा में परिणत हो गई होगी।

विरह का यह दुखान्त गीत देश-देश में समान भाव से व्यापक है।

विरह की सरिता युगयुगान्तर से अनुप्राणित होकर हृदय से हृदय मे, और प्राण मे प्राण मे अपनी विकलता वाँटती हुई चली आ रही है। ग्रामीण स्त्रियो के सरल कठ से निकलनेवाली अमर पक्तियो मे जाने कितनी ही वियोगिनियो के कोमल हृदय तडप रहे है। कितने घायल हृदयो के अरमान

आँसू की वडी-बडी बूँदो में ढुलक रहे है। सुनिये वह अमराई में वैठी हुई तरुणी क्या गा रही है

"सुनती हूँ, मेरे प्रियतम कृष्ण योगी हो गये है।
इसलिए मैं भी जोगन हो जाऊँगी।
जिस प्रकार वन म पीपल के पत्ते काँपते है,
जल के वीच सेवार और कमल के पत्ते काँपते है,—
उसी प्रकार प्रियतम के विना मै काँप रही हूँ।
जल का दुश्मन सेवार होता है,
और, मछली का दुश्मन मल्लाह,
इसी प्रकार अगर स्त्री के प्रियतम प्रवासी हो
तो सेज दुश्मन हो जाती है।"[1]

'पीपल के पत्ते', 'सेवार', और 'कमल के पत्ते' की मिसाल देकर इस गीत की नायिका ने अपनी विरह-दशा का सजीव चित्र खीचा है। भौजूं उपमाओ-द्वारा अमूर्त्त भावो को मूर्त्त रूप देने में मैथिल स्त्रियो को कमाल हासिल है।

स्त्रियो की विरह-दशा का जीवित चित्र देखना हो तो लोक-मानस की सैर कीजिये

कोई प्रवासी प्रियतम के इन्तजार मे शख की चूडी फोड कर और कचुकी फाड कर जोगन वन रही है·

फोरवइ में शखा चुरो फारवइ में चोलिया
से घरवइ जोगिनिया के वेष

कोई परदेश से लौट आने पर अपने प्रियतम को रेशम की डोर में वाँध कर कलेजे में छुपा रखने का इरादा कर रही है।

एहो हम जनितो पिया जयथिन परदेशवा
वाँधितो में रेशमक डोर

---

१ अध्याय 'सोहर',

रेशम की डोर टूट जायगी, इसलिए कोई अपने प्रियतम को चुंदरी के आँचल मे ही बाँध रही है।

रेशम बँधनमा टुटिए-फाटि जयतह
बाँधितो में अँचरा लगाय

किसी क आँखो से आसमान से झहरती हुई बूंदें देखकर और मेढक की 'टर्र-टो, टर्र-टो' आवाज सुन कर अविरल अश्रुपात हो रहे है

साओन सननन पवन सनकय
दादुर टर-टर शोर यो,
बूँद झहरय भ्रमर भनकय
नयन टपकय नीर यो।

कोई अपने आँचल को फाड-फाड कर कागज बनाती है, और अपने प्रियतम को प्रणय का सन्देश भेजती है

अँचरा के फारि-फारि कगदा बनइतो,
लिखितो में पिया के सन्देश।

कोई तो विरह मे इतनी खिन्न है कि उँगली में आनेवाली अँगूठी कलाई का ककण बन गई है

जे हो मुदरि छल आँगुरि कसि-कसि,
से हो भेल हाथक ककन।

व्याध के बाण से बिद्ध क्रौञ्च पक्षी की तरह तडपनेवाली वियोगिन की व्यथा की कोई सीमा नही।

जे हो मुदरि छल आँगुरि कसि-कसि,
से हो भेल हाथक ककन।

इन शब्दो में गम की तस्वीर दिल के कागज पर खीची गई है। इतिहासो पर स्याहियाँ पुत जायेंगी, युग-युग के सस्कार घुल जायगे और तकदीर

की लिपि भी मिट जायगी, लेकिन लोक-हृदय की यह सवेदनाशील वाणी युग-युग तक अमर रहेगी।

विरह—धरती की गोद का लाडला शिशु—लोक-साहित्य मे जाने कब से जन्मा है?

चोट खाये हुए लोक-मानस में विरह मजबूती मे बैठ गया है—(प्रेम से पिघले हुए दिल में विरह जल्दी घर कर लेता है। जो बत्ती चल चुकी है, जिसमे अभी तेल का धुआँ उठ रहा है, लौ को जल्दी पकडती है—सरमद शहीद)—चकमक चिनगारी के समान लोक-हृदय में जलनेवाली विरह की बत्ती बुझती नही—दिन में, रात में, प्रतिपल जलती रहती है, योग-युक्त दीप-शिखा की भाँति स्वयम्भू-स्वप्रकाश होकर।

विरह का एक मैथिली गीत है 'विरह में भ्रान्ति।' प्रियतम प्रवासी है। नायिका अपने ही शरीर को देखकर भयभीत हो रही है। दर्पण में अपना ही चेहरा देखकर नायिका उसे चन्द्र समझती, और भय से कम्पित हो रही है। वक्षस्थल पर भ्रम से अपने ही हाथ रखकर विरहिणी उसे कमल समझती और ललचा कर बार-बार स्पर्श करती है। अपने ही केश-पाश को देख कर काले बादल के भ्रम से उसका हृदय बैठ रहा है।[१]

वियोगिन की मानसिक जिन्दगी का शीशा इन पक्तियो में अकित है। मिट्टी को फोडकर निकलनेवाले अकुर की तरह विरह के नुकीले और जहरीले काँटे ने वियोगिन के हृदय को बेध डाला है। विरह मे ऐसी भ्राति, ऐसी तन्मयता कि देहाध्यास तक न हो। पतग को अपनी दीप-शिखा से मतलब। महफिल के रग से—तसवीरो और पर्दो मे उसे क्या काम (जैसा कि महाकवि अकबर का कथन है—परवाने को मतलब शमा से है, क्या काम है रगे-महफिल से)।

पावसकालीन मेघ को देख कर सस्कृत के किसी कवि ने एक भावपूर्ण कविता लिखी है—'रे बादल, तुम्हारे जल बरसाने से क्या लाभ? क्या

पृथिवी वियोगिन के आँसू से पहले ही तर नही हुई है ? तुम्हारा कोलाहल भी व्यर्थ है। क्योंकि प्रिया के जार-जार रोने से सारी सृष्टि रो रही है। रही जलकण से पूर्ण वायु की वात, उसके लिए भी उस चन्द्रमुखी के मुख से जो आहें निकल रही है, वही पर्याप्त है। हाँ, तुमने एक वात अवश्य नई कर डाली है, वह है मेरी व्यथा। यह पहले कभी नही हुई थी।'

[२]

सावन के सजल कजरारे मेघ उमड पडे। तन्द्रा मे डूबी हुई पृथिवी सपनो में लिपट गई। हृदय की धडकनो मे सोये हुए अरमान मचल पडे। और हवा के झोको से आँखमिचौनी खेलती हुई बूदें गिरने लगी

टप! टप!! टप! टप!!

मकई के मँझाए हुए मोचो मे उल्लास फूट पडा। गँवई तालाव के मटमैले पानी मे मेढक टरटराने लगे। चमारो के सड-मुसड वच्चे वसी के अकुश में चारे फँसा-फँसा कर मछली पकडने के मोर्चो पर जा डटे। आम की डाल पर वैठी हुई कोयल पचम मे गाने लगी।

जमीन के चप्पे-चप्पे ओर आसमान के गोशे-गोशे में मीड वज उठी।

लेकिन, विजली की तडक से भयभीत उस मैथिली तन्वगी का दिल सुवह के दीये की तरह क्यूं मँझा रहा है ?

उसकी वेदना फूस की चरमराती हुई झोपडी की तरह क्यूं सिसक रही है ?

उसके खीरे-से दिल को किस वेरहम ने विरह के चोखे चाकू से चाक कर दिया है ?

'पाथोवाह किमम्बुभि प्रियतमा नेत्राम्बुसिक्ता मही,
कि गर्जं सुतनोरमन्दरुदितैरुज्जागरा भूरपि।
वातै. शीकरिभि किमिन्दुवदनाश्वासै. सवाष्पैरलं,
सर्वं ते पुनरुक्तमेतदपुन पूर्वा पुनर्मद्व्यथा।

"री कोयल, सुनो—यहाँ आओ।
(प्रेम से) मधु में पगा हुआ भोजन खाओ।
और, आज रात को मेरा एक काम कर आओ।
मैं तुम्हारी कितनी आरजू-मिन्नत करूँ?
मैं सोने से तुम्हारे पंख मढाऊँगी।
जिससे सुन्दरियाँ—
(तुम्हारे सौन्दर्य्य पर लट्टू होकर)
तुमसे प्रेम करेंगी।
मोतियो से अधर मढा कर
तुम्हारा वेश सुन्दर वनाऊँगी—री कोयल!
यह लो मेरे प्रवासी साजन का पत्र,
जो मैंने लिखा है।
आधी रात वीता चाहती है,—
हृदय का कागज फाड कर,
और, आँखो के काजल की स्याही में
नख की कलम डुबो कर मैंने खत लिखा है।
हवा के पंख पर चढ कर—
धीरे-धीरे उड!—री कोयल!
मेघ वरसा ही चाहता है,
तू जल्द जा,—री कोयल।
मेरे प्रियतम से मेरा सन्देशा समझा कर कह,
और कान देकर उनकी बातें सुन—
पूछना—तुमने क्यूँ अपनी प्रियतमा
की सुधि भुला दी?
३६५ लम्बी-लम्बी रातें तुम्हारी इन्तजारी में
काट कर, तुम्हारी प्रियतमा विरह का जहर
खाकर प्राण त्याग देगी।

उसकी आँखों से अविरल अश्रुपात हो रहा है,—(अजी ओ बेरहम !)
चल, तुम्हारी प्रिया तडप रही है
उसको गोद मे बिठाकर सान्त्वना दे,
यदि आज की रात तुमने प्रस्थान नही किया
तो तुम्हारी प्रिया नही रहेगी।''[1]

जीवन की बेसुरी बाँसुरी की तरह उसकी जादूभरी स्वर-लहरी गूँज रही है।

हृदय का कागज फाड कर और आँखो के काजल की स्याही में नख की कलम डुबोकर वियोगिन ने खत लिखा है। (कृत्रिम कागज पर स्वान इक से आपने आधुनिकाओ को पत्र लिखते देखा होगा)। लेकिन लोक-दुनिया में हृदय के कागज और काजल की स्याही का ही स्वागत होता है। चोट पहुँचानेवाली पीडाएँ झाक रही है लोक-हृदय के इन झरोखो से। शान-शौकत ओर तडक-भडकवाली शैली से रहित वियोगिन की टीस का यह आलेखन तो देखिये। काजल ही स्याही का स्थान ले चुका है। लोक-दुनिया के ये काजल, जो नुकीली आँखो का स्वाद चखा करते है, अर्से से खखड और उदास दिल के कागज पर प्रेम की तहरीर लिख रहे है। गजमून उठा कर देखिये। बे-अख्त्यार कर देने के मवस्सर तरीके उनमें मिलते है। ठेठ जीवन के जर्रे-जर्रे में तबादले हो गये, दिन-पर-दिन निकलते गये, लेकिन (तुलसी के– शून्य भीत पर चित्र रग नही, तनु विनु लिखा चितेरे की तरह) गँवारू औरतो की कटीली आँखो के काजल का रग मिटा नही, आज भी लोक-मानस के पर्दे पर उनकी रग-विरगी झाँकियाँ हो रही है।

विरह के अधिकाश सदेशात्मक गीतो में प्रियतम का दीदयेयार हो, इस पर जोर नही दिया गया। विरहिणियों ने सदेशवाहक पक्षियो के द्वारा अपने प्रवासी साजन को जो सन्देश भेजा है, उनमें गहनो की ही

---

१ अध्याय 'तिरहुति',

फ़रमाइश की है। बन्धुवर श्री देवेन्द्र सत्यार्थी ने एक ऐसे ही गुजराती गीत की तारीफ़ की है। देखिये.

"—ओ कुञ्जलड़ी (कुञ्जलडी सारस या क्रौञ्च जाति का पक्षी है।)
यह मेरा सन्देश जाकर
मेरे बालम से कहना।
आदमी तो मुँह से बोलता
मेरे पखो पर तुम सन्देश लिख दो ना!
हम उस पार के पछी है।
उडते-उडते इस पार आ पहुँचे है हम!
कुञ्जलडी को प्रिय लगता है मीठा सागर
मोर को प्रिय है चौमासा,
राम और लक्ष्मण के प्रिय है सीता,
गोपियो के प्रिय है कृष्ण,
हम प्रेम-किनारे के पछी है,
प्रीतम सागर बिना हम सूने है
'हाथ के नाप का चूडा लाना'—नारी सन्देश लिखती है.
'गुजरी' हाट में जाकर इस पर रत्न जुड़वाना!
गले के नाप का 'झरमर' गहना लाना
तुलसी की माला में मोती बँधा कर लाना!
पैर के नाप का 'कडला' गहना लाना।
काम्बियू (पैर का दूसरा गहना) मे घुंघरू बँधवाना।'[1]

लेकिन यहाँ इस मैथिली गीत मे विरहिणी अपने प्रवासी साजन से न तो हाथ के नाप का चूडा चाहती है, और न गले के नाप का 'झरमर' गहना। उसका सन्तोपी हृदय तो सिर्फ प्रियतम से मिलने की ख्वाहिश रखता है, और निष्काम प्रेम की ही याचना करता है। मीर साहब के एक शेर में भी

---

१ 'गाये जा, ओ गुजरात'—'हस' (मार्च, १९४०)

यही भाव जाग उठा है—'हर सुव्ह उठ के तुझसे, माँगूँ हूँ मै तुझी को, तेरे सिवाय मेरा कुछ मुद्दआ नही है।'

इस गीत की नायिका ने प्रेम का सदेश भी अजीब वाँकपन के साथ लिखा है, जिसमें एक विचित्र आनन्द और सन्तोप है

'अजी ओ बेरहम! चल तुम्हारी प्रियतमा तडप रही है। यदि आज की रात तुमने प्रस्थान नही किया, तो तुम्हारी प्रिया नही रहेगी।'

ऐसा लगता है कि अनजाने में ही घुणाक्षर न्याय की तरह यह सवाक् चित्र अकित हो सका है। अमीर खुसरो ने भी एक शेर मे यही झाकी इगित की है 'जान होटो पर आई हुई है, तू आ कि मै जिन्दा वचा रहूँ। उसके वाद जव कि मै न रहूँगा, तो तेरा आना फिर किस काम का होगा ?" 'हवा के पख' और 'हृदय के कागज' मे उत्कृष्ट मनोभावो की विजली है। और 'हृदयक कागद फाडिय देल' मे कागज के साथ 'फाडना' क्रिया अँगूठी में नगीने की तरह जड गई है।

सदेशात्मक लोक-गीतो में सदेशवाहक पक्षियो का भी जिक्र आया है। पौराणिक आख्यान है कि दमयन्ती ने हस को दूत वनाकर प्रियतम नल के पास अपना प्रेम-सदेश भेजा था। हिन्दी के आदि काव्य-ग्रन्थ '. स.' के अनुसार सयोगिता ने सुग्गा के द्वारा पृथ्वीराज से प्रेम-सलाप किया। आस्ट्रिया की खानावदोश जातियो में अबाबील को इस कार्य्य के लिए इस्तेमाल किया गया है। मिथिला में काक, कौवा, सुग्गा, कोयल आदि सदेशवाहक चिडियाँ सन्देश ले जाने के काम में लाई जाती रही है। काक और कौवा वडे क्रूर पक्षी समझे जाते है, और लोग उनसे नफरत करते है। उनकी इस क्रूरता से घवडा कर ही शायद चाणक्य ने उन्हें 'पक्षियो में चाडाल' कहा है।

एक गुजराती लोक-गीत में विरहिणी काग से अनुरोध कर रही है—

कागा चुन-चुन खाइयो, वडी हडी का मांस,
अेक न खायो मोरी अँखियाँ मेरे पिया मिलन की आस।[1]

---

१ श्री झवेरचन्द मेघाणी 'लोक-साहित्य'

उत्तरी बिहार के एक लोक-गीत मे भी विरहिणी के अन्तस्तल से यही आवाज आ रही है।

काग सब तन खाइयो, चुन-चुन खइयो मास,
दो नैना मत खाइयो, पिया मिलन की आस।
कागा नैन निकास दूं, पिया पास ले जाय,
पहिले दरस दिखाइ कै, पीछे लीजो खाय।

लेकिन एक मैथिली लोक-गीत में विरहिणी ने गाया है

"रे काग, तू नित्य यही बोल कि मेरे प्रियतम आयेगे। यदि आज : प्राणनाथ मेरे उर-आँगन मे आये तो कनक-कटोरे में खीर और मीठे ;वान भर कर मै तुझे खाने को दूंगी।

सोने से तेरी चोच सँवारूँगी, और तेरे चरण मढाऊँगी।

मेरी बाई आँख फडक रही है, और दाई आँख रोती है। उन्ही आँखो से तुझे नित्य निहारूँगी, और पहले से भी दूने प्रेम से तेरा प्रतिपाल करूँगी।

रे काग, तू भगवान श्रीकृष्ण की तरह मन को हरनेवाला है।

तेरी बोली अत्यन्त मीठी है।

कवि 'रमापति' (विरहिणी के शब्दो में) कह रहे है कि आज मेरी सारी अभिलाषाएँ पूरी हो गई।"[1]

अमानुषिक क्रूरता के बावजूद काक और कौआ जीवन के आगामी वृत्तान्त बतलाने में निपुण माने गये है। ऐसा प्रतीत होता है कि भविष्यवाणी कहने के वाञ्छनीय गुण से प्रेरित होकर ही कुल-ललनाओ ने अपने कोमल हृदय म इन्हें स्थान दिया है। जायसी ने भी अपने प्रसिद्ध ग्रन्थ 'पद्मावत' में नागमती के विलाप में काग को स्मरण किया है

होइ खर बान बिरह तनु लागा,
जो पिऊ आवै उडै तो कागा।

---

१ अध्याय 'तिरहुति'

सन्देशवाहक पक्षियो मे कबूतर सब से तेज चलनेवाला हरकारा है। Book of Knowledge के अनुसार वह अपने चरण मे सदेशात्मक पत्र लेकर सैकडो मील दूर आसानी से आ-जा सकता है

"The homing pigeon flies hundreds of miles to its home, and carries messages tied to its legs"

मिथिला के एक दूसरे कथात्मक गीत—'ढोला-मारू' में मारू ने सुग्गा को सन्देशवाहक बना कर ढोला के पास अपना प्रणय-सन्देश भेजा है। मारवाड, गुजरात, राजस्थान और पजाब मे विरहिणियो ने 'कुँजलडी' से सन्देशवाहक का काम लिया है। गुजराती लोक-साहित्य में पपीहे की दर्द-भरी रटन के प्रति भी खासा आकर्षण है। यह एक अजीब चिडिया है। इसकी आवाज़ कर्णप्रिय मालूम होती है। बरसात में अमराई, हरियाले खेत या घनी पत्तियो के पर्दे में पपीहा बैठा नज़र आता है। और इस जोश-खरोश से चहकारता है कि सुन कर दग रह जाना पडता है। निम्नलिखित गुजराती लोक-गीत मे पपीहे की लगातार 'पियू-पियू' की रटन सुन कर किसी विरहिणी के दिल में ईर्ष्या का भाव जाग उठा है

चाँच कटाऊँ पपइया रे, ऊपर कालो लूण।
पिव मेरा मै पिव की रे, तू पिव कहै स कूण।

पियु तो मारा छे, अने हुँ पियू नी छु। तु पियु शब्द बोलनारो कोण? तारी चोच कापी ने ऊपर मीठु भभरावु।'

"पपइया रे पिव की वाणी न बोल
सुणि पावेली विरहिणी रे
थारी रालेली पाँख मरोड

हे बपैया, तु 'पियु' ये शब्दो न बोल। कोई विरहिणी साँभणशे तो तारी पाँख तोडी नाखशे।

'विरहाग्निनी वेदना उच्चार तो बपैयो' शीर्षक लेख से, 'फुलछाब', १३ सितम्बर, १९४०

छोटा नागपुर के लोक-जीवन मे कोयल और कौवे विरहिणियो के प्रणय-सन्देश उनके प्रियतम के हृदय तक ले जाते है.

'कुहु बोले हो कुहु बोले
कुहु बोले हो बिज्जुबन में
पिया के समाध मोरो ले-ले जाये रे
कओने भाषी बोले ।

"कुहु-कुहु बोल रही है—कुहु-कुहु ।।
कोयल 'कुहु-कुहु' कूक रही है विजन वन मे ।।
मेरे प्रियतम का सन्देश लेती जाओ, री कोयल !
कैसी अजनबी है तुम्हारी भाषा ?"

[३]

मिथिला के विवाहकालीन लोक-गीत मुस्कान की गुलाबी आभा से प्रफुल्लित हैं । उनके प्रेम की शीतलता से लोक-हृदय की जलन शान्ति हो गई है, जैसे जाग्रत और स्वप्न अवस्थाओ की वृत्तियाँ सुषुप्ति अवस्था मे लीन हो जायें। मुलाहिजा कीजिये

"रानी कौशल्या और सुमित्रा ने कोहबर को
विविध प्रकार से सजाया,
और कैकेयी ने बडे यत्न से आम के फले हुए गुच्छे के चित्र लिखे।
ऐसे ही चित्र-लिखित कोहबर मे अमुक दूल्हा सोया,
और उसके साथ उसकी नवोढा दुलहिन भी सोयी।
दूल्हा ने अपनी नवोढा दुलहिन का घूँघट खोला, और पूछा—
तुम्हारे शरीर मे कौन-कौन से आभरण है ?
दुलहिन ने कहा—हे सजन, तुम मेरी माँग का शृंगार हो,
मेरा देवर शख का चुडला है,
मेरी सास मेरे गले का चन्द्रहार है, और देवरानी मेरा बाजूबन्द ।
मेरा भाई मेरी आँखो का दिव्य नूर है,

मेरी ननद नौरगी चोली है,
और मेरा भैसुर (जेठ) मेरे ललाट का टिकुला है।
हे सजन, यही मेरे शरीर के आभरण है।"[1]

अलकार की बेहूदा सजावट पर पारिवारिक प्रेम ने नवयुग का गरिमा-मय रग चढा दिया है और वह चित्र-लिखित कोहवर, जिसमे दाम्पत्य जीवन अपना अमगल द्वैत, दैन्य भूल कर एक रूप हो जाता है, वैवाहिक प्रथा के रूढि-ग्रस्त पथ पर विज्ञान की शत-शत किरणे विखेर रहा है। भैसुर (जेठ), सास, देवरानी, ननद, देवर तथा प्रियतम के प्रति नवोढा दुलहिन के नैसर्गिक प्रेम ने उसकी माँग के टिकुले, गले के चन्द्रहार, बाजू के जोशन, शरीर की नौरगी चोली, कलाई के चुडले, ललाट की इगुर-बिन्दी आदि पार्थिव रूप-आभरणो को फीका कर दिखाया है। और दूल्हा अपनी गृहिणी के घटाटोप घूँघट का अन्ध अवगुठन उठा कर उसके प्रकृत स्वरूप को मान दे गया है। 'आभूषण मानवी अगो का नैतिक भूषण नही',—यह मान्यता जैसे लोक-हृदय मे युग-युग से प्रतिष्ठित होती आई है अथवा उसकी अविकच इच्छायें आकाश-बेलि की तरह विकास-विटप पर चढने के लिए समय समय पर बेहद हैरान हो उठी है।

श्री तृप्तनारायण ठाकुर-द्वारा सगृहीत और 'हस' मे प्रकाशित एक मारवाडी लोक-गीत के अजनबी कण्ठ से भी यही आवाज व्यापक हो उठी है। वहू सोलह शृगार करके झमझम करती हुई महल से उतरी। सास कहती है कि अपने गहने पहन कर मुझे दिखाओ। लेकिन बहू ने तो सारे परिवार को ही अपना गहना मान लिया है। गीत मे, लोक-जीवन की यह अमर वाणी नारी के प्राकृतिक मनस्तत्त्व का इजहार दे रही है

"मधुवन मे आम बौरा है, जो कि सारे मारवाड मे फैल गया है।
हे सहेलियो, आम में बौर आ गया है।
बहू सोलह शृगार करके झमझम करती हुई महल से उतरी—

---

१ 'लग्नगीत',

सास ने कहा—'हे वहू, अपने गहने पहन कर मुझे दिखाओ।'
वहू ने कहा—'हे सास जी, मेरे गहने की वात मत पूछो।
मेरा गहना तो सारा परिवार है।
मेरे ससुर जी घर के राजा है, और सास जी घर के भाण्डार॥
मेरे जेठ जी वाजूवन्द है, और जेठानी जी वाजूवन्द की लूम।
मेरा देवर मेरी हाथी-दाँत की चूड़ी है, और देवरानी उसकी टीप।
मेरा पुत्र घर का उजियाला है, और पुत्र-वधू दीप की ज्योति।
मेरी वेटी उँगली की अँगूठी है, और मेरा दामाद मौलसिरी का फूल
मेरी ननद कुसुम्भी चोली है, और ननदोई गजमुक्ताओ का हार।
मेरे प्रियतम सिर के सेहरा है, और मै हूँ उनकी सेज का शृंगार।'
सास ने कहा—'वहू, मै तुम्हारी वोली पर कुर्वान हूँ।
तुमने मेरे सारे परिवार को गौरवान्वित किया है।'
वहू ने कहा—'सास जी, मै तुम्हारी कोख पर कुर्वान जाऊँ।
तुमने तो अर्जुन-भीम-जैसे पुत्र पैदा किये है,
और हे ननद! मै तुम्हारी गोद पर कुर्वान जाऊँ।
तुमने तो राम और लक्ष्मण-जैसे भाइयो को गोद में
लाड लडाया है।"

मारवाड और मिथिला के लोक-गीतों का यह एकीकरण भारत के पारस्परिक भाव-साहचर्य्य का वेमिसाल नमूना है। टमर के कीडे के समान नारी-ससार का शिलीभूत आनन्द अपने आलोक के जाल फैला कर इन गीता के अन्तर्न-नो मे उद्भासित हो रहा है। सुवर्ण के सूर्यो-दय से लोक मानस का उन्मीलित सरसिज खिल उठा है। उसकी चिर पुरातन ग्रन्थियाँ आँसुओ से साफ हो रही है, रक्त के फव्वारे से धुल गई है।

लोकगीतो की इस प्रगतिशीलता की उस ज्वालामुखी की फूत्कार से मिसाल दी जा सकती है, जिसकी धधक अपने रूप-विनिमय में आकस्मिक है, जिसकी विस्फोटक शक्तियाँ हजारो वर्षो से खामोश वेपरवाही के साथ

वैद्युतिक सगठन के साँचे मे ढला करती हे। युग के वाद युग आते हे, और उसका दानवाकार गोफा प्रत्यावर्त्तन की घनीभूत नीहारिका से ठसाठस भर जाता हे। अन्त में वह उस शीर्ष-विन्दु पर पहुँच जाता है, जहाँ उसका धमनी-स्फुरण, पृथिवी और वायु के निम्न चाप को अपनी गुरुता से डाँवाडोल कर देता है। उस समय वायव्य-पटल का वैरोमीटर अपनी चरम सीमा को स्पर्श करता है, और उसकी वन्दी शक्तियाँ गम्भीर कोलाहल करती हुई लोक-मण्डल को विस्फारित सा कर देती हे।

जिस तरह विवाह-कालीन लोक-गीतो मे प्रफुल्लता, विनोद और उल्लासमय वातावरण का आभास मिलता है, उसी तरह उनमे करुण-रस की मन्दाकिनी भी मन्द-मन्द प्रवाहित होती है। मिथिला के लग्न-गीतो में इस कोटि के गीत 'समदाउनि' के नाम से प्रसिद्ध हे। इन्हे विवाह-सस्कार के वाद लडकी की विदा के समय गाया जाता है। यह है उस गीत का भाव .

"कहाँ से यह डोली आई है, और कहाँ जायगी ?
उत्तर से यह डोली आई है, और दक्षिण जायगी।

जव डोली उत्तर की ओर चली, तव अपने बावा की याद ताज़ी हो आई। मेरे वावा मुझे पगडी के पेच (तह) की तरह रखते थे। लेकिन हाय ! अव यह डोली मुझे ससुर के राज्य में ले जायगी, जहाँ मै घर की पोतन (मोटे कपडो की तह करके बाँधी गई एक किस्म की झाडू, जिसको भिगो कर आँगन लीपा जाता है।) हो जाऊँगी।

जब डोली पूरब की ओर चली, तव अपने पिता की याद तडपाने लगी। मेरे पिता मुझे धोती के फेंट की तरह रखते थे। लेकिन हाय ! अब यह डोली मुझे ससुर के राज्य में ले जायगी, जहाँ मै घर की बोहारी हो जाऊँगी।

जव डोली पश्चिम की ओर चली, तब अपनी चाची की याद ताजी हो आई। मेरी चाची मुझे माँग के सिन्दूर की तरह रखती थी। लेकिन हाय ! अब यह डोली मुझे ससुर के देश मे ले जायगी, जहाँ मै घर की चलनी हो जाऊँगी।

जव डोली दक्षिण की ओर चली, तव मुझे अपनी माँ की याद ताजी हो

आई। मेरी माँ मुझे जंगल के सुग्गे की तरह रखती थी। लेकिन हाय ! अब यह डोली मुझे ससुर के देश में ले जायगी, जहाँ मैं पिंजड़े का सुग्गा हो जाऊँगी।"[१]

यह नवविवाहिता दुलहिन, जो नैहर से डोली में बैठ कर श्वसुर-गृह जा रही है, मिथिला के कौटुम्बिक जीवन का एक चित्र उपस्थित करती है। गीत के प्रथम, द्वितीय और तृतीय छन्द में वह बतला रही है

'बाबा, पिता और चाचो के राज्य में वह पगड़ी, धोती के पेंच, और सिर के सिन्दूर की तरह रहती थी। लेकिन श्वसुर के राज्य में वह घर की 'पोतन' 'झाड़ू' और 'चलनी' हो जायगी।

पिता से बाबा का स्नेह सन्तान पर ज्यादा होता ही है, यह मशहूर है, यद्यपि इसके अपवाद भी देखे जाते हैं। इसलिए कन्या का बाबा उसे 'पगड़ी' के पेच की तरह रखता है। पगड़ी सिर में तह-पर-तह देकर, लपेट कर बाँधी जाती है। शरीर के अवयवों में सिर का स्थान सर्वोच्च है। पगड़ी तो सिर का ही शृंगार है। पहनावे के लिहाज से समाज की दृष्टि मे पगड़ी को जो मान मिलता है, वही मान कन्या अपने बाबा से पाती है। पिता से यह कुछ कम मान पाती है। उसका पिता उसे धोती के फेंट की भाँति रखता है। धोती कमर में लपेट कर पहनी जाती है। सिर से कमर का स्थान नीचा है। चाची के राज्य में वह सिर के सिन्दूर की तरह रहती है। सिन्दूर सुहाग का चिह्न है। नारी-संसार में सिन्दूर का जो महत्त्व है, वही महत्त्व चाचो की आँखों में कन्या का है। किन्तु, पट बदलता है। ससुराल जाने पर उसकी सुनहली आकांक्षायें कुसुम की कोमल पखड़ियो की तरह कुचली जाती है। वहाँ वह घर की पोतन, झाड़ू, और चलनी हो जाती है, यद्यपि पोतन, झाड़ू और चलनी होकर भी वह कौटुम्बिक जीवन के मलिन आँगन को लीपती, बुहारती और चाल कर स्वच्छ करती है। विवाह का भारवाही

---

१ अध्याय समदाउनि',

बन्धन हजारो वर्षों से नारी-जीवन के गले मे ववालेजान हो रहा है। सदियो से समाज का कलन्दर नारी को बन्दरी की तरह नचाता रहा है।

'नारी एक विषधर अहि के रूप में परिणत हो गयी है, नही तो पाषाण की अहल्या', उडीसा के प्रसिद्ध साहित्यकार कालिन्दी चरण पाणिग्राही ने लिखा है—कोई उससे डर कर दूर रहता है, अथवा कोई उसे देवी करने के उद्देश्य से पत्थर के रूप में रखता है, जो व्यक्ति नारी से दूर है, उसने उसे घृणा और अभिसम्पात दिया है, और जिसने उसे जड कर रक्खा है उसने कुछ भी करने को वाकी नही छोडा है। इसी भाव के द्वारा नारी ने पुरुष से जो निग्रह पाया है, वह किसी नीग्रो गुलाम के प्रति गोरे क्रिश्चियनियो के व्यवहार से लेश-मात्र कम नही है। जहाँ पर उसने असावधान होकर एक अन्य पुरुष को देख लिया है, वहाँ से उसकी आँखे बन्द कर दी जाती है, जहाँ किसी पुरुष ने उसको एक वार छू दिया है, वहाँ होती है उसकी अग्नि परीक्षा। सभी स्थानो मे नारी को मूर्ख, अविवेकी, मूक और जड कर रखने के अतिरिक्त पुरुष ने उसकी पवित्रता सुरक्षित रखने का और दूसरा कोई सदुपाय नही खोजा है। नारी ने भी अपनी इस अवस्था को आशीर्वाद समझ कर पुरुष के प्रति प्रीति और भक्ति का निर्बोध परिचय दिया है, किंवा दैव का अभिशाप समझ कर चुप रह गयी है।'

गीत के चतुर्थ छन्द मे दुलहिन कह रही है—माँ के राज्य मे वह जगली सुग्गे की तरह रहती थी। लेकिन हाय! ससुर के राज्य मे वह पिंजडे का सुग्गा हो जायगी।'

प्राणिमात्र को स्वाधीनता प्यारी है। स्वाधीनता का कालकूट भी मीठा लगता है, और पराधीनता का अमृत भी कडवा। मनुष्य तो विवेकशील प्राणी है। पशु-पक्षी भी बन्दी-गृह मे रहना पसन्द नही करते। 'पालतू पक्षी पिंजडे में है, और स्वाधीन पक्षी जगल में,' स्वर्गीय श्री रवीन्द्रनाथ ठाकुर ने लिखा है—समय आने पर वे दोनो मिले, यही होनहार थी।' स्वाधीन पक्षी ने कहा—'प्रियतम, आओ जगल को उड चलें।' पिंजडे के पक्षी ने कहा—'भीतर आओ, हम दोनो इसी पिंजडे मे रहेगे।' स्वाधीन

पक्षी बोला—'इन सीखचों के अन्दर पंख फैलाने के लिए स्थान कहाँ है?' पिंजड़े के पक्षी ने कहा—'पर आकाश में बैठोगे कहाँ?' स्वाधीन पक्षी ने फिर कहा—'प्रियवर, जंगल के गीत गाओ।' पिंजड़े का पक्षी बोला—'मेरे पास बैठो, मैं तुम्हें विद्वानों की भाषा सिखाऊँ।' स्वाधीन पक्षी ने कहा—'भला, गीत भी कहीं सिखाने से आता है?' पिंजड़े के पक्षी ने आह भरकर कहा—'पर मुझे तो जंगली गाने आते नहीं।' उनका स्नेह आकांक्षाओं से परिपूर्ण है, पर वे एक साथ उड़ नहीं सकते। पिंजड़े के सीखचों में होकर वे एक दूसरे को देखते हैं, पर उनकी एक दूसरे को पहचानने की आकांक्षा व्यर्थ है। वह पंख फड़फड़ाता है, और पुकारता है—'हो नहीं सकता। पिंजड़े की बन्द खिड़की से मुझे भय लगता है।' पिंजड़ेवाला पक्षी धीरे-धीरे कहता है—'मेरे पंख शक्तिहीन और मृतप्राय हो रहे हैं।'

नारी-जीवन परवशता के पिंजड़े में कैद होकर पालतू सुग्गे की भाँति निरुपाय हो गया है। उसके पंख अशक्त और मृतप्राय हो रहे हैं। उसकी आत्मा निस्तेज हो गई है। उपर्युक्त गीत की कवियित्री ने 'पोतन, झाड़, चलनी और बन्दी सुग्गे' इन तीन-चार शब्दों में ही युग-युग से प्रपीड़िता गृहिणी के भग्न-मनोरथ और भयाक्रान्त जीवन का नग्न चित्र खींच दिया है। उसने बूंद में बाड़व की जलन भर दी है। उसके दर्दनाक शब्दों में केवल मिथिला ही नहीं, समग्र नारी-समाज के हृदय की कातर वाणी गूंज उठी है। गीत में अन्धकार की अतल गुहा-सी झाँकती हुई नारी-समाज की लाख-लाख आँखें, जिनसे नैराश्य और विवशता का सागर उमड़ा पड़ता है, मन्वन्तर तक—कदाचित् विधाता की इस जीर्ण सृष्टि के बाद भी अन्तरिक्ष के शून्य अंचल में बर्छी की तीखी नोक की तरह चुभती रहेंगी। और गीत के ये चार शब्द (पोतन, चलनी, झाड़, और बंदी सुग्गे) पुरुष-वर्ग के निर्मम अत्याचार के सवाक् स्मारक के रूप में मानवों के पाशवी पीड़न का विज्ञापन करते रहेंगे।

मिथिला के कितने ही लग्न-गीतों में मानव की चिर सहधर्मिणी नारी की न जाने कितनी सुखद स्मृतियाँ अपूर्ण रुचि बन कर हारिल पञ्छी-सी

मेरी गैरहाज़िरी में न मालूम तुम्हारी रसोई कौन राँधेगा? हाय! तुम्हारे महल मे मेरी माँ विसूर रही है।"

पोलैन्ड देश मे कन्या को विदा करते समय उसकी सखी कह रही है:
"Barbara, it is all over, then you are lost to us, you belong to us no more"[1]

"वारबरा, सारे सुनहले अरमान खाक में मिल गये। क्योंकि हमने तुम्हे हमेशा के लिए खो दिया। हाय! अव तुम हमारी नही रही।"

नैहर से ससुराल जाती हुई गुजरात की एक कन्या कहती है -

अमे रे लीलुडा वननी चर कलडी
उडी जाशु परदेश जी
आज रे दादा जी ना देश माँ
काले जाशु परदेश जी[2]

"मै तो हरे-भरे जगल की पछी हूँ। उड कर परदेश चली जाऊँगी। आज दादा जी के देश में हूँ, कल परदेश चली जाऊँगी।"

स्वर्गीय श्री रवीन्द्रनाथ ठाकुर की अमर कृति 'कच-देवयानी' के सलाप में कच के विदा लेने के समय देवयानी ने आहे भर कर कहा है—'वर्षो' ने इस उपवन ने तुम्हें छाया दी है, मधुर सगीत सुनाया है, क्या इसे त्याग देना तुम्हारे लिए इतना सरल है? क्या तुम्हें नही जान पडता कि यहाँ का पवन साँय-साँय करके रो रहा है, और यहाँ की सूखी पत्तियाँ मृत्युगत आशाओ के प्रेत के समान हवा मे इधर-उधर झोके खा रही है, और तुम, केवल तुम—जो हमको छोडे जा रहे हो—मुसकरा रहे हो, तुम्हारे ही होठो पर हँसी है?'

विवाह के किसी-किसी गीत में समाज की अत्यन्त उन्नत अवस्था का परिचय मिलता है। उसके अनुसार तत्कालीन वैवाहिक व्यवस्था भौतिक

---

१ H. N Hutchinson, *Marriage Customs in many Lands*

२ लोक-साहित्य लग्न-गीतोना ध्वनि, पृष्ठ १८३

परिसरो (Environments) की आधार-शिला पर अवलम्बित है। उसकी वैषयिक पेलवता (Sexual delicacy) आधुनिक शिष्ट सभ्यता की अपेक्षा अधिक चेतनात्मक है। यहाँ जिस समय का चित्र दिया गया है, उस समय वर और कन्या का विवाह स्वय उनकी ही रजामन्दी पर निर्भर था। धार्मिक गपोडेबाजी, पौराणिक (Mythological) ढकोसला और जात-पाँत की सकरता उस समय विवाह के प्राकृत मार्ग में रोडे नही बिछाती थी। इस लडी मे गूथे हुए मिथिला और छोटा नागपुर के अनेक लग्न-गीत है, जिनमे विवाह की ओर प्रेरित करनेवाली सौन्दर्य्योपासना अपने मनोवैज्ञानिक रूप मे विकसित हुई है।

जितना ही हम लोक-साहित्य के प्राचीन-से-प्राचीनतम लग्न-गीतो के इतिहास का अध्ययन करते है, उतना ही विवाह-सम्बन्धी नियमो की मानसिक दशा मे बौद्धिक शक्ति के विकास का आभास मिलता है। और, जैसे-जैसे समाज के रूप मे रूपान्तर होता है, वैसे-वैसे लग्न-गीतो में विवाह की उपादेयता भी विकृत होती जाती है। आज वैवाहिक प्रथा का जो नग्न कलेवर हमारे सामने प्रत्यक्ष है, वह उसका नैसर्गिक कलेवर नही, अपितु उपर्युक्त मान्यता के अनुकूल अधोमुखी सभ्यता का शुष्क ककाल-मात्र है।

[४]

लोक-गीत की दुनिया मे पीडित किसानो तथा क्षुधार्त्त श्रमजीवियो के प्रति भी सहानुभूति उमड पडी है। जीवन की छाया की पार्श्वभूमि में मानवता का जीर्ण-ककाल झाकता-सा प्रतीत होता है। दु खान्त पीडा का यह भावचित्र मन मे विषाद का गम्भीर गाढ रग भर रहा है, और रुढि-पाश मे बन्दी मानवता मुक्ति के लिए चीत्कार कर रही है—

"ओ भोले शकर, तुमने मेरे दिन कितने दुखद बनाये?
जो थोडी-बहुत खेती बाडी थी वह भी तुमने छीन ली।
और तो और, मेरे सगे भाइयों ने भी—
मुझसे बँटवारा कर लिया।

घर में खर्ची नही है,
और वाहर ऋण नही मिलता।
यहाँ तक कि गाँव का जमीदार
रात में चैन की नीद नही सोने देता।
एक ही लोटा है, और भाई तीन है।
अत पानी पीने के वक्त छीना-झपटी होती है।
एक वैल वच गया था,
जिसको महाजन ने ऋण में हडप लिया।
हाय! हित-मित्र और अपने सगे-सम्वन्वी भी,
पराये हो गये।"[१]

दैन्य से जर्जर और अधिकार पद से च्युत मानव-हृदय इन दर्दनाक पक्तियो मे पाशविक अर्थ-भित्ति का विरोव कर उठा है, और सहसा मेरा ध्यान उस दृश्य की ओर ले जाता है जो अमेरिका के प्रसिद्ध कवि एडविन मार्खम की 'The Man with the Hoe' शीर्षक रचना मे चित्रित हुआ है.

"सदियो के भार से जिसकी कमर टेढी हो गयी है, और जो फावडे के सहारे झुका हुआ जमीन में दृष्टि गडाये है।

जिसके चेहरे पर युग-युग की शून्य लिपि अकित है और जो अपनी जर्जरित पीठ पर दुनिया का वोझ ढो रहा है।"

युग-युग से गरीवो की भूख पर धूल डाल कर मिष्टान्न उडानेवाला स्वार्थी ससार सामाजिक विपमता के इस निर्मम क्रीडा-चक्र को आँखे फाड-फाड कर देख रहा है, और युग-युग से अन्धकार-कर्दम में रुद्ध मानवता जगत की निर्मातृ शक्ति से न्याय की भीख माँग रही है।

मिथिला के एक दूसरे लोक-प्रिय गीत में जमीदारो की पाशविकता, उनके कारिन्दो की कठोर-हृदयता, मजदूरो की वेवसी और उनके वच्चो

---

१ 'नचारी',

के क्रन्दन का सजीव चित्र खींचा गया है। यह गीत मिथिला मे वैशाख और जेठ महीने में, जब कभी पानी नही बरसता और दुर्भिक्ष की सम्भावना दीखती है, चाँदनी रात मे गाया जाता है। उसके निम्न लिखित भाव है:

"हे इन्द्र देवता, रिमझिम बरसो
क्योकि पानी के विना दुर्भिक्ष पड गया है।
हरे-भरे मैदान सूख गये।
नदी-नाले और तालाब मरुभूमि-से दीखने लगे,
और मेरे भाई के हरी फसल से भरने वाले खेत भी ऊसर हो गये।
हाय! विधवा ब्राह्मणी भी हल जोतने लगी,
लेकिन पानी के विना, जमीन के पत्थर-सी—
कडी हो जाने के कारण फाल उछल-उछल कर
आडियो में लग जाती है।
हे इन्द्र, देवता, झम-झम बरसो,
पानी के विना दुर्भिक्ष पड रहा है।
सिर्फ धोबी के आँगन में ही—
कुछ गँदला और मैला पानी रह गया है।
उसी गँदले अपवित्र जल में ब्राह्मण स्नान कर रहे है,
और, उसी मैले पानी से वे धोती कचारते,
जनेऊ सोटते और रच-रच कर चन्दन लगाते है।
हे इन्द्र देवता, रिमझिम बरसो,
पानी के विना दुर्भिक्ष पड रहा है।
मजदूरो के छोटे-छोटे बच्चे—
भूख मे किलबिल कर रहे है,
लेकिन उनके मालिक अपनी—
खत्तियो को नही खोलते!
और तो और, गाँव के पटवारी भी—
झूठ-मूठ गरीबो के सिर कर्ज का बोझ,—

लाद कर अन्धेर कर रहे है,
और मजदूरो की मजदूरी में,
सडी-गली खेसारी तोलते है।
हे इन्द्र देवता, झमझम बरसो,
पानी के विना दुर्भिक्ष पड रहा है।"[1]
लोक-गीत में वर्ग-हीन सामाजिकता का सूक्ष्म निरूपण आज से नही,

---

१ "हाली-हुलु बरसू इनर देवता
पानी बिनु पडइछइ अकाले हो राम!
चओर सूखल, चाँचर सूखल
सूखि गेल भाय के जिराते हो राम!
राँडी बभनिया हरवा जोतइछथि
फरवा उलटि अडिया लगइछइ हो राम!
हाली हुलु बरसू इनर देवता
पानी विनु पडइछइ अकाले हो राम!
धोवियाक अगना में गादर-गुदर पनिया
ओहि में नहाये सभ बभना हो राम!
धोतिया फींचल, जनेउआ सोंटल
रचि-रचि तिलक चढ़ावे हो राम!
हाली हुलु बरसू इनर देवता
पानी विनु पडइछइ अकाले हो राम!
जनमा के धिया-पुता कल्ह-मल्ह करइछइ
मालिक सभ बेढियो न खोलइछइ हो राम!
गाँव के पटवरिया झूठे-मूठे लिखइछइ
सरले खेसारी वन तौलइछइ हो राम!
हाली हुलु बरसू इनर देवता
पानी विनु पडइछइ अकाले हो राम!"

सदियो मे होता आया है, अथवा यो कहिये कि एकाधिकार और व्यक्तिगत उत्पादन-शक्ति का विकास होने के साथ ही लोक-गीत भौतिक आवश्यकताओ की एकता की घोषणा कर रहे हैं। जीवन के अखिल उपकरण मानव-सन्तान का पैतृक स्वत्व तो है नहीं। इनका उद्गम-स्थान है प्रकृति का उदार हृदय। तभी उसने अपने स्वच्छ मानस-दर्पण मे लोक-जीवन की प्रतिच्छाया अकित कर ली।

छोटा नागपुर की 'मागे और फायगु' शैली के लोक-गीतो मे उस जमाने की तसवीर भी मिलती है, जब प्रकृति की सद्य फली-फूली क्यारियो के फूलो तक पर व्यक्तिगत अधिकार था। भूस्वामियो की बग़ैर इजाजत के न तो कोई फूलो की पखडी तोड सकता था, और न कोई पहाडी और गोचर भूमि पर स्वच्छन्दतापूर्वक विचर सकता था

राजा के पोखर किनारे एक चम्पा का गाछ है जी!
झर-झर चूता है चम्पा का फूल
बेली और चमेली के फूल भी बगीचा में लहराते है
एक कली का फूल
दो कली का फूल
न दोकडा है मेरे पास,
और न दमडी
हाय, कैसे खरीदूंगी चम्पा का फूल मै
और कैसे पहनूंगी बेली का फूल।'

स्वार्थ-लिप्सा ही विश्व-सभ्यता का मापदड बन बैठी है। लोक-उपवन का यह फूल, जो सामाजिक समता का समापन करता है, सामूहिक जन-जीवन के कलेजे में शूल की तरह चुभ रहा है। उसकी गुलाबी पखडियो मे गन्ध पर्याप्त मात्रा मे है, लेकिन वह अपनी महक के मतवाले मधुपों के रिक्त हृदय-घट मे मधु-वर्षण नही कर सकता। सृष्टि अपने रगीन चोले मे निखर उठी, लेकिन उसका अन्तररूप दानवी तुफैल के शिकजे में गिर-फ्तार रहा, आज भी उसकी वह बेढगी रफ्तार जारी है, जो पहले

थी। उसके तमाच्छन्न मस्तिष्क में विवेक का प्रकाश नही। मरणासन्न छिद्र तो अनन्त हैं, भौतिक विश्व का अन्ध-चक्षु सत्य को टटोल रहा है। वैज्ञानिक सभ्यता की चमक-दमक उसके अभियान-पथ मे प्रकाश विखेर रही है। कभी-न-कभी मानव ससार में सौन्दर्य का प्रसार होगा ही।

—रामइकबालसिंह 'राकेश'

सोहर

मैथिली ग्रामीण कविता के क्षेत्र में 'सोहर' की रचना-पद्धति अत्यन्त पुरानी है। मिथिला के लोक-जीवन को आनन्दमय बनाने में अन्य अनेक गीत-शैलियों के अलावा 'सोहर' का भी ज़बरदस्त हाथ है। पुत्र-जन्मोत्सव के उपलक्ष में गली-कूचे, टोले-मुहल्ले और गांव के कोने-कोने में गायिकाओ की महफिलें जुटती हैं। जच्चा का ख़ामोश आँगन 'सोहर' के नशीले झोको से गूंज उठता है। कमसिन बालाएँ, कुमारी युवतियाँ और बड़ी-बूढी तजरुबेकार औरतें उमडे हुए दल-बादल की तरह ठट-की-ठट टूट पडती है, और सगीत की मन्द-मन्द बूंदें बरसाती है। प्रसूतिका-भवन का पार्श्ववर्त्ती प्रागण सगीतशाला में परिणत हो जाता है। शिशु-जन्म के छठवें दिन उत्सव अपने पूरे जोबन पर होता है। उत्सव प्रारम्भ होने के पहले प्रसूता आंगन में लाई जाती है, जहाँ स्नानादि से निवृत्त हो वह स्वच्छ वस्त्राभूषण से सुसज्जित होती है। प्रसूता के इष्ट-मित्र, बन्धु-बान्धव, छोटे-बडे प्रफुल्ल-वदन दीखते हैं। सारा परिवार हर्ष से फूला नहीं समाता। नर्त्तकियाँ अँगडाई का नक़शा बन-बन कर इस ढब से रबाब पर मुबारकबाद गाती है कि सुननेवाले दग हो जाते हैं। प्रसूता यदि सम्पन्न घराने की रही, तो उसके रिश्तेदार मुट्ठियाँ भर-भर कर इनाम बाँटते है और कगाल निहाल हो जाते हैं। लेकिन लडकी के जन्म पर यह आनन्द की शहनाई नहीं बजती बल्कि सारा ठाट-बाट, चहल-पहल, राग-रग फीका पड जाता है। प्रसूता के आनन्द-महल उजाड की गोद में सो जाते है, और हर तरफ शाम की रँगी सायो-सी उदासी छा जाती है।

पुत्र-जन्म के अलावा उपनयन और विवाह-सस्कार के उत्सव पर भी 'सोहर' गाये जाते है। यद्यपि इसके सिद्धहस्त और उन्नतमना रचयिताओं

ने पिंगल और व्याकरण के नियमो की जगह्-जगह् अवहेलना की है, फिर भी इसकी टेक रागात्मिका वृत्ति से प्रभावान्वित हैं। इसका कारण यह है कि 'सोहर' के रचना-कौशल में ज्यादातर ग्रामीण स्त्रियों का हाथ हैं। इसलिए इसकी रचना-पद्धति स्त्री-सुलभ कोमलता-सम्पन्न है, और इसका सम्वादी स्वर सौन्दर्य्यमयी व्यञ्जना से अनुप्राणित। कभी-कभी चांद की ठडी रोशनी में बैठ कर जब स्त्रियां अपने रसीले स्वरो से 'सोहर' गाती है, तो समा बँध जाता है।

'झूमर' और 'सोहर'—दोनों में अन्तर है। 'झूमर' अधिकाशत छोटी-छोटी बहरों में लिखा गया है, और 'सोहर' अधिकतर बडे-बडे छन्दो में व्यक्त किया गया है। 'झूमर' में मैथिली टकसाली मुहावरे प्रचुरता से इस्तेमाल किये गये है, 'सोहर' में यह गुण बहुत कम है। इसमें 'झूमर' की रगीन शिल्पकारी और चमक-दमक नहीं मिलती। 'झूमर' भाव-प्रधान गीत है, 'सोहर' में यह गुण, जैसे—शरद-वर्णन, प्रकृति-वर्णन, बादल-वर्णन, वसन्त-वर्णन आदि कहीं कहीं बड़े कवित्वमय ढग से व्यञ्जित किये गए है। 'झूमर', तुकान्त होता है, और इसकी मात्राएँ भी प्राय एक-सी होती हैं। 'सोहर' भी तुकान्त होता है। लेकिन कोई-कोई 'ब्लैंक वर्स' की तरह भी लिखा गया है। 'झूमर' में प्रेम की करुण चीत्कार, अतृप्त अमिट प्यास और एक युगान्तर दीर्घ वेदना की कलात्मक अभिव्यक्ति दीख पडती है। फूल के अन्तस्तल में बैठे हुए कीट के समान उसके हृदय को एक प्यास कचोटा करती है। लेकिन 'सोहर' में एक उमग, एक तरंग, और उल्लास की एक स्पष्ट झलक दिखलाई देती है। 'झूमर' के ज्यादातर मजमून आशिक-माशूक़ों, नायक-नायिकाओं की विरह्-मीमासा से भरे पडे है। 'सोहर' में माशूक़, आशिक़ों और नायिकाएँ नायकों की जुल्फें सँवारने के लिए बेचैन नहीं दीखतीं।[1] 'झूमर' में निराशा के दिलसोज आंसू दिल को बेचैन करते है। 'सोहर' सुखान्त होता है, और इसमें आशा की निर्बन्ध निर्झरिणी

---

१ अर्वाचीन नूतन शैली के 'सोहर' इस कथन के अपवाद है।

टेढी नागिन-सी वल खाती बिजली-सी दौडती हुई चली गई है। उदाहरण-स्वरूप इस शैली के कुछ लोकप्रिय नमूनो का मुलाहिज़ा कीजिये—

(१)

आरे आरे प्रेम चिडइया झरोखा चढि बोलले रे
ललना पिया मोरा गेल विदेश विदेशे गर छाओल रे
सासु मोरा निशि दिन मारए ननद गरिआवए रे
ललना गोतिनि कएल तरमेन वझिनिया गरछाओल रे
एक हाथे लेलि घइलिया दोसरे हाथ गेरुल रे
ललना विरहल पनिया के गेलों ऊपरे काग बोलल रे
किए मोरा कगवा रे ववा अयता किए मोरा भइया अयता रे
कगवा कओने सगुनमा लए अएले त बोलिया वर सोहावन रे
नये तोरा रानी हे ववा अयता नये तोरा भइया अयता हे
ललना होरिला सगुनमा लए अइली त बोलिया वर सोहावन हे
जँओ मोरा कगवा रे ववा अयता जँओ मोरा भइया अयता रे
कगवा तोहरो काटव दुनु लोल त बोलिया वर मोहावन रे
जँओ मोरा कगवा रे पिआ अयताह होरिला जनम लेत रे
कगवा सोनमे मढएवो दुनु लोल त बोलिया वर मोहावन रे
पनिया जे भरलो मे गगादह अओरो गगादह रे
ललना चारु दिशा नजरि खिराओल नयन लोरा ढर-ढर रे
विप्र सरूपे पिया अयलन आगुए भए ठाढि भेल रे
ललना कओने-कओने दुख तिरिया कओने दुख रोदन हे
सासु मोरा विप्र हे मारए ननद गरियावय हे
विप्र गोतिनि कएल तरमेन वझिनिया गरछाओल हे
चुपे रहु चुपे रहु तिरिया जनिअ करू रोदन हे
तिरिया आजुए आओत घरवइया वझिनिया पाप छूटत हे

[1] रे झरोखा पर बोलते हुए प्रेम के पक्षी, मेरा सन्देश ले जाओ।

'मेरे प्रियतम प्रवासी हैं। मेरी सास मुझे मारती है। ननद गाली देती है और गोतिनी 'बाँझिन' कह कर ताना देती है।

'हे सखी, एक हाथ में घडा लिया, और दूसरे में गेरूला[1]। इस प्रकार विरह की वावरी मैं जल भरने चली कि सिर पर काग बोलने लगा।

'रे काग, क्या मैके से मेरे पिता आ रहे हैं या भाई? आज तुम कौन-सा शुभ सन्देश लाये हो कि तुम्हारी बोली इतनी मीठी है?'

काग ने कहा—'हे सुन्दरी, मैके से न तुम्हारे पिता आते हैं और न भाई। मैं जीवन का आगामी वृत्तान्त वतलाने में निपुण हूँ और तुम्हारे पुत्र-जन्म की भविष्य-वाणी करता हूँ। इसलिए आज मेरी बोली इतनी मीठी है।'

नायिका ने कहा—'रे काग, यदि मेरे पिता और भाई आये और तुम्हारी भविष्यवाणी गलत ठहरी, तो तुम्हारी दोनो चोचें काट लूँगी। लेकिन अगर प्रियतम आये और मैंने पुत्र जना, तो तुम्हारी दोनों चोचें सोने से मढाऊँगी।'

'हे सखी, जब जल भर चुकी और इधर-उधर मैं ने देखा तो मेरी आँखें डबडबा आईं। ब्राह्मण वेश में मेरे प्रियतम सामने खडे थे। उन्होंने प्रेम-भरे शब्दो में कहा—'हे सुन्दरी, तुम्हें कौन-सा दु ख है जो तुम इस तरह बिसूर रही हो?'

नायिका ने कहा—'हे ब्राह्मण, मेरी सास मुझे मारती है, ननद गाली देती है, और गोतिनी 'बाँझिन' कह कर ताना देती है।'

ब्राह्मण ने कहा—'हे सुन्दरी, तुम चिन्ता मत करो। आज तुम्हारे प्रियतम आयेंगे और तुम्हारे सिर से 'बाँझिन' का कलक दूर हो जायगा।

इस भावपूर्ण गीत से मालूम होताहै कि कर्कशा सास के राज्य में बहुएँ कितना कष्ट पाती हैं। ननद का व्यवहार भी बहू के साथ अच्छा नहीं होता। चुगली खाना और झूठा इल्जाम लगाकर बहू को कलकित करना तो ननद

---

[1] पुआल का बना एक वृत्ताकार गुदगुदा गद्दा, जो सिर पर घडे की पेंदी के नीचे रक्खा जाता है।

के वायें हाथ का खेल है। अगर वह निपूती है, तो उसका दुर्भाग्य ही समझिये। 'अपुत्रस्य गतिर्नास्ति'—निपूते की गति नहीं होती, इस पौराणिक सिद्धान्त ने हिन्दुओं के मस्तिष्क में इस प्रकार जड जमा ली है कि निपूती वहू को वे जूते के तलुए से भी वदतर समझते हैं। इस गीत की नायिका भी निपूती है। इसलिए उसकी ननद उसे 'वाँझिन' कह कर ताना देती है। वह उत्सुकता-पूर्वक अपने प्रवासी प्रियतम के लौटने का इन्तजार कर रही है, जिससे उसके सिर से 'वाँझिन' का कलंक दूर हो जाय।

(२)

सुनिअइन कन्हैया मोरा योगी भेल हमहुँ योगिनि होए जाएव
रने वने पिपरक पात डोले जल विच डोलत सेंवार
राधिका जे डोलत कन्हैया विनु जइसे डोलए पुरइन पात
सुनिअइन कन्हैया मोरा योगी भेल हमहुँ योगिनि होए जायव
जलवा कें वएरी सेमार भेल मछरी के वएरी मलाह
तिरिया के वएरी परदेस गल सेजिया भेल भयावन
विना रे मइया के नइहर कइसन विना स्वामी कइसन सिंगार
विना रे खेवइया नइया डगमग कोनाक उतरव पार
लेहु हे सासु अपन अभरन हम धनि खोजन चली
हमरा लेखे मधुवन जरि गेल जरि गेल सोलहो सिंगार
पनमा अइसन हम धनि पातर फुलवा अइसन सुकुमार
वेमत जउवना लुवुधि गेल सेहो तेजी गेल नन्दलाल
हाथ तेजव हाथ कें मुन्दरिका समुन्दर भँसएवौं गिरमलहार
तजि देवो आहे सिर के सेनुरा जव लगि अयता नन्दलाल
सुनिअइन कन्हैया मोरा योगी भेल हमहुँ योगिनि होए जायव

'सुनती हूँ, मेरे प्रियतम श्रीकृष्ण योगी हो गये हैं; इसलिए अब मैं भी योगिन हो जाऊँगी।

जिस प्रकार वन में पीपल के पत्ते काँपते हैं, जल के बीच सेवार और पद्म-पत्र काँपते हैं, उसी प्रकार श्रीकृष्ण के बिना राधा काँप रही है।

सुनती हूँ, मेरे प्रियतम श्रीकृष्ण योगी हो गये है, अब मैं भी योगिन हो जाऊँगी।

जल का दुश्मन सेवार होता है, और मछली का दुश्मन मल्लाह। इसी प्रकार अगर स्त्री का प्रियतम प्रवासी हो तो सेज दुश्मन हो जाती है।

सुनती हूँ, मेरे प्रियतम श्रीकृष्ण योगी हो गये हैं, इसलिए अब मैं भी योगिन हो जाऊँगी।

जिस प्रकार माँ के विना नैहर, प्रियतम के बिना शृंगार, और नाविक के बिना नौका निरर्थक हो जाती है, उसी प्रकार विना प्रियतम की प्रियतमा अपनी जीवन-नौका कैसे पार लगायेगी ?

राधा कहती है—'हे सास, आप अपना वस्त्राभरण लें। मैं अब अपने पति की खोज में निकली। हाय! मेरे लिए मधुवन में आग लग गई, और सोल्ह प्रकार के शृंगार भी नीरस हो गये।'

'मैं पान की तरह पतली हूँ और फूल की तरह कोमल। मेरा दीवाना यौवन पूर्णरूप से प्रस्फुटित हो गया है। फिर भी दु.ख है कि मेरे प्रियतम श्रीकृष्ण मेरा परित्याग कर प्रवासी हो गये।'

'हाय! अब मैं हाथ की अँगूठी उतार दूँगी, और गले का सुनहला हार समुद्र में डुबो दूँगी। और जब तक श्रीकृष्ण नही आयेंगे, तब तक माथे पर ईंगुरी बिन्दी भी धारण नहीं करूँगी।

'सुनती हूँ, मेरे प्रियतम श्रीकृष्ण योगी हो गये है, अत. मैं भी योगिन हो जाऊँगी।'

(३)

हम धनि अउरि पसारि जँ हमरा ला किय लायव रे
माय ला लायव चुनरिया वहिनि ला शखा चुडी रे
ललना धनि ला लाएव ककन गोरखपुर के हो रे
फाटि जयतइ लाल चुनरिया कि फूटि जयतइ शखा चुडी रे
ललना जुगे-जुगे रहतइ ककन गोरखपुर के हो रे
पहिरि-ओहिरि भउजी ठाढि भेलि ननदो सिहावथि रे

ललना एक तोहे पुत्र जनिमतौं कि ककन लै लितौं रे
मचिया बइसल बाबा तोहि सौं मिनती करू रे
ललना तोरो पुतहु कबुलल ककन हम त बधइया लेबइ रे
पलँगा बइसल तू पतोहु कि तोहि दुलरइतिन रे
ललना दय दिअ हाथक ककन बेटी मोर पाहुन रे
सूति त हम बरू देवइन गुर्जहि मढा कै रे
ललना एक नहि देवइन ककन गोरखपुर क हो रे
पलगा सुतल आहे माय पतोहु तोर कउलल रे
ललना कउलल हाथ क ककन हमत बधइया लेबइ रे
भानस करइत पुतोहु कि तोहि दुलरइतिन रे
ललना दय दिअ हाथ क ककन बेटी मोर पाहुन रे
बाजू त हम बरू देबइन घूँडिया लगा कै रे
ललना एक नहि देवइनि ककन गोरखपुर के हो रे
जूआ खेलइत तुए भाय कि तोहि सौं मिनती करू रे
ललना तोर धनि कबुलल ककन हम त बधइया लेबइ रे
कतए गेलओ किए भेलओ धनि दुलरइतिन रे
ललना दय दिअ हाथ क ककन बहिनि मोर पाहुन रे
चन्द्रहार बरू देवइन नगवा जडा कै रे
ललना एक नहि देवइनि ककन गोरखपुर के हो रे
चुपे रहु चुपे रहु बहिनि कि तुअ दुलरइतिन रे
ललना कए लेब दोसर विवाह कि ककन बधइया देव र
ललना जखन सुनलि मोर भाउज मुनलो ने पावल रे
ललना हाथ सँ फेंकल ककन सउतिनि जर लागल रे

किसी नायिका का प्रियतम परदेश जा रहा है।

नायिका ने कहा—'हे सजन, आप मेरे लिए कौन-कौन-सी वस्तु उपहार में लायेंगे?'

नायिका के प्रियतम ने कहा—'मैं माँ के लिए चुँदरी लाऊँगा, बहन

यह सुन कर श्रीकृष्ण ने अपने पडोसी माली से कहा—'हे मेरे घर के पीछे बसे हुए माली, तुम मेरे हितू हो। तुम आनन्दवन बाग से रानी रुक्मिणी के लिए इमली ला दो।'

इस गीत में एक गर्भवती वहू का सुन्दर मनोचित्र है। गर्भवती जब जो इच्छा करे, वह उसी समय पूरी हो जानी चाहिये। वरना गर्भस्थ सन्तान के ऊपर बुरा प्रभाव पडने की सम्भावना रहती है। इसीलिए श्रीकृष्ण ने रानी रुक्मिणी के लिए इमली तोड लाने की आज्ञा दी।

(५)

कओने वने उपजए चम्पा कओने वने केसर रे
ललना कओने वने चुअए मजीठ चुनरिया रँगाएव रे
वबे वन उपजए चम्पा भइये वन केसर रे
ललना रे पिये वन उपजए मजीठ चुनरिया रँगावहु रे
चुनरी पहिरि हम पानी भरू दोसरे में सुन्दर रे
ललना हथिया चढल एक रजवा मुसुकि वोलि वोलल रे
अइसन धनि हमरा रहितथि पलँगा सोअइतहुँ रे
ललना घरहि मे कुइयाँ खनइतहुँ रेशम डोरि बँटितहु रे
मचिया वइसल तोहे सासु कि मोरि ठकुराइन रे
सासु हथिया चढल एक रजवा मुसुकि वोलि वोलल रे
अइसन धनि हमरा रहितथि पलँगा सोअइतहुँ रे
ललना घर ही मे कुइयाँ खनइतहुँ रेशम डोरि बँटितहुँ रे
कओने रग हे पुतहु हथिया कओने रग महाउथ हे
पुतहु कओने वरन उहो रजवा मुसुकि वोलि वोलल हे
करिए वरन उहो हथिया त करिए महाउथ हे
सासु साँवरे वरन उहो रजवा मुसुकि वोलि वोलल हे
चुपे रहु चुपे रहु पुतहु कि अहाँ घर लछमिन हे
पुतहु ओहे छथि हमरो वेटउआ अहाँ क पुरुख छथि हे

'किस वन में चम्पा होता है, और किस वन में केसर ? और हे सखी, किस वन में कुसुम चूता है ? मैं चुंदरी रँगाऊँगी।'

उसकी सखी ने कहा—'पिता के वन में चम्पा होता है, और भाई के वन में केसर। और हे सखी, प्रियतम के वन में कुसुम चूता है। तुम चुंदरी रँगा लो ना!'

नायिका कहती है—'जब मैं चुंदरी पहन कर पनघट पर जल भरने गई तो एक तो मैं सुन्दरी थी, तिस पर मेरी चुंदरी ने मेरे लावण्य पर मुलम्मा कर दिया।

हे सखी, जब मेरे इस अपूर्व सौन्दर्य्यको हाथी पर चढे हुए एक राजा ने देखा तो उसने हँस कर कहा—'हे पनिहारिन, यदि मुझे तुम्हारी-सी प्रियतमा मिलती तो उसे मैं पलंग पर रखता और जल भरने के लिए आँगन में ही कुआँ खुदा कर रेशम की डोरी लगा देता।'

नायिका ने जाकर अपनी सास से शिकायत की—'हे मचिया पर बैठी हुई मेरी सास, तुम मेरी श्रद्धा का पात्र हो। आज जब मैं पनघट पर जल भरने गई तो हाथी पर चढे हुए एक राजा ने मुझसे हँस कर कहा—

'हे सुन्दरी, यदि मुझे तुझ जैसी प्रियतमा मिलती तो उसे पलग पर रखता, और जल भरने के लिए आँगन में ही कुआँ खुदा कर रेशम की डोरी लगा देता।'

सास ने कहा—'हे पतोहू, किस रग का हाथी है, और किस रग का महावत ? और किस रग का राजा है जिसने तुझसे यह मीठी चुटकी ली है।'

नायिका ने कहा—'हे सास, काले रग का हाथी है, और काले रग का महावत, और सांवले रग का राजा है, जिसने मुझसे यह मीठी चुटकी ली है।'

सास ने कहा—'हे पतोहू, चुप रहो। तुम मेरे घर की लक्ष्मी हो। हाथी पर चढा हुआ राजा मेरा पुत्र है, और वही तुम्हारा सजन है।'

यह गीत उस समय का स्मरण दिलाता है, जब मिथिला में पर्दे की कुप्रथा ने जड जमा ली थी। जब गीत की नायिका पनघट पर पानी भरने

गई, तो उसने अपने प्रियतम को, जो विवाह-संस्कार के बाद ही परदेश चला गया था, और बहुत दिन बाद लौटा था, नहीं पहचाना। नायिका का प्रियतम भी (जिसने पर्दे के कारण अपनी नवविवाहिता की छाह तक न देखी थी) उससे अपरिचित था। यह कुप्रथा आज भी मिथिला में पूर्ववत् कायम है, और यह इसी कुप्रथा का दुष्परिणाम है कि आज भी कितने शिक्षित युवक अपनी प्रियतमा के शयन-कक्ष में रात को दबे पांव जाते हैं, और फिर रात रहते ही चोर की तरह खिसक आते हैं।

(६)

नाजुक हमरो बलमुआ, सेजरिया ने आवय हे
ललना बिना रे बलमुआ के सेजिया से रतिया भयावन हे
कओन समइया क चूकल, किए अपराध कयलौं हे
विधना छोट बालम लिखि देल बहुत दुख पावत हे
आधिय राति समइया मदन घनघोर उठै हे
ललना हनि-हनि मारत कटरिया त निदिया ने आवत हे
सावन-भादो बाँकी रतिया तिरिनियो ने डोलत हे
रामा झींगुर करत झकार' केहु तो नहिं जागत हे
ललना रिमझिम पड़त फुहार करेजा मोर काँपत हे

'मेरे नाज़ुक प्रियतम मेरी सेज पर नहीं आते। हे सखी, बिना प्रियतम के सेज सूनी लगती है, और रात भयावनी प्रतीत होती है। हाय! मैंने कौन-सा अपराध किया, जिसका यह फल भुगत रही हूँ। विधाता ने मेरी किस्मत में नादान प्रियतम लिख दिया। अब मैं क्या करूँ?

आधी रात है। अँधेरा बढ़ता जाता है। हे सखी, जब मदन कलेजे में तीखे-तीखे बाण चुभाता है, तो नींद क़ाफ़ूर हो जाती है। सावन-भादों की अँधेरी रात है। पत्ते भी नहीं डोलते। झींगुर की झंकार रह-रह कर शान्ति भंग करती है, और दुनिया स्वप्न के जादू-भवन में सो गई है। हे सखी, बूँदें रिमझिम बरस रही हैं। मैं एकाकिनी हूँ। हाय! मेरा कलेजा थर-थर काँपता है।'

(७)

दुअरे से अएले रघुलाल कि धनि के बोलाओल हे
धनि अएलो नइहरवा के नेओत कि हमे तुहुँ जाएव हे
नय मोरा नइहर में माए भइया सहोदर हे
प्रभु जी नए रे जनक रिसि वाप ककरा वल जाउअ हे
एक कोस गेलि सीता दुइ कोस अओरो तेसरे कोस रे
ललना हुनको उटल जुरि वेदन लछन तेजि प्राएल हे
काने सीता हकन करे अँचरे लोर पोछथि हे
ललना केहि मोरा आगु-पाछु होयत केहि रे नार छीलत रे
ललना केहि लेत सोने के हँसुलिया हृदय जुरायत रे
वन से निकललि वनसपतो अँचरे लोर पोछथि रे
ललना हम सीता आगु-पाछु होयव हमें नार छीलव रे
ललना हमे लेव सोने के हँसुलिया हृदय जुरायव रे

राम ने सीता से कहा—'हे पतिप्राणे, तुम्हारे नैहर का निमन्त्रण है। तुम वहां जाओ न!'

सीता ने कहा—'हे राम, नैहर में न मेरी मां है, न मेरा सहोदर भाई। मेरे पिता जनक ऋषि भी नहीं हैं। मैं वहां किसके वल पर जाऊँ?'

सीता एक कोस गई। दो कोस गई। जव तीसरा कोस गई तो वह प्रसवपीडा से व्याकुल हो उठी। यह देख कर लक्ष्मण उन्हें अकेली ही छोड़ कर अयोध्या लौट गये।

उस निर्जन शून्य वन में सीता की शोकाग्नि प्रवल हो गई और अपने आंचल से आंसू पोंछती हुई वह झुण्ड से विछुडी हुई कुररी की तरह विलाप करने लगी—'हाय! इस असमय में कौन मेरा दु:ख वँटायेगा? कौन मेरे नवजात शिशु का नाल काटेगा? हाय! पुत्र-जन्म की वधाई में कौन मुझसे सोने की हँसुली पुरस्कार लेगा और मेरी लालसा पूरी होगी!'

सीता का यह करुण विलाप सुन कर वन-देवियां वाहर निकलीं और उन्होंने अपने आंचल से सीता के आंसू पोंछते हुए कहा—'हे सीता वहन,

धीरज धरो। देख-भाल हम करेंगी। हमीं नवजात शिशु का नाल काटेंगी और तुम्हारे पुत्र-जन्म की बधाई में सोने की हँसुली लेंगी। इस प्रकार तुम्हारी लालसा पूरी होगी।'

सीता पतिप्राणा और शुद्धाचारिणी थीं। पर रावण के यहाँ अकेली रही थीं। इसी कारण अयोध्या के लोग उनके चरित्र के विषय में सन्देह कर नाना प्रकार का अपवाद फैलाया करते थे। यद्यपि सीता ने अलौकिक अग्नि-परीक्षा में उत्तीर्ण होकर अपनी शुद्धाचारिताका सशय-रहित परिचय दिया था तो भी उस परीक्षा की सत्यता के विषय में प्रजा को पूरा-पूरा विश्वास नहीं था। राम ने इसी अपवाद को दूर करने के लिए तपोवन-दर्शन के मिस सीता का परित्याग किया था। ग्रामीण स्त्री-समाज ने राम के इस निठुर व्यवहार की कड़े शब्दो में आलोचना की है और सरल-हृदया सीता के साथ सहानुभूति प्रकट की है।

(८)

पतोहु जे चललि नहाए कि सासु निरेखथि हे
पतोहु कओने रसिकवा से लोभयलि कि रहलि गरवसए हे
पतोहु मोरा बेटा पढए बनारस राखल धरोहर हे
पतोहु कओने रसिकवा सग रहलि त भयलि गरवसए हे
सासु जी तोहें बेटा पढए बनारस राखल धरोहर हे
सासु जी भँओरा के छने बेटा अएलन्हि गरव दइवा दय देल हे
दुअरा बइसल तोहे देवरा कि मोरो सिर साहेब हे
देवरा रेशमक डोरि बाँटि दिता भँओरा क बझइतओ हे
आधि राति वितल पहर राति, भिनुसर भँओरा जे आयल
—रेशम डोरि बान्हल हे
मचिया बइसल तोहें सासु कि मोरो सिर साहेब हे
सासु चिन्हि लिअउ अपन होरिलवा ओछरगवा छोडावहु हे

बहू स्नान करने जा रही है और सास आँखें फाड-फाड कर देख रही है।

सास ने कहा—'हे वहू, तुमने किस छैला से प्रेम किया कि तुम्हारे पैर भारी हो गये। मेरा वेटा तो काशीमें अध्ययन करता है और कडे अनुशासन का क़ायल है। हाय! तुमने किस रसिक से प्रेम किया कि तुम्हारे पैर भारी हो गये।'

वहू ने कहा—'हे सास, यह ठीक है कि तुम्हारा वेटा काशी में अध्ययन करता है और कडे अनुशासन का पावन्द है; लेकिन वह क्षण-भर के ही लिए यहाँ आया और मेरे पैर भारी हो गये।'

फिर वहू ने अपने देवर से कहा—'हे दरवाजे पर वैठे हुए देवर, तुम मेरे स्नेहपात्र हो। एक रेशम की रस्सी वाँट दो। आज मैं अपने वनजारे को क़ैद करूँगी।'

जव आधी रात वीत गई और एक पहर रात शेष रही तो उस नायिका का प्रियतम रेशम की रस्सी में क़ैद हो गया।

वहू ने अपनी सास से कहा—'हे मचिया पर वैठी हुई मेरी सास, तुम मेरी श्रद्धा का पात्र हो। अपने सद्व्रती पुत्र की यह करतूत तो देखो और मेरे सिर का कलंक दूर करो।'

(६)

जाहि वन चनना गहागहि जिरवा अमोघस रे
ललना ताहि वन पइसलन कओन भाय पगिया सम्हारइत रे
माय लागि लयलन चुनरिया वहिनि लागि मोतियन रे
ललना धनि लागि लयलन कगनमा, होरिलवा लागि छुरी दुई रे
माय ज पहिनलन चुनरिया, वहिनि लर मोतियन रे
ललना धनि जे पहिरलन कगनमा, होरिलवा त छुरी लेलन रे
कगना पहिरि भउजि ठाढि भेलि अओरो ने निखरि गेलन रे
ललना पडि गेल ननद मुख डीठ, कगनमा हम ववइया लेवइ रे
मोर पछुअरवा मलहोरिया भाय, तोंहि मोरा हित वसु रे
ललना आनि दे धथुरवा के जड, ननद जी के ओपध हे

बटा-भरि पिअलि बरकि ननदो, बटा-भरि छोटकि ननदो रे
ललना घोय-घाए पिअलि मझलि ननदो तीनो जन बउरयलन्हि हे
इ मति जानु भउजो बउरयलनि कगनमा मोरा बाँचलहे
भउजो दलवो करेजवा पर मूंग, कगनमा हम वधइया लेवौंहे

जिस निबिड़ वन में चन्दन की घनी पक्तियां है, और जीरेके घने और लम्बे गाछ है उसी वन में अमुक भाई अपने सिर की पगडी सम्हालते हुए गये।

वह माँ के लिए चुंदरी, बहन के लिए मोतियों का हार, स्त्री के लिए ककण और अपने नवजात शिशु के लिए चाक़ू उपहार में लाये।

माँ ने चुंदरी ली, बहन ने मोतियों का हार लिया; स्त्री ने ककण पहना और बच्चे ने चाक़ू उपहार में लिया।

जब ककण पहन कर नायिका खडी हुई तो उसके सौन्दर्य्य में निखार आ गया। यह देख कर उसकी ननद ने कहा—'हे भावज, मैं ककण पुरस्कार में लूंगी।'

ननद का यह कथन सुनकर नायिका आग बगूला हो गई। उसने अपने पडोसी माली से कहा—'हे मेरे पिछवाडें बसे हुए माली; तुम मेरे हितचिन्तक हो। मेरी ननद के लिए धतूरे की जड ला दो।'

कटोरा-भर धतूरा पीस कर बडी ननद ने, कटोरा-भर छोटी ननद ने और बचा-खुचा मझली ननद ने पिया। और तीनो नशे में बावली हो गईं।

तब नशे में गर्क उन ननदों ने कहा—'हे भावज, यह मत जानो कि हम नशे में बावली हो गई हैं। हम तुम्हारी छाती पर मूंग दलेंगी और तुमसे बलात् कंकण पुरस्कार लेंगी।'

ननद और भावज में घोडे-भैंसे का-सा वैर है। गीतों में वे बराबर एक दूसरे की दुश्मन रही है, और रहेंगी। जैसे कुम्हार का आँवाँ सुलगता है वैसे ही ननद और भावज के हृदय में ईर्ष्या की चिनगारी डहकती रहती हैं। यद्यपि 'गगनगगनाकारम् सागर सागरोपम' के समान उनकी फूट की उपमा किसी से नहीं दी जा सकती। इस गीत में ननद के लालच और भावज के कमीनेपन की हद हो गई है। ननद-भौजाई की लडाई के मूल कारण गहने

हुआ करते हैं। ननद ने भावज से कंकण पुरस्कार माँगा। भावज ने उसको धतूरे की जड पीस कर पिला दी। यदि हमारी कुलवधुएँ कृत्रिम गहने को ठुकरा कर अपने परिवारवालो को ही अपना गहना समझ लें तो फिर क्या पूछना ?

(१०)

हँसि कय वोललन कओन सुहवे अपना वलमुजी से हे
पिया हे आव ने जाएव अहाँ क सेज त आवे ने दरद ह्यत हे
जनलि जे रामचन्द्र वेटा देता वेटिया जनम लेल्ररे
ललना से हो सुनि सासु रिसिअइलि त अओरो मारय वावलि रे
हमे त जनलि पलंग सुतवो, चरिया सव ठाढि रहतो—
नउरिया पँखा हँकतो रे
ललना टूटले तरैया सासु देलि, अओरो मारे घयलन्हि हे
जनलि जे दगरिन नार छिलति, नचुआ नचएत लोटवा
ववइया देवी रे
ललना अपने सोइरिया अपने नीपव, ववइया अपने राखव हे
वाव जी से लेवो में हथिया त भइया जी से घोडवेओ रे
ललना भउजो से लेवो रतनमाल, त अपने मोडरी नीपव रे

किसी नायिका ने हँसकर अपने प्रियतम से कहा—हे प्रियतम, मै अव तुम्हारी सेज पर कभी नहीं जाऊँगी जिसने कि मुझे फिर प्रसव-वेदना हो। मै जानती थी कि मुझे भगवान वेटा देंगे, लेकिन हाय ! मैने वेटी जनी !'

यह सुनकर नायिका की सास क्रोधित हुई और उसे मारने दौडी।

'हाय! मै जानती थी कि चैन से सुख की सेज पर सोऊँगी। लौंडियाँ हुक्म वजायेंगी, और अदव से पखा झलेंगी। लेकिन हे सखी, मेरी सास ने मुझे ताल के टूटे हुए छज्जे सोने को दिया और मुझे मारने दौडी।

'हे सखी, मै जानती थी कि दगरिन मेरे वच्चे का नाल काटेगी। नर्त्तकियाँ दल वना कर नृत्य करेंगी, और मै उन्हें लोटा पुरस्कार दूगी। लेकिन हाय ? आशा पर पानी फिर गया।

'हे सखी, अब मैं स्वय प्रसव-घर लीपूंगी, और अपना पुरस्कार आप ही लूंगी। पिता से हाथी, भाई से घोडा और हे सखी, भाभी से नगीनें जडा हुआ हार पुरस्कार लूंगी।'

(११)

आठहि मास जब बीतल, नवे अब चढल रे
ललना रे बबुनी के मुंह पियरायल, दह दुबरायल रे
उतरि सावन चढु भादव, चहुं दिशि कादव रे
ललना रे उमडि-घुमडि मेघ गरिजय दामिनि सग रग करि रे
रिमिकि-झिमिकि मेघ झहरय घाट-बाट पिच्छिर रे
ललना रे झिहिरि-झिहिरि बह पछया, उडय मोरा आंचर रे
पहिलि पहर राति बीतल, अओर राति बीतल रे
आरे जागल नगरवा के लोग, पहरू सब जागल रे
दोसर पहर राति बीतल, अओर राति बीतल रे
ललना रे सुतल नगरवा के लोग पहरू सब सूतल रे
तेसर पहर राति बीतल, अओर राति बीतल रे
ललना रे बबुनी जें दरदे बेआकुलि, दगरिन चाहिय रे
दगरिन बसय नदिए केर पार, एतए कोना अडतिउ रे
ललना रे एहि रे अवसर पिया पडतो पलंग सँ उठाय दितों रे
ललना रे अबे न करब अइसन काम, दरद बड जोर भेल रे
ललना रे भिनुसर बबुआ जनम लेल, बरती अनन्द भेल रे
ललना रे एहि रे अवसर पिया पडतो, अँखिया में राखि लितो रे
ललना फेर रे करब अइसन काम, पुतर-फल पाएब रे

सास अपनी नवोढा गर्भवती पतोहू के प्रति उसकी एक सखी को कहती है—

'हे सखी, आठवां महीना बीत गया और नववां महीना चढा। मेरी दुलहिन का मुंह पीला हो रहा है, और शरीर भी क्षीण हो चला।

सावन बीत गया, और भादों भी आ गया। चारो ओर कीचड़-कीचड़

हो गया। हे सखी, बादल उमड-घुमडकर आकाश में गरज रहे हैं, और दामिनी के साथ क्रीडा करते हैं।

देखो, रिमझिम करती हुई बूंदें गिरने लगीं। राह-घाट पिच्छिल हो गये। और पछवाँ हवा के मन्द-मन्द झोंको से मेरा आँचल इधर-उधर उडने लगा।

प्रथम प्रहर रात्रि बीत गई और धीरे-धीरे रात और भी ढलने लगी। लेकिन अभी गाँव के लोग जगे हैं और पहरू भी नहीं सोये।

द्वितीय प्रहर रात्रि भी खत्म हो गई, और रफ़्ता-रफ्ता और भी ढलने लगी। हे सखी, गाँव के सब लोग सो गये, और पहरू भी सो गये।

तृतीय प्रहर रात्रि भी गत हो गई, और धीरे-धीरे और भी बीत चली। हे सखी, मेरी दुलहिन प्रसव-वेदना से आकुल हो उठी है। उसकी देख-रेख के लिए एक चतुर चमारिन की जरूरत है।'

उसकी सखी ने कहा—'चमारिन तो दूर—नदी के उस पार रहती है। अभी यहाँ कैसे आयेगी?'

चमारिन के नहीं आ सकने की बात सुन कर नायिका जो प्रसव-वेदना से आकुल है, झुंझला उठती है; और अपनी उस सखी से कहती है—

'हे सखी, यदि मैं इस समय अपने प्रियतम को पाती तो उन्हें पलग से उठा देती। अब मैं फिर कभी ऐसा काम नहीं करूँगी, जिससे मुझे यह प्रसव-वेदना सहनी पडे।'

सुबह होती है। नायिका के पुत्र पैदा होता है। पृथिवी खिल उठती है। नायिका कहती है—

'यदि मैं इस वक्त अपने प्रियतम को पाऊँ तो अपनी आँखों में रख लूँ। हे सखी, मैं फिर वैसा ही काम करूँगी, जिससे कि मुझे पुत्र-रूपी फल की प्राप्ति हो।'

(१२)

विरह अगम जल धार, बहत निशि-वासर हे
ललना यहो दुख काहि सुनावौं, केहु त नाहि आपन हे

नाग सुतल नागिन जगाओल बेनिया डुलावत हे
केकर आँख केर पुतरि केकर तोहि बालक हे
ललना कौन काज अयलौं पताल कहाँ रे कय जायव हे
देवकी क आँख के पुतरिया नन्द जी के बालक हे
ललना गेरुआ कारन अयल पताल गोकुल कए जायव हे
भागिए बालक तोहिं जाहुअ दया मोरा लागय हे
बालक नगवा छोडत फुफुकार भसम होय जायव हे
नगवा नथवौ के कुसुम डोरि गेरुआ लदाएव हे
नागिन पिठिय होएव असवार गोखुल कए जायव हे
कर जोरि नागिनि मिनति करू अओरो मिनति करू हे
बालक सेनुर राखु ने हमार गोखुल जायव हे

हे सखी, कदम का छोटा गाछ है। उसके नीचे श्रीकृष्ण खडे हैं, और फूल के गेंद से खेल रहे हैं।

खेलते-खेलते गेंद आसमान में उडा, और पाताल मे गिरा। गेंद लाने के लिए श्रीकृष्ण ने जमुना मे डुब्बी मारी, जहाँ नाग सोया था, और नागिन पखा झल रही थी।

नागिन ने पूछा—'हे बालक, तुम किसकी आँखो की पुतली हो? किसके पुत्र हो? यहाँ क्यो आये हो? और कहाँ जाओगे?'

कृष्ण ने कहा—'हे नागिन, मै देवकी की आँखों की पुतली हूँ। नन्द का पुत्र हूँ। यहाँ गेंद लेने आया हूँ, और गोकुल जाऊँगा।'

नागिन ने कहा—'हे बालक, तुम लौट जाओ। मुझे तुझपर दया आती है। जब नाग उठकर फूत्कार छोडेगा तब तुम जलकर भस्म हो जाओगे।'

कृष्ण ने उत्तर दिया–'हे नागिन, मै नाग को फूल की डोरी से नाथूँगा उस पर गेंद लादूँगा, और उसकी पीठ पर सवार होकर गोकुल जाऊँगा।

नागिन ने कहा—'हे कृष्ण, मै तुमसे प्रार्थना करती हूँ। तुम मेरी माँग के सिन्दूर की लाज रख लो, और नाग को गोकुल मत ले जाओ।'

सोहर

(१५)

नदी जमुना जी कें तीर त देवकि रुदन करु हे
ललना मरबो जहर विस खाय त जनम अकारथ हे
तखन जे बोलल जमुना जी करेकल मारत हे
ललना हरसि करुअ असनान हरसि घर जाहुअ हे
पहिलि सपन देवकि देखल पहिलि पहर राति हे
ललना कोमल वाँस केर कोपर अगन विच जनमल हे
दोसर सपन देवकि देखल दोसर पहर राति हे
ललना सुन्दर कमल केर फूल विधाता मोरा देलन्हि हे
तेसर सपन देवकि देखल तेसर पहर राति हे
ललना सुन्दर दह पनिया जनमल जुरन बिनु कोन देल हे
आधि राति वितल पहर राति अओर भिनुसर राति हे
ललना देवकि के भेल नन्दलाल अमरित फल पावल हे

यमुना के किनारे देवकी विलाप कर रही है—
'हे सखी, मैं गरल-पान कर अपने प्राण का अन्त कर
मैंने व्यर्थ जीवन-धारण किया।'
यह सुनकर यमुना ने कहा—
'हे देवकी, तुम प्रसन्न-चित्त से मेरी जलधारा में स्न
खुशी-खुशी घर जाओ।'
जब प्रथम प्रहर रात बीत गई तब देवकी ने एक
'आँगन में बाँस की एक हरी कोंपल उगी है।'
जब दूसरी प्रहर रात गत हुई तब देवकी ने एक
'ईश्वर ने मुझे एक सुन्दर कमल का फूल दिया
... प्रहर रात बीत गई तब देवकी ने एक
... जल वि

आधी रात बीत गई। एक पहर रात बची। जब सुबह हुई तब देवकी ने एक पुत्र जना।

(१६)

गोखुला मे नन्द कें लाल मधुर बंशी बजाय हे
ललना नाचि-नाचि बसिया बजावय गोपि के रिझाबय हे
जमुना कें शीतल बेअरिया कदम जुरि छँहियान हे
ललना वृन्दावन मे मोरवा जे नाचए कोयलि कुहुकय हे
ललना कृष्ण के सीस पै मुकुटवा अति छवि सोहय हे
ललना हरे-हरे बाँस क बँसुलिया अधर विच सोहय हे
गले विच मोतियन मलवा नयन विच काजर हे
ललना राधे जुगुल सोहय जोरी त मदन गोपालय हे
ललना हुनक चरन-पद गाबिय जनम-फल पाबिय हे

गोकुल में नन्द के पुत्र कृष्ण मधुर स्वर में बंशी बजा रहे हैं।

हे सखी, कृष्ण नाच-नाच कर बंशी बजाते हैं, और गोपियो को रिझाते हैं।

अहा! यमुना की शीतल हवा और कदम की ठंडी छाँह कितनी सुखद है!

हे सखी, वृन्दावन में मयूर नृत्य करता है, और कोयल 'कुहु-कुहु' कूकती है।

कृष्ण के सिर पर मुकुट सुशोभित है, जो अति आकर्षक प्रतीत होता है। उनके दोनो होठों के बीच हरे बाँस की बाँसुरी शोभा देती है। उनके गले में मोतियों का हार है, और आँखों में काजल।

हे सखी, राधा और मदनमोहन श्रीकृष्ण की यह युगल जोडी कैसी खिल रही है। हम क्यों न उनके चरण-कमल की वन्दना करें और अपने अभीष्ट को पावें।

(१७)

नन्द घर डका वाजए सुख उपजावय रे ललना
जनमल श्री यदुनाथ कि नयन जुरायल रे
आयल उवटन, तेल, ककहिया, काजर रे ललना
होरिला लहुरवा के दूध के हुलसि पिआएव रे
लहरत लाल पटोर पहिनि घर जायव रे ललना
नृत्य करय नट नागरि सब गुन आगरि रे
वाजूवन्द वेसरि पैंजनी रुनुझुनु वाजय रे ललना
अकम पुलकि लगाय कि पलना झुलाएव रे
लेव निछावर नन्द जी सो हैत गज रथ मणि रे ललना
केओ सुपारी पान कि सुवरनक वेसरि रे

हे सखी, नंद के घर डका वज रहा है जिसे सुन कर हृदय गद्‌गद हो रहा है।

आज श्रीकृष्ण का जन्म हुआ है। हमारे नयन जुड़ा गये।

हे सखी, उवटन, तेल, कंघी, काजल आदि सभी उपयुक्त सामान शिशु श्रीकृष्ण का शृंगार करने के लिये लाये गये।

नवजात शिशु को हुलस कर दूध पिलाऊँगी, और लहराते हुए लाल पटोर पहन कर घर जाऊँगी।

शिशु-जन्म के उत्सव में सर्वगुण-सम्पन्न सुन्दरी नर्त्तकियां नन्द के घर नृत्य करने लगीं। उनकी बांहो में वाजूवन्द और नाक में वेसर है तथा उनके पैर की पैंजनी रुनझुन वज रही है।

हे सखी, प्रसन्न होकर शिशु को छाती से लगाऊँगी, और उसे पालने पर झुलाऊँगी। नन्द से हाथी, रत्न और मणि निछावर लूँगी। हमारी हमजोलियों में किसी को तो पान और सुपारी मिलेगी, और किसी को सोने की नथ।

(१८)

उतरि साजोन चढ़ु भादव चहुँ दिशि कादव रे ललना
मेघवा झरी लगावे कि दामिनि दमसय रे

जब जनमल यदुनन्दन कस निकन्दन रे ललना
छूटि गेल वज्र कपाट पहरू सब मूतल रे
शख चक्र गदा पद्म देवकी देखल रे ललना
आजु सुदिन दिन भेल कृष्ण अवतारल रे
कोर कै लेल वसुदेव कि यमुना उछलि बहु रे ललना
चरण देल छुआय नन्द घर पहुँचल रे
नन्द भवन आनन्द भेल यसुमति जागल रे ललना
सूर श्याम बलि जाय कि मगल गाओल रे

श्रावण का महीना बीत गया। भादों आ पहुँचा। चारों तरफ कीचड़-ही कीचड़ दीखने लगा।

हे सखी, मेघ मूसलाधार बरस रहा है। बिजली कौंध रही है।

जब कस-निकन्दन श्रीकृष्ण का जन्म हुआ तब बन्दीखाने का वज्र-कपाट स्वय खुल गया, और पहरू खर्राटे लेने लगे।

हे सखी, देवकी ने शख, चक्र, गदा और पद्मधारी श्रीकृष्ण को जी-भर कर देखा। सचमुच आज का दिन कितना मगलमय है कि श्रीकृष्ण पृथ्वी पर अवतरित हुए।

वसुदेव श्रीकृष्ण को गोद में लेकर नन्द के घर गये। रास्ते में यमुना तरगित हो उन्हें डुबोने लगी। हे सखी, यह देख कर श्रीकृष्ण ने यमुना को अपने कोमल चरणों का स्पर्श करा दिया, और वसुदेव नन्द के घर निर्विघ्न पहुँच गये।

नन्द के घर आनन्द मनाया जाने लगा। यशोदा की नींद टूट गई। कवि 'सूर श्याम' कहता है—'हे सखी, मैं श्रीकृष्ण की बलैया लूँ कि उनके जन्मोत्सव पर यह मंगल गाया गया।'

ऊपर का गीत मुजफ्फरपुर के पूर्वी भाग के गाँवों में प्रचलित है। दरभगा जिला के गाँवों में यह इस रूप में प्रचलित है—

उतरि साओन चढ़ु भादव चहुँ दिशि कादव रे ललना
मेघवा झरी लगावै कि दामिनि दमकय रे

रिमिकि झिमिकि वुन्द वरिसय दादुर हर्षित रे ललना
देवकी वेदन वेयाकुलि दगरिनि आनिय रे
एतय कहाँ दगरिनि पाविय विधि सो मनाविय रे ललना
यमुना निकट एक गाम जतय वसु दगरिनि रे
जव जनमल यदुनन्दन वन्धन छूटल रे ललना
फुजि गेल वज्र केंवाड पहरू सव सूतल रे
क्रीट मुकुट श्रुति कुण्डल ओढन पिताम्वर रे ललना
देवकी गेलिहि डराय की दैव देलन्हि रे
जनु तोहें देवकि डराय जनु पछतावह रे ललना
इहो रे वालक दुखमोचन जगत निरजन रे
रामनाथ कवि गाओल गावि सुनाओल रे ललना
गोकुल भेल उछाह कृष्ण जी जनमल रे

कहीं-कहीं यह गीत इस प्रकार भी गाया जाता है—

उतरि साओन चढु भादव चहुँ दिशि कादव रे ललना
दामिनि दमकि सुनावय दादुर हर्षित रे
पहिलि पहर जव वीतल पहरू सूतल रे ललना
सूतल नगरक लोक क्यों नहि जागल रे
दोसर पहर केर वितितहि पहरू जागल रे ललना
देवकी वेदने व्याकुलि कि दगरिनि आनिय रे
एतय कत दगरिनि पाविय विधि सौं मनाविय रे ललना
पुरविल जनम तप चुकलहुँ तें दुख पाओल रे
जव जनमल यदुनन्दन वधन छूटल रे ललना
जनमल त्रिभुवननाथ अनायक पालक रे
वालक हाथ हम देखल शख चक्र गदा पकज रे ललना
गर वैजन्ती माल कान शोभे कुण्डल रे
जखन कृष्ण भेल गोविन्द वसुदेव लय सिधारल रे ललना
यमुना तीर अथाह थाह नहि पाविय रे

तखन कृष्ण भेल कोपित यमुना डराइलि रे ललना
क्षमिअ मोर अपराध पार निके जाह रे
मोदनाथ[1] कवि गाओल गावि सुनाओल रे ललना
धनि यसुमति तोर भाग प्रभु पुत पाओल रे

(१६)

चार चउखटिया के वलमु पोखरिया विचे चनन केर गाछ
ललना दतवन करँ राजा रामचन्द्र नउआ मुख डिठ परू रे
कहमा के छे तुहुँ नउआ त केहि पाँति लिखल रे
ललना रे किनकहिं भेल नन्दलाल त किनका अनन्द भेल रे
वन के त छिकि हम हजमा सितए पाँति लिखल रे
ललना सीता कें भेल नन्दलाल कि मुनि-घर अनन्द भेल रे
कोशिला रानी देलथिन मुनरिया सुमितरा गिरमलहारनु रे
ललना लछुमन देल सिर कें पगिया कि नगर लोग जय बोलु हे
घर पछुअरवा सोनरवा भइया तोंहि मोरा हित वसु रे
ललना रे डाला-भरि सोना तोंहि देवओ कान कुडल गढि देहु रे
सूरहिदास सोहर गावल गाविक सुनाओल रे
ललना एको सओख नहि पूरल राम घर नीर भेल रे

हे बालम, चार कोन का चौकोन पोखरा है। उसके बीच में चन्दन का गाछ है। उसके किनारे बैठ कर राजा राम दातुन करते हैं। सहसा उनकी दृष्टि नाई पर पडती है। राम पूछते हैं—

'हे नाई, तुम किस देश के रहनेवाले हो ? यह चिट्ठी किसने दी है ? किस सौभाग्यवती ने पुत्र जना है ? और किसके घर उत्सव हो रहा है ?'

---

१ प० मोदनाथ झा उजान ग्रामवासी थे। आज से साठ वर्ष पूर्व वह श्रोत्रिय कुल में उत्पन्न हुए थे। आप सस्कृत के उच्चकोटि के विद्वान थे।

नाई ने कहा—'हे राम, मैं वन का वाशिन्दा हूँ। सीता ने यह चिट्ठी दी है। सौभाग्यवती सीता ने पुत्र जना है, और मुनि वाल्मीकि के आश्रम में उत्सव हो रहा है।'

जब यह खबर कौशल्या को मिली तो उसने नाई को पुरस्कार में अँगूठी दी। सुमित्रा ने मोतियों के हार दिये। लक्ष्मण ने सिर की पगडी दी, और गाँव के लोगों ने 'जय! जय' के नारे बुलन्द किये।

कौशल्या ने कहा—'हे घर के पिछवाडे बसे हुए सोनार, तुम मेरे हितू हो। मैं तुम्हें डाला-भर सोना पुरस्कार दूँगी। तुम सीता के नवजात शिशु के कान के कुंडल गढ दो।'

'सूरदास' ने यह 'सोहर' गाया है, और गाकर लोगों को सुनाया है। हे सखी, सीता के बिना अयोध्यावासियों की एक भी साध पूरी न हुई, और राम का घर उजाड हो गया।

(२०)

घरवा जे निपलो गोवरसए अमोरा धरि ठाढि भेलओ रे
ललना हेरथि नइहरवा कें बाट त भइयो नहि आएल रे
ललना सामु मोर गेलथिन्ह दाल दरर ननद मोर पानी भरय रे
ललना असगर प्रभु छेकलन दुअरिया कि हमें तोहि असगर रे
खन–खन दाढि धरथि खन–खन पइयाँ परथि खन–खन रे
ललना चलु धनि लाल रे पलगिया कि हमें तोहिं बिहुँसब रे
खेलिते–खुलइते मोहिं कें नीक लागु आओरो मे खूब लागु रे
ललना रे दिने-दिने देह गढआएल मुँह पियरायल रे
एक मास बितल दोसर मास अओरो तेसर मास रे
ललना रे चउठे पचम मास बीतल देह गढआयल रे
छओ महीना राम बिति गेल छवो अग भारि भेल रे
ललना घनमा के भतवो न सुहाय त दाल देखि हुलि आवय रे

सातो महीना राम विति ेल सातो अग भार भेल रे
ललना रे निठुरि बढनिया कोना छूअव विपति कोना काटव रे
ललना आठों महिनमा मोहि विति गेल आठो अग भार भेल रे
ललना रे डँडवा क चिरवा खरकि गेल कोना कय वान्हुअ रे
नवो महिनमा हमरो क विति गेल नवो अग भारि भेल रे
ललना डँडवा सँ उठल वेदनमा त केहि के जगाएव रे
सासु मोरा सुतल असोरवा ननद गज भीतर रे
ललना हुनि प्रभु सुतल मदिरवा त कइसे क जगाउअ रे
चूरा फेंकि मारलौं पएरिया अओरो गहनमा फेंकि रे
ललना एतना अभरनमा फेंकि मारलौं दहिजरवो नहि उठल रे
एमकि वेदनमा हम काटव गोसइया गोर लागव रे
ललना फेर ने करव अइसन काम पिया सेजि जायव रे

कोई नायिका गोवर से घर लीप कर ओसारे पर खडी है, और अपनी सखी से कहती है—

'हे सखी, मै नैहर जाने की आकुल प्रतीक्षा में हूँ। न जाने क्यो मेरा भाई अब तक मुझे विदा कराने नहीं आया।

'हे सखी, मेरी सास दाल दलने गई, और ननद जल भरने। मुझे अकेली देख कर प्रियतम ने मेरी राह रोक ली। वह कभी मेरी ठुड्ढी पकडने लगे, कभी मेरे पैर और कभी दडवत लेट कर अनुनय-विनय करने लगे—

'हे प्रियतमे, चलो हम लाल पलग पर क्रीडा करें।'

इस प्रकार उनके साथ हँसी-खेल में ही मेरा मौजी मन उलझ गया। धीरे-धीरे मेरे पैर भारी हो चले। मुँह पीला हो गया।

एक महीना बीता। दूसरा महीना बीता। तीसरा महीना बीत गया। हे सखी, जब चौथे और पाँचवें महीने भी बीत गये तो मेरा शरीर शिथिल होने लगा।

धीरे-धीरे छठा महीना भी बीत गया। मेरे अग-प्रत्यग भारी हो गये। चावल खाते-खाते तबीयत ऊब गई, और दाल देखकर जी मिचलाने लगा।

सातवाँ महीना बीता। मेरे सातों अंग भारी हो गये। हे सखी, मैं झुक कर आँगन कैसे बुहारूँ, और कहो ये पहाड़-से दिन-रात कैसे काटूँ ?

आठवाँ महीना बीता। मेरे आठों अंग भारी हो गये। कमर की चुँदरी खिसकने लगी। हे सखी, अब उसे किस तरह सम्हाल कर रक्खूँ ?

नववाँ महीना बीत चला। मेरे नवों अंग भारी हो गये। सहसा कमर में जोरों का दर्द उठा। हाय ! इस कुसमय में मैं किसे जगाऊँ ? मेरी सास ओसारे पर सोई है। ननद घर के भीतर और मेरे प्रियतम रंगमहल में सोये हैं।

कलाई की चूड़ियाँ और शरीर के अन्य गहने बार-बार फेंक कर उन्हें मारती हूँ जिससे उनकी आँखें खुल जायें। किन्तु, उनकी कुम्भकर्णी नींद नहीं टूटती।

काश, इस बार इस विपत्ति से छुटकारा मिला तो देव-पितर पूजूँगी, और कभी प्रियतम की सेज पर नहीं जाऊँगी जिससे कि यह प्रसव-वेदना सहनी पड़े।

(२१)

ककर अँखिया बरोबरे, ककर नामि-नामि केश
ककर पिया परदेश गेल, ककर अलप वयस
राम जी कें अँखिया बरोबरे, सीता कें नामि-नामि केश
सीता कें पिया परदेश गेल, सीता के अलप वयस
सुनु लछमन देवरे सुनु, देवर वचन हमार
ककरा झरोखा चढि बइसव, बिसरि जयता श्रीराम
सुनु-सुनु सीता भउजो हे, सुनु भउजो वचन हमार
बबा के झरोखा चढि बइसव, बिसरि जयता श्रीराम
सुनु-सुनु लछमन देवरे, सुनु देवरे वचन हमार
के मोरा अयोध्या देखायत, के मोरा राखत मान
ककरहिं कोरा पइसि सुतवाँ, बिसरि जयता श्रीराम
सुनु-सुनु सीता भउजो हे, सुनु भउजो वचन हमार

हमें तोंहि अयोध्या देखायव, गोतिनि राखत तोहर मान
अम्मा के कोरा पइसि सुतवह,हे बिसरि जयता श्रीराम
सुनु-सुनु लछमन देवरे, सुनु देवरे वचन हमार
कथिए कें ओगठन गेरुला कथिए कें ओगठन भाय
घइलि कें ओगठन गेरुला, वहिनि कें ओगठन भाय
कतय सँ अयता नउआ दउरि-दउरि कतय सँवतिसो कहार
कतय सँ अयताह कओन भइया, जिनि भइया डोलि क सिंगार
नइहर सँ अयता नउआ दउरि-दउरि, नइहर सँ वतिसो कहार
नइहर सँ अयताह कवन भइया, जिनि भइया डोलि क सिंगार

'किसकी आँखें बडी-वडी हैं? किसके लम्वे-लम्वे केश? किसके प्रियतम प्रवासी हैं? और किसकी उम्र कच्ची है?'

'राम की आँखें वडी-बडी हैं? सीता के लम्वे-लम्वे केश। सीता के प्रियतम प्रवासी हैं, और सीता की वयस कच्ची है'

'हे देवर लक्ष्मण, सुनो। मैं किसके झरोखा चढ़ कर बैठूं कि प्रवासी राम को क्षण-भर के लिये भूल जाऊँ।'

'हे भावज सीता, सुनो। तुम पिता के झरोखा चढ कर बैठो, और प्रवासी राम की याद क्षण-भर के लिए भूल जाओ।'

'हे देवर लक्ष्मण, सुनो। कौन मुझे अयोध्या ले चलेगा? कौन मेरी देख-भाल करेगा? मैं किसकी गोद में सोऊँ कि जिससे प्रवासी राम की याद क्षणभर के लिए भूल जाऊँ?'

'हे भावज सीता, सुनो। मैं तुम्हें अयोध्या ले चलूँगा। तुम्हारी गोतिनी तुम्हारी देख-भाल करेंगी। तबीयत हल्की करने के लिए तुम माँ की गोद में सो जाया करो, और प्रवासी राम की याद क्षण-भर के लिए भूल जाओ।'

'हे देवर लक्ष्मण, सुनो। किस वस्तु का, उठँगन गेरुला है? और किस वस्तु का उठँगन भाई?'

'घडा का उठँगन गेरुला है, और बहिन का उठँगन भाई।'

'कहां से नाई दौड-दौड कर निमंत्रण लायेगा ? कहां से वत्तीस कहार आयेंगे ? और कहां से मेरे अमुक भाई आयेंगे, जो मेरी डोली के शृंगार है।'

'नैहर से नाई दौड-दौड कर निमत्रण लायेगा ? नैहर से वत्तीस कहार आयेंगे, और नैहर से ही तुम्हारे अमुक भाई आयेंगे जो कि तुम्हारी डोली के शृंगार है।'

(२२)

तलफि-तलफि उठय जियरा कोना विधि बोधव हे
ललना हमरो पिया परदेश उदेश न पाओल हे
चांदनी रात इजोरिया से भेल अँधेरियान हे
ललना पापि रे पपीहा आधि रात त 'पिउ-पिउ' सुनावल हे
सूतल रहि में सेजिया त निंदियो ने आवय हे
ललना चमकि-चमकि उठै गात हिया मोय शूल चुभय हे
कोइ नहिं संग-सहेलिनि घरवा अकेलिन हे
ललना छिनहिं वाहर छिन भीतर वलमु विरहमेन हे
धीर धरू अचल सोहागिनि सासु समुझावहिं हे
ललना तोहर वलमु फिरि अयताह मास कुँवारहिं हे

हे सखी, मेरा जी रह-रह कर तलफ उठता है। मैं उसे किस तरह सान्त्वना दूं ? मेरे प्रियतम प्रवास में हैं। उनकी कोई खवर नहीं मिली।

चांदनी रात अँधेरी हो गई। और हे सखी, यह पापी पपीहा आधी-आधी रात को (वडी सुरीली ध्वनि में) 'पी कहां ? पी कहां ?' की रट लगाता है।

'मैं सेज पर सोई थी, लेकिन नींद नहीं आई। हे सखी, मेरा शरीर जाने क्यों अनायास ही चौंक उठता है, और हृदय में कुछ शूल-सा चुभ रहा है।

'मैं घर में अकेली हूं। साथ में कोई नहीं है। हे सखी, मैं प्रियतम की जुदाई में कभी घर के वाहर और कभी भीतर पगली-सी दौड रही हूं।'

सास कहती है—हे चिर सुहागिन, तुम धीरज धरो। क्वार में तुम्हारे प्रियतम वापिस आयेंगे।'

(२३)

पुरइन कहए हम पसरव अपने रग पसरव हे ललना
पसरव देवकी के आगन अपने रग पसरव हे
दुभिया कहए हम चतरव अपने रग चतरव हे ललना
चतरव देवकी के आगन अपने रग चतरव हे
वजना कहए हम वाजव अपने रग हे ललना
वाजव देवकी क अँगना अपने रग वाजव हे
हरदी कहए हम रगव अपने रग रगव हे ललना
रगवों देवकी के चुदर अपने रग रगव हे

पुरइन—'मैं खिलूंगी। मैं अपने स्वाभाविक रूप में खिलूंगी। देवकी के आँगन में मैं अपने प्राकृत रूप में खिलूंगी।'

दूब—'मैं चतरूँगी। मैं अपने स्वाभाविक रूप में चतरूँगी। देवकी के आँगन में मैं अपने सहज रूप में चतरूँगी।'

वाजा—'मैं बजूंगा। मैं अपनी स्वाभाविक लयध्वनि में बजूंगा। मैं देवकी के आँगन में स्वाभाविक लयध्वनि में बजूंगा।'

हलदी—'मैं रँगूंगी। मैं अपने स्वाभाविक रग में रँगूंगी। मैं देवकी की चुंदरी अपने सहज रूप में रँग दूंगी।'

(२४)

काहु घर देलन राम दुइ-चार काहु घर दश-पाँच रे ललना
हमरहुँ वेरिया राम भुललन हमर कओन गत हे
सासु के तोहि नकारल ननद थुकारल रे ललना
भँइसुर के लाँघल छँहिया तेहि रे राम भोर गेलन हे
सासु के आरति उतारव ननदि दुलारव रे ललना
भँइसुर के कर जोरि मिनति अव राम बुझतन हे

राम ने किसी को दो-चार दिये और किसी को दस-पाँच। लेकिन हे सखी, जब हमारी बारी आई तो उन्होंने आँखें मूंद लीं। हाय! हमारी क्या दशा होगी?

'हे सखी, तुमने अपनी सास की बेअदबी की। ननद का तिरस्कार किया, और अपने भैंसुर की छाया का लंघन किया। इसीलिए राम ने तुम्हारी सुधि नहीं ली।'

'हे सखी, अब मैं सास की आरती उतारूँगी। ननद को प्यार करूँगी, और अपने भैंसुर की प्रतिष्ठा का ख़याल रखूँगी। आशा है, अब राम मुझ पर अनुग्रह करेंगे।'

(२५)

उगइत आवथि किरनिया त झहरइत बादर रे ललना
बारह वरिस पर पिया अयलन त धनियो ने बोलय हे
किय तोंहि अम्मा मारल धनि गरियाओल रे ललना
कथिए के मातलि बहुरिया धनियो ने बोलय हे
नइ हम धनिया के मारल नइ त तुकारल रे ललना
तोर धनि विरहा के मातल तेंहि ते न बोलथि हे
घर पछुअरवा सोनार भइया तोंहि मोरा हित बसु रे ललना
गढि देहि धनि जोग सिकरिया धनियो ने बोलय हे
घर पछुअरवा रगरेज भइया तोहि हित बसु रे ललना
रग देहि धनि जोग चुनरिया धनियो न बोलय हे
कांख जांति लेलन राजा चुदरि हथिआन लेलन रे ललना
चलि भेलन धनिया मनावय धनियो न बोलय हे
अहाँक चुदरिया राजा भइया पैन्हथि सिकरिया बहिनि पेन्हयु रे ललना
राजा हम त बचनिया क भूखल दरशन चाहिय हे

प्रकाश बिखेरती हुई किरणें आ रही हैं। झहरते हुए मेघ आ रहे हैं। आज बारह वर्षों के बाद किसी विरहिणी का परदेशी साजन घर लौटा है। किन्तु, वह प्रियतम से सीधे मुंह बोलती तक नहीं।

'हे माँ, क्या तुमने अपनी पतोहू को पीटा या अकारण गाली दी ? जाने वह क्यों इस तरह रूठ बैठी है कि मुझसे सीधे मुँह नहीं बोलती।'

'हे पुत्र, न तो मैंने तुम्हारी प्रिया को पीटा। न अकारण गाली दी। सच तो यह है कि तुम्हारी प्रिया विरह से मतवाली है। यही कारण है कि वह तुझसे सीधे मुँह नहीं बोलती।'

'हे मेरे घर के पिछवाडे बसे हुए सोनार, तुम मेरा हितू हो। मेरी प्रिया मुझसे रूठ गई है। तुम उसके लिए एक अच्छी-सी सिकडी गढ़ दो।'

'हे मेरे घर के पिछवाडे बसे हुए रँगरेज, तुम मेरा हितू हो। मेरी प्रिया मुझसे रूठ गई है। तुम उसके लिए एक सुन्दर चुँदरी रग दो।'

सिकडी और चुँदरी लेकर परदेशी अपनी रूठी प्रिया को मनाने चला।

'हे राजा, तुम्हारी यह चुँदरी तुम्हारा भाई पहने, और यह सिकडी तुम अपनी बहन को पहना दो। मैं तो तुम्हारे प्रेम की भूखी हूँ। गहने लेकर क्या करूँ? मुझे तो सिर्फ तुम्हारे दर्शन चाहिये।'

(२६)

घर से बोललथिन कओन देइ
प्रभु हे आव ने सुतब अहाँक सग कि रतिया उखम लागु हे
बोझि देवौ जिरवा के बोरसि लओग के पाचक हे
धनि हे लेसि देवौं मानिक दियरा कि रतिया सुखम लागु हे
जरि जयता जिरवा के बोरसि लओगक पाचक हे
प्रभु हे जरि जयता मानिक दियरा कि रतिया उखम लागु हे
पिठि लागल सुतथि ननदिया देहरि पै सासु बइसि हे
धनि दुअरे बइसत कोतवाल कि रतिया सुखम लागु हे
भुलि जइति पिठि लागल ननदि देहरिया पर सासु जी हे
प्रभु भुलि जयता दुअर कोतवाल रतिया उखम लागु हे
जँओ हम जनितउँ कोन राय कोर सुततन दुलार करतन हे
ललना हँसि खेलि सोएवो सेजरिया कि रतिया सुखमु लागु हे

नायिका अपने प्रियतम से कह रही है—

'ओ प्रियतम, मैं अब तुम्हारे साथ नहीं सोऊँगी। रात बहुत उष्ण प्रतीत होती है।'

'हे प्रिये, जीरे की अगीठी जला दूंगा। लौंग भास्कर चूर्ण बनवा दूंगा। तुम्हारे शयन-मन्दिर में माणिक दीप जलाऊँगा जिससे तुम्हें रात शीतल प्रतीत होगी।'

'ओ प्रियतम, जीरे की अंगीठी जल जायगी। लौंग भास्कर चूर्ण समाप्त हो जायगा। माणिक दीप बुझ जायगा, और फिर रात उष्ण प्रतीत होगी।'

'हे प्रिये, तुम्हारी ननद तुम्हारे साथ सोयेगी। देहली पर सास सोयेगी। दरवाजे पर तुम्हारी देख-भाल के लिए कोतवाल पहरा देगा और रात शीतल हो जायगी।'

'ओ प्रियतम, साथ में सोई हुई ननद बिछुड जायगी। देहली पर सोई हुई सास मुझे भूल जायगी। दरवाजे पर बैठा हुआ कोतवाल ऊँघने लगेगा, और फिर रात उष्ण हो जायगी।

यदि मैं तुम्हारी गोद में लेट कर सोऊँ, और तुम मुझे प्यार करो, तब मैं सेज पर आनन्दपूर्वक सोऊँगी, और मुझे रात शीतल प्रतीत होगी।'

(२७)

पान अइसन पिया पातर फुलवा अइसन सुकुमार हे
से हो पिया देखलों फुलवरिया मलिनिया सग विहँसथि हे
आहे आहे भइया कओन भइया अओर कओन भइया हे
कसिएक बान्हु बहिनोइया मलिनिया सग विहुसथि हे
बान्हल पिया करजोरिया करे अओर मिनतिया करे हे
धनि अब ने जायब फुलवरिया मलिनिया सग ने विहुँसब हे
आहे भइया आहे भइया कओन भइया अओर कओन भइया हे
फुलके बान्हु बहनोइया बहनोइया सुकुमार छथुन हे

आगे आगे बहिनो कओन बहिनो तु त कलजुग लयल हे
अपन पिया अपने बन्हवयलह पाछु पछतावल हे

मेरे सजन पान की तरह पातर और फूल की तरह कोमल हैं।

हे सखी, ऐसे सलोने सजन को मैंने फूल के बगीचे में मालिन के साथ आँखें लड़ाते हुए देखा।

'ओ मेरे अमुक भाई, अपने बहनोई (मेरे सजन) को जरा कस कर बांधना। वह फूल के बगीचे में मालिन के साथ आँखें लड़ाया करते हैं।'

रस्से में बँधा हुआ नायिका का सजन अपनी प्रिया से आरजू-मिन्नत कर रहा है—

'हे प्रिये, अब मैं फूल के बगीचे में नहीं जाऊँगा, और न मालिन के साथ आखें लड़ाऊँगा।'

'ओ मेरे अमुक भाई, मेरे सजन का बन्धन जरा ढीला कर देना। वह अत्यन्त कोमल है।'

'ओ बहन, तुमने प्रत्यक्ष कलयुग ला दिया। तुमने स्वय अपने प्रियतम को बँधवाया, और अब आंसू पोंछ रही हो।'

(२८)

पातर धनि पतरयलन्हि कुसुम रग चुदर रे
ललना चुदरि के धएलन्हि पलग पर अओर पलग पर हे
ललना तकिया बलमु जी क छतिया आयल सुख निनियो हे
भेल परात पओ फाटल चुचुहिया बोलय लागल रे
ललना छाड़ु-छाड़ प्रभु मोरा आँचर पनिया के जायब हे
किय अहाँ धइलि अँचरवा त अँचरा भयावन हे
होरिला जनम जब हयत त अँचरा सोहावन हे
पलगा सुतलि अहाँ देवर अओर लेहुर देवर हे
देवरा बोलिया के करु न विचार पुरुख बोलि मारल हे

भउजो हथवा में लेलन्हि अछत अओर वेलपतर हे
भउजो सुति उठि सुरुज मनइहा सुरुज तोरा पुत देथु हे
सुरुज मनावहुँ ने पयलि सुरुज मोरा पुत देल हे
देओर जनमल हमरा होरिलवा वहिनि कें ओठगन हे

पतरी कमरवाली नायिका दिन-दिन पतराती गई। उसकी पतरी कमर में कुसुम रंग की चुंदरी है। उसने अपनी चुंदरी पलग पर रख दी।

प्रियतम के वक्षस्थल—गल-तकिया को सिरहाने रख कर नायिका शीघ्र सुख की नींद सो गई। सुवह हुई। पौ फटी। चुचुहिया वोलने लगी।

'ओ प्रियतम, तुम मेरा आँचल छोड दो। मेरा आँचल मलिन लगता है। मैं जल भरने जाऊँगी।'

'हे प्रिये, जव तुम पुत्र जनोगी तव तुम्हारा आँचल सुहावना लगेगा।'

'पलग पर सोये हुए ओ छोटे देवर, तुम जरा उनकी वोली पर गौर तो करो। मेरे प्रियतम ने मुझे वोली की गोली मारी है।'

'ओ री भावज, अक्षत और विल्व-पत्र से तुम नित्य प्रातःकाल सूर्य्य की पूजा करो। तुम्हारी मनोकामना पूरी होगी।'

मैंने सूर्य्य की पूजा भी नहीं की, और सूर्य्यदेव ने मुझे पुत्र दिये।

हे देवर, मैंने पुत्र जना है, जो तुम्हारी वहन के मनोरजन का कारण होगा।'

(२६)

आँगन मे ठाढि पिया पिरा हरय आँगन में
दउरि-दउरि जाय पिया भइया वोलाय लाय
चलु-चलु हमार घर देवता पुजय
दउरि-दउरि जाय पिआ गोतिनि वुलाए लाय
चलु-चलु हमार घर छठि पुजय आँगन में
आँगन में ठाढि पिया दरदा हरय आँगन में
दउरि-दउरि जाय पिया वहिनि वोलाय लाय
चलु-चलु हमार घर काजर मेद आँगन में

आँगन में ठाढि पिया पिरा हरे आगन में
ए जगतारन, ए कुलराखन काजर सेदु आँगन में
दउरि-दउरि जाय पिया चेरिया बोलाय लाय
चलु-चलु हमार घर सोठ कुटय आँगन में
ए जगतारन, ए कुलराखन सोंठ कुट आँगन में

हे सखी, आँगन में प्रियतम खडे है। आँगन में खडे हैं—मेरी प्रसव-पीडा हर लेने के लिए।

मेरे प्रीतम दौड-दौड कर जाते है। माँ को बुला लाते है।

'ओ माँ, चल। गृह-देवता का पूजन कर दे।'

प्रियतम दौड-दौड कर जाते हैं और मेरी गोतनियों को बुला लाते है।

'री गोतनियो, चल। घर में छठी का पूजन कर दे।'

हे सखी, आँगन में मेरे प्रियतम खडे हैं। आँगन में। मेरा दर्द हर लेने के लिए आँगन में खडे है।

मेरे प्रियतम दौड-दौड कर जाते है, और अपनी बहन को बुला लाते है।

'चल री बहन, आँगन में बैठ कर काजल सेंक दे।'

मेरे प्रियतम आँगन में खडे है—आँगन में। मेरे जगतारण और कुल-राखन खडे है—मेरी पीडा हरने के लिए।

मेरे सजन दौड-दौड कर जाते है—बाँदी को बुला लाते है।

'ओ री बाँदी चल। आँगन में बैठ कर सोंठ कूट दें'।

(३०)

क

हरसि गोपाल यशोमति अकम लाओल रे ललना
जनि पथ परल परस मणि निरधन पाओल रे

छन्द

निरधन धन पावि मगन मन आनन्द उर ने समाय यो
कहथि हरसि गधर्व अवतरू थिकाह यदुवरराय यो

ख

पहिलहिं तुरित यशोमति तनय नहाओल रे ललना
सुनि नन्द दगरिनि सहित धाय गृहि आयल रे

छन्द

धाय गृहि पहुँ आय दगरिनि आनन्द भेल चहुँ ओर यो
यदुवंश क्षीरसमुद्र सम जनि प्रगट दोसर चन्द्र यो

ग

नार छेदाओन मोहर दगरिनि पाओल रे ललना
युग-युग जीवयु यशोमति बालक तोहर रे

छन्द

देखि तोहर तनय यशुमति मुदित यादवराय यो
अति होय बधाव हुलास गोकुल द्वार दुन्दुभि बाज यो

घ

सुर नर मुनि सब हरसित सकल देवगण रे ललना
कंस निकृतन हेतु नन्द गृह आओल रे

छन्द

नन्द लाल कवि कैल नेहाल गोकुल भेल सनाय यो
धन्य यशोदा भाग तोहर प्रगट श्री यदुनाथ यो

यशोदा ने प्रसन्न होकर शिशु श्रीकृष्ण को गोद में रख लिया, जैसे रास्ते में पड़े हुए मूल्यवान मणि को कोई निर्धन रख ले।

जैसे कोई निर्धन धन पा ले, उसी तरह यशोदा श्रीकृष्ण को पा कर फूली न समायी। वह आनन्द-विभोर होकर कहने लगी—'निस्सन्देह यह गन्धर्व-तुल्य बालक यदुकुल का भावी सम्राट है।'

यह कह कर यशोदा ने पहले शिशु श्रीकृष्ण को नहलाया। श्रीकृष्ण के जन्म की खबर पाकर नन्द दगरिन को साथ लेकर प्रसूति-गृह में आये।

चारों ओर आनन्द मनाया जाने लगा। यदुवंशरूपी क्षीर-समुद्र में श्रीकृष्ण द्वितीय चन्द्रमा के सदृश उत्पन्न हुए।

नाल छेदने के पुरस्कार में दगरिन को मोहरें मिलीं। हे यशोदा, तुम्हारा बालक श्रीकृष्ण युग-युग जीये। तुम्हारे बालक श्रीकृष्ण को देख कर नन्द फूला नहीं समाते। गोकुल में धूमधाम के साथ उत्सव मनाया जा रहा है। द्वार पर दुन्दुभि बज रही है।

हे सखी, मनुष्य, ऋषि और देवगण सब प्रसन्न हो गये। (सच पूछो तो) कंस का विनाश करने के लिए ही श्रीकृष्ण का नन्द के घर अवतार हुआ।

कवि 'नन्दलाल' कहता है कि श्रीकृष्ण के जन्म से गोकुल-वासी सनाथ हो गये। हे यशोदा, तुम्हारा भाग्य सराहनीय है कि तुम्हें श्रीकृष्ण जैसा पुत्र-रत्न मिला।

(३१)

गिरि जनु गिरह गोपाल जी के कर से
गिरि ऐसो गरुह् गोपाल ऐसो कोमल रे ललना
गिरि जनु गिरह गोविन्द जी के कर से
सात दिवस मेघवा झडि लागल रे ललना
मूसर बूंद परै गिरि पर से
लै लठुरी चहुँ दिशि में धावै रे ललना
होहु सहाय गोविन्द जी ऊपर से
सुकविदास प्रभु तोहरे दरस कें रे ललना
श्याम लेल बचाय ब्रज भुजबल से

ऐ पर्वत, श्रीकृष्ण की उँगली से छूट कर मत गिरो।

हे सखी, एक ओर दुर्वह और कठोर गोवर्द्धन पर्वत और दूसरी ओर कोमल श्रीकृष्ण।

ऐ पर्वत, श्रीकृष्ण की कोमल उँगली से छूट कर मत गिरो।

हे सखी, लगातार सात दिनों तक तूफानी बादल समां बाँध कर बरसते रहे। पर्वत के ऊपर मूसलाधार वृष्टि होती रही।

हे सखी, श्रीकृष्ण के मददगार गोप-जन चारो तरफ से लट्ठ ले-ले कर दौड़ पड़े। हे ईश्वर, इस कठिन अवसर पर तुम हमारी रक्षा करो।

कवि 'सुकविदास' कहते हैं—'हे सखी, भगवान् श्रीकृष्ण ने अपने बाहु-बल से व्रज की रक्षा कर ली।'

(३२)

भादव मास अष्टमी तिथि असित बुधवासर रे
ललना रोहिनि नछत्र शुभसवत् कृष्ण जनम लेल रे
गदा पद्म कर शोभित चक्र सुदर्शन रे
ललना शीश मुकुट मणि मंडित ज्योति अनल सम रे
युग वक्र भौंह सरोज लोचन
तिलक मग मद भ्राज यो
दशन दाडिम बीज विद्युत्
श्रवण कुंडल छाज यो
चिबुक चारु कपोल कोमल
चिकुर मेचक लटक यो
युग कंजु नासा कीर लज्जित
रूप बरनत भटक यो
भाल विशाल लाल अति रुचिर सोहावन रे
ललना रूप राशि भगवत मदन मन भावन रे
भानु उदय शशि उदय अर्ध निशा गत रे
ललना देव दुन्दुभि देत सुमन घन बरसय रे
बनमाल कंठ प्रवाल मोती
जडित हीरा लाल थिक
फहरात केकी पुच्छ पर भुज
चारु चारि मृणाल थिक
कटि छिन्न किंकिनि करत कुन
कुन मनहुँ बाल मराल के
बलि जाथि 'मगनीराम कवि
एह रूप बरनत लाल के

जब जनमल यदुनन्दन छूटल बधन रे
ललना छूटि गेल कुलिस कपाट पहरु सब सूतल रे
देवकि देखि डरानी अति सकुचानी रे
ललना रूप देखि वसुदेव महाभय मानिय रे
एक में जन्म कर्महीन दोसर वाम विधि रे
ललना तेसरहिं विपति अपार निरखि न रहे सुधि रे

वर सुनिय जनक सुजान अब
मोहि नन्द गृहि पहुँचाव यो
लय गोप कन्या-रत्न कर गहि
तुरित एहि घर आव यो
हम करब शत्रु निदान
कसहि मारि काटि बिदारि यो
सुख देव जननी तात व्रज के
महादुव देव टारि यो

तब बसुदेव कोर कय लेल विश्वम्भर रे
ललना चलल मनहि पछताय हृदय डर थर-थर रे
चलइत पथ न सूझय चहुँदिशि चमकय रे
ललना घनमडल घहरात दामिनि दमकय रे

चहुँ ओर बरसय जलद जोर
कठोर पवन झकोर यो
इन्द्र करत सधान वाण
गुमान सँ तरु तोड यो
शेषनाग सहस्र फणि लय
छत्र छाँह बनाव यो
वलि जायि 'मगनीराम' कवि
एक बूंद चुवय न पाव यो

घइरज धय वसुदेव पयर देल जल मह रे
कपित परम सशंकित त्राहि-त्राहि कह रे
यमुना उठल फुफुआय चरण तल परशय रे
ललना कुहकहि मदन गोपाल पथ देल छन मय रे

× × ×

जहँ नन्दरानी शयन में
तेहि महल पहुँचल धाय यो
पलग पउढ़ श्री यशुदा
योग निद्रा ते भरयो
जहँ जगत जननी जन्म लेल्
तेहि सेज पर पाछा परयो

दामोदर जगवदन असुर निकदन रे
ललना कोरहि देल सुताय जहाँ भय खडन रे
वसुदेव लेल उठाय गोद गिरिनन्दिनि रे
ललना आदि ज्योति जगदम्ब जननि भय भजनि रे

तव चलल मधुपुर लय अपरना
गैनि तव निरमल भयो
जहँ पकडि दामिनि अक भरि
वसुदेव कारा गृहित यो
पुनि लागु वज्र-कपाट नीकर
शक्ति भय पायो न परयो
देवकि के गोद गिरिवर सुता
फुफुकि तव रोदन करयो

जागल चउकिदार दसोदिनि घेरल रे
ललना खवरि देल दरवार आतुर वाणि कहि रे

महाराज मथुरेश तहाँ पगु ढारिय रे
ललना जनमल शत्रु सुजान ताहि लय मारिय रे

तब काढि कठिन कृपाण
कस तुरत गेल धाय कय
जहाँ कहत कठिन कठोर वाणी
देवकी पहँ आइ कय
कुल कें विनासिनि निश्चरी
तुअ देवकी वैरिन भयो
खङ्ग लय शिर काटिहो
तुअ डकिनि डका दयो
तोहि गर्भ जनमल शत्रु बालक
निज कृपाण स मारिहो
बलि जाथि मगनीराम कवि
एह काल कुल कें टारिहो

पुत्र नहि एहो पुत्री ताहि जनु मारिय रे
ललना एहि वधय बड पाप मनहुँ विचारिय रे
छयो बालक विहि देल सेहो तुअ लूटल रे
ललना यौवन गत भेल मोर आश सभ टूटल रे
कर्महीन हम भेलहुँ जनम अकारथ रे
ललना पुत्रि भीख मोहि देहु त जन्म सुकारथ रे
कल जोरि बिनती करव नृप चरण पखारव रे
केश खोलि पद-पकज नित उठि झारव रे

नहि तनिक हिय में मोह माया
परम पापी कस यो
कर्महीन बडो कसाई
[illegible]

छीन लेल तुरत देवी
पटकइत चपला भयो
असुर नाशिनि विन्ध्यवासिनि
गगनमडल मा गयो
रे-रे कस कसाई असुर सुरापीय रे
ललना कुटिल कलक दनुज कुल पापीय रे
शत्रु तोर आव जनमल सेहो तोहि मारत रे
ललना शीश तोर महि डारत झोंट उपारत रे

× × ×

क्षमा करिय अपराध परम पापी हम रे
ललना कैल बाल वध वहुत से भेल काल-सम रे
तोहर पुत्र हम मारल मन न विचारल रे
ललना असत कहल ऋषि नारद मोहि परतारल रे
कह वसुदेव सुनहुँ नृप तोहर दोष नहि रे
ललना काल-कर्म वरिआर कठिन दुख सहियत रे
काटल वेरिय वधन हुलसि-हुलसि तव रे
ललना लै डेंडिया पहिराओल लाल वसन नव रे
गोकुल वाज वधाव नन्द महर घर रे
जन्म लेल यदुनाथ वीर वशीधर रे
चलु हे सखि सभ गावय नन्द महर घर रे
जनमल कुँवर कन्हाय हलायुध भायव रे
सखि सभ मगल गावय विहित मनावय रे
ललना पकज नयन विलोकि जन्म-फल पावय रे
कोटि मदन छवि लज्जित वाल दिवाकर रे
ललना गोपीनाथ गोपाल से उदित उजागर रे
ग्वाल-वधू सभ हरसित सोहर गावय रे
ललना उर वैजती माल गूथि पहिरावय रे

घुघुराल श्यामल केश
चहुँ ओर षटपद लटक यो
कलित ललित कपोल गोल
अमोल कुडल डोल यो
कठ ऊपर काकपक्ष
वडो सोहाओन लाग यो
अधर विम्ब सरोज पल्लव
निरखि बाधा भाग यो

भृकुटि कुटिल धनुष सम चचल डोलय रे
ललना अलिगन पाँख पसारि त मन-पट खोलय रे
कबु कठ भुजदड छत्र मृदु मडक रे
ललना उत्पत्ति पालन प्रलय करथि नव खडक रे
पीत झिगुनिया कटि पर किंकिनि सोहय रे
ललना शारद शेष-महेष से मुनि-मन मोहय रे
नाभि रुचिर गभीर भ्रमर मधु गुजय रे
ललना विकसित ललित दिनेश दमदम दमकय रे
युथ्य-युथ्य व्रजनारिन मगल गावय रे
ललना चढि-चढि देव गगन सँ फुल बरिसावय रे
चरण-कमल यदुवीर शरण माहि राखिय रे
ललना मगनी मन मृदु भृग मधुर रस चाखिय रे

गीत की कथावस्तु का आधार श्रीमद्भागवत (दशम स्कन्ध) का तीसरा या चौथा अध्याय है।

भादों महीना, रोहिणी नक्षत्र, अष्टमी तिथि बुधवार को देवकी के गर्भ से श्रीकृष्ण प्रकट हुए। उनके सुदर हाथों में शख, गदा, चक्र और कमल के फूल थे। सिर पर मणि-मडित मुकुट थे जिनकी ज्योति सूर्य की तरह अंधेरे को चीर रही थी। उनके सुंदर, श्यामल शरीर पर पीताम्बर फहरा

रहे थे। कलाइयों में कंकण शोभित थे, और कमर में करधनी की लड़ियाँ लटक रही थीं।

उस समय बंदीगृह के सभी दरवाजे बंद थे। उनमें किवाड़ और ताले जड़े थे। किंतु, वसुदेव श्रीकृष्ण को गोद में लेकर ज्योंही उनके निकट पहुँचे, त्योंही वे दरवाजे अपने-आप खुल गये। उस समय बादल बरस रहे थे। बिजली कौंध रही थी। इसलिए शेषजी फनों से जल को रोकते हुए श्रीकृष्ण के पीछे-पीछे चलने लगे। यमुना का प्रभाव भी गहरा और तेज हो गया था। तरंगों के कारण जल पर फेन-ही-फेन हो रहा था। यमुना ने वसुदेव को मार्ग दे दिया। वह अपने पुत्र को यशोदा की शय्या पर सुला कर, उनकी नवजात कन्या लेकर बंदी-गृह में लौट आये और पहले की तरह पैरों में बेड़ियाँ डाल बंदीगृह में बन्द हो गये।

नवजात शिशु के रोने की आवाज सुनकर द्वारपालों की नींद टूटी। जब कंस को इसकी खबर मिली तो वह बड़ी शीघ्रता से सूतिका-गृह की ओर झपटा। कंस को आते देख कर देवकी ने कन्या को गोद में छिपा कर कन्या के प्राण-दान की याचना की। पर कंस दुष्ट था। उसने देवकी को झिड़क कर उनके हाथ से वह कन्या छीन ली, और उसे जोर से एक चट्टान पर दे मारा। परंतु, वह कोई साधारण कन्या तो थी नहीं, देवी थी। कंस के हाथ से छूटकर आकाश में चली गई, और बड़े-बड़े आठ हाथों में आयुध लिए दीख पड़ी। उस समय उसने कंस से कहा—'रे मूर्ख, मुझे मारने से तुझे क्या मिलेगा। तेरे पूर्व जन्म का शत्रु तुझे मारने के लिए किसी स्थान पर पैदा हो चुका है।'

देवी की यह बात सुन कर कंस को असीम आश्चर्य हुआ। उसने उसी समय देवकी और वसुदेव को कैद से छोड़ दिया।

यह 'सोहर' प्रसिद्ध मैथिल कवि पंडित मंगनीराम झा कृत है। इनका जन्म सन् १६८७ में पदुमकेर ग्राम में हुआ था। पदुमकेर चम्पारन जिले में मोतिहारी से २० मील पूरब तथा सीतामढ़ी से चौदह मील पश्चिम है।

जनेऊ के गीत

जनेऊ शब्द यज्ञोपवीत (यज्ञ + उपवीत) का रूपान्तर है। जनेऊ का पर्यायवाचक एक शब्द और है—उपनयन। उपनयन का अर्थ है—सामीप्य प्राप्त करना। ब्रह्मचर्य, विद्या, शौर्य और तेज की प्राप्ति के लिये प्राचीनकाल में यज्ञोपवीत पहना जाता था। खादिर, गोभिल और हिरण्य-केशिन गृह्यसूत्रों के अनुसार वाम कन्धे पर पहना जाता तो यज्ञोपवीत, और दाहिने कन्धे पर पहना जाता तो प्राचीनावीत कहलाता था। पहले कपास के सूत्र के अभाव में वस्त्र और कुश की रस्सी भी यज्ञोपवीत के स्थान पर प्रयुक्त होते थे। आश्वलायन गृह्यसूत्र के देखने से प्रतीत होता है कि जिस दिन जन्म हुआ हो या गर्भ रह चुका हो उसके आठवें वर्ष में ब्राह्मण का, जन्म या गर्भ से ग्यारहवें वर्ष में क्षत्री का और बारहवें वर्ष में वैश्य का यज्ञोपवीत होना चाहिये—

'अष्टमे वर्षे ब्राह्मणमुपनयेत् (१)
गर्भाष्टमे वा (२)
एकादशे क्षत्रियम् (३)
द्वादशे वैश्यम् (४)

ब्राह्मण का बसन्त में, क्षत्री का ग्रीष्म में और वैश्य का शरद ऋतु म यज्ञोपवीत होता है। यज्ञोपवीत के एक दिन पहले ब्रह्मचारी व्रत करता है। उन व्रतों में ब्राह्मण के लड़के एक या अनेक बार दुग्ध-पान करते है। क्षत्री के लड़के यव को मोटा दल कर गुड़ के साथ पतली कढी बनाकर पीते हैं, और वैश्य के लड़के दही में श्रीखण्ड और केसर डाल कर भूख लगने पर पीते हैं, और अन्य कोई पदार्थ नहीं खाते—

'पयोव्रतो ब्राह्मणो यवागूव्रतो राजन्य आमिक्षाव्रतो वैश्य ।'

शतपथ ब्राह्मण

इस अवसर पर गाये जानेवाले गीतों की लय, ध्वनि, टेक और ढव-छव अन्य गीतो की अपेक्षा भिन्न होती है। छन्द, भाषा, उपमा उपमेय साधारण; सहज सादगी से ओतप्रोत—

(१)

समुआ बइसलि थिकौ कोन बावा सुनु बावा वचन हमार हे
हमरो के दिउ बावा जनेउआ हमें हएब ब्राह्मण हे
कोना क आरे बरुआ गगा नहयबह कोना करब नेमाचार हे
कोना क बरुआ गायत्री सुनयबह बश के हयत उधार हे
नित उठि आहे बावा गगा नहायब नित्य करब नेमाचार हे
साँझ दुपहरिया बावा गायत्री सुनायब बश के हयत उधार हे

'हे शामियाने में बैठे हुए मेरे पिता, मेरा यज्ञोपवीत सस्कार कर दो। मैं ब्राह्मण बनूंगा।'

पिता ने कहा—'हे ब्रह्मचारी, अभी तुम्हारी उम्र कच्ची है। अगर तुम्हें जनेऊ दूं तो तुम किस तरह गगा नहाओगे। किस तरह यज्ञोपवीत-संस्कार के दिन की गई प्रतिज्ञाओं का पालन करोगे, और किस तरह गायत्री-पाठ कर कुल का उद्धार करोगे?'

ब्रह्मचारी ने कहा—'हे पिता, मैं नित्य उठ कर गंगा-स्नान करूँगा। नित्य नियमानुसार यज्ञोपवीत-सस्कार के दिन की गई प्रतिज्ञाओं का पालन करूँगा, और नित्य प्रात· और सध्याकाल गायत्री-पाठ करूँगा जिससे कुल का गौरव बढे।'

जनेऊ धारण करने के अवसर पर की गई प्रतिज्ञाओं का अल्पवयस्क बालक भली भाति पालन नहीं करते। पडित और बडे बूढे तक ब्रह्मचर्य व्रत का सकल्प करके उन नियमो का पालन नहीं करते। प्रायः देखा जाता है कि उपनयन संस्कार केवल एक स्वाग की तरह कर लिया जाता है।

ब्रह्मचारी कुछ घटो में ही स्नातक बन कर उसी दिन ब्रह्मचर्याश्रम को त्याग गृहस्थ बन जाता है। जब बालक का शरीर और बुद्धि ऐसी हो कि वह पढने के योग्य हो जाय तब यज्ञोपवीत देना चाहिये। इस गीत में बालक अपने पिता से जनेऊ देने के लिए अनुरोध कर रहा है। पिता जनेऊ के समय की प्रतिज्ञाओ की याद दिला कर उसकी पात्रता में सन्देह करता है।

(२)

जाहि वन सिकियो ने डोलय वाघिन दहाग्यु रे
ललना ताहि वन पइसलन कोन बाबू आँगुरि धयल कोन बरुआ रे
पहिले जे मारलन मिरिगवा मिरिगछाल चाहिये रे
ललना तब जाय तोरलन पलसवा पलासदड चाहिये रे
ललना तब जाय चिरलन मुजेलिया मुजेलि डाँरा चाहिय रे
कहाँ शोभइन बाबू कें मिरिगवा मिरिगछाला चाहिय रे
ललना कहाँ शोभइन बाबू के पलसवा पलासदड चाहिय रे
ललना कहाँ शोभइन बाबू के मुजेलिया मुजेलडाँरा चाहिय रे
ललना कान्हे शोभइन बाबू के मिरिगवा मिरिगछाला चाहिय रे
ललना हाथ शोभइन बाबू के पलसवा पलास दड चाहिय रे
ललना डाँर शोभइन बाबू के मुजेलिया मुजेलडाँरा चाहिय रे

हे सखी, जिस वन में तृण नहीं डोलते, और बाघिन दहाडती है उस विजन वन में अमुक पिता अपने अमुक ब्रह्मचारी की उगली पकड कर गये।

हे सखी, वहाँ उनने पहले मृगछाला के लिए मृगा मारा। पलाश दड के लिए पलाश की डाली तोड ली, और हे सखी, अत में मुञ्ज के डाँडे के लिए मुञ्ज की पतली पत्तियाँ चीर लीं।

हे सखी, व्रती ब्रह्मचारी के किस अग में मृगछाला सुशोभित होगा? किस अग में पलाश दड, और हे सखी, उसके किस अग में मुञ्ज का डाँडा विभूषित होगा?

हे सखी, ब्रह्मचारी के कन्धे पर मृगछाला सुशोभित होगा। हाथ में पलाश दड, और कमर में मुञ्ज का डाँडा।

ब्राह्मण के बालक को पलाश का, क्षत्रिय को वट का, वैश्य को गूलर के वृक्ष का दंड देने का नियम है। दंड चिकने और सीधे होते हैं। अग्नि में जले या कीड़ों के खाये हुए नहीं। कमर में मुञ्ज का डाँडा, बैठने और पहनने के लिए एक मृगचर्म, जल पीने के लिए एक जलपात्र, एक उपपात्र और एक आचमनीय ब्रह्मचारियों को देने का विधान है।

(३)

कथिअहि मरवा छवाओल कथिए झिनन लागु हे
कथिअहि खम्भ गराउ त कथिए कलस धरु हे
बँसवहि मरवा छवाओल मोतिए झिनन लागु हे
केरा केर थम्भ गराओल तामे क कलस धरु हे
केहि जें मोढा चढि बइसल केहि मगल गावथु हे
ककरहि हयत जनेउआ त देव लोग हरसित हे
मोढा चढि वाशिट बइसल कोशिला मगल गावथु हे
आहे राम जी के छइन जनेउआ त देव लोग हरसित हे

किस वस्तु से मडप छाया गया है? किस वस्तु की झांझ लगी है? उसमें किस वस्तु के खम्भे हैं? और किस धातु के कलश रक्खे गये हैं?

हरे बांस से मडप छाया गया है। मोतियों की उसमें झाझ लगी है। कदलि के थम्भ के खम्भे हैं, और ताम्बे का कलश रक्खा गया है।

कौन मोढा पर बैठा है? कौन मंगल गा रही है? किस ब्रह्मचारी के यज्ञोपवीत-सस्कार की यह धूम-धाम है जिससे देवता प्रसन्न होकर उत्सव मना रहे हैं?

मुनि वाशिष्ठ मोढा पर बैठे है। कौशल्या मंगल गा रही हैं। राम के यज्ञोपवीत-सस्कार की यह धूमधाम है जिससे देवता प्रसन्न होकर उत्सव मना रहे हैं।

(४)

छोटि-मोटि आम गछुलिया त ओर मलडाट
ताहि तर कओन बरुआ धरथिन ध्यान

भर दिन वरुआ धयलन्हि ध्यान
साँझ केर वेर वरुआ करथि असनान
समुआ वइसल वावा कोन वावा
मुखहुँ जे वोलए वरुआ जनेऊ त दिऊ
देवौ जनेऊआ वरुआ हरिद्वार जाय
नीक लगन मोचाय

आम का छोटा-मोटा गाछ। मजरी से लदा हुआ। उसीके नीचे अमुक ब्रह्मचारी ध्यान कर रहा है। दिन-भर उसने ध्यान किया, और संध्या को स्नान।

ब्रह्मचारी ने कहा—'हे शामियाने में बैठे हुए मेरे पिता, मुझे जनेऊ दे दो।'

पिता ने कहा—'हे ब्रह्मचारी, मैं कोई शुभ लग्न विचार कर हरिद्वार में तुम्हारा यज्ञोपवीत संस्कार कर दूँगा।'

घर पर जनेऊ न देकर कोई-कोई तीर्थ-स्थानों में जाकर भी ब्रह्मचारी को जनेऊ देते हैं।

(५)

वँसवा जे कॉपथि अकाश विच पुरइनि जल-विच हे
मडवहि कँपथिन कओन वावू अपना गोतिया विनु हे
हाथि चढि अवथिन कओन मामा डाँडिय कओन मामी हे
नील घोडा अवथिन कओन भइया डाँडिय कओन भउजो हे
तव मोरा मनमा हुलास भइया भउजो अयताह हे

जिस तरह आसमान में बाँस और जल के बीच कुमुदिनी के पत्ते काँपते हैं, उसी तरह अपने दैयादो के न आने से मडप में अमुक पिता काँप रहे हैं।

पति को चिन्तातुर देख कर पत्नी कहती है—'हे पति, तुम चिन्ता मत करो। डोली में अमुक मामी और हाथी पर बैठ कर अमुक मामा आयेंगे, और मडप की शोभा बढायेंगे।

डोली में अमुक भावज और नील घोडे पर चढ कर अमुक भाई आयेंगे, और भाई और भावज को देख कर मन प्रफुल्लित होगा।'

(६)

वेदी वइसल छथि कओन वरुआ वहिन वहिन करु हे
आवयु वहिन सुहागिन लापरि परिछयु हे
किए वहिन पहिनव पहिरन अओरो किए ओढन हे
कओन वसतर अहा पहिनव लापर परिछव हे
नये हम पहिनव पहिरन नये किछु ओढन हे
पिअरि वस्तर हम पहिनव लापर परिछव हे

वेदी पर वैठा हुआ अमुक ब्रह्मचारी 'वहन ! वहन !, पुकार रहा है।' मेरी सौभाग्यवती वहन कहाँ गई ? लापर परीछ न दे ?

'हे वहन, तुम उपहार में कौन-कौन आभरण लेकर लापर परीछ दोगी ?

वहन ने कहा—'हे भाई, मुझे उपहार में कोई ख़ास आभरण तो नहीं चाहिये। मेरे लिए एक पीला वस्त्र पर्याप्त है। मै लापर परीछ दूंगी।'

'लापर परिछन' यज्ञोपवीत संस्कार सम्पन्न हो जाने के वाद की एक विधि है जिसमें ब्रह्मचारी के शिर के वालों का मुडन होता है। मुडन किये हुए केश, दर्भ और शमीपत्र ब्रह्मचारी की वहन अपने आँचल में रखती जाती हैं। तत्पश्चात् वे मिट्टी से दावकर गोशाला, नदी या तालाव के किनारे गाड दिये जाते हैं।

(७)

के मोर जयताह गगासागर केहि जयताह वइजनाथ हे
के मोरा जयताह वनारस केहि सग जायव हे
वावा मोरा जयताह गगासागर पितिए वइजनाथ हे
भइया मोरा जयता वनारस हुनिक सग जायव हे
समुआ वइसल अहाँ वावा त करु पद वन्दन हे
कोना विधि आहे वावा ब्राह्मण होयव कोना विधि परत जनेऊ हे

आरे बँसवा कटाएव मार छायव हे
आगर चानन निपि आँगन गजमोती चउक पुरि हे
सोने कलस बाबू पुरहर राखव लेसव चउमुख दीप हे
विप्र बोलाएव वेद भनाएव एहि विधि हयत जनेऊ हे
एहि विधि बाबू ब्राह्मण होयवह एहि विधि हयत जनेऊ हे

कौन गगासागर जायगा। कौन वैद्यनाथ? कौन बनारस जायगा? और मै किसके साथ गगा-पार करूँगा?

मेरे पिता गगासागर जायेंगे। चाचा वैद्यनाथ। मेरे भाई बनारस जायेंगे, और मै उन्हीं के साथ गगा-पार करूँगा।

'हे शामियाने में बैठे हुए पिता, मै प्रणाम करता हूँ। मै किस तरह ब्राह्मण बनू, और किस प्रकार मेरा यज्ञोपवीत-सस्कार सम्पन्न हो?'

पिता ने कहा—'हे पुत्र, मै हरे बांस काट कर ऊँचा मडप छवाऊँगा। चन्दन से आँगन लीप कर गजमोती चौक पूरूँगा। सोने के कलश लाकर पुरहर सजाऊँगा। चौमुख दीप जलाऊँगा। पडित बुलाकर वेद-पाठ कराऊँगा। इस प्रकार तुम्हारा यज्ञोपवीत-सस्कार सम्पन्न होगा, और तुम ब्राह्मण बनोगे।'

(८)

सुरपुर से ऋषि नारद फुल एक लायल हे
आहे दिय गय बाभन हाथ त वेद भनाइय हे
काँच बाँस केर मारव पान छवाइय हे
वइसु पडित सव आऊ त वेद भनाइय हे
आहे घर-घर फिरहुँ नउनिया त गोतिनि हँकारिय हे
आहे अजु लला के जनेऊआ त मगल गाविय हे

सुरपुर से नारद ऋषि एक फूल लाये। हे सखी, वह फूल ब्राह्मण को दो, और वेद का पाठ कराओ। कॉंच बांस का मडप बना कर उसे पान के पत्ते से छवा दो।

हे पंडित, आओ बैठो। वेद का पाठ करो।
हे नाऊनियो, मेरे सगे-सम्बन्धी और हित-कुटुम्बों को न्योत आओ।
आज मेरे बेटे का यज्ञोपवीत-संस्कार है। हे सखी, आओ हम सब मिल-कर मंगल गावें।

(६)

कहमे से आयल बरुआ
कहाँ कए जँ जाय
कवन ओझा बाबा दुअरिया
बरुआ धुनिया लगाय
पछिम से आयल बरुआ
पुरुब क जँ जाय
कवन ओझा दुअरे बरुआ
धुनिया लगाय
भिख ले बहार भेलि दाइ
भिखियो ने लेय
मुखहु ने बोलए
केहि मोरा देत माइ
धोतिया जँ पोथिया
केहि मोरा देता माइ
काँधे जोग जनेऊआ
बबे अहाँक देता बरुआ
धोतिया जँ पोथिया
पुरहित बाबा देता अहाँ के
काँधे जोग जनेऊआ

ब्रह्मचारी कहाँ से आ रहा है? कहाँ जायगा? किसके दरवाजे पर वह धूनी रमायेगा?

ब्रह्मचारी पछिम से आ रहा है। पूरब जायगा। अमुक ओझा के दरवाजे पर वह धूनी रमायेगा।

ब्रह्मचारी को भिक्षा देने के लिए अमुक दादी बाहर निकली। उसने भिक्षा लेने से इन्कार किया—

'हे मां, कौन मुझे धोती और पोथी देगा, और कौन मेरा यज्ञोपवीत-सस्कार कर देगा?'

'हे ब्रह्मचारी, तुम्हारे पितामह तुम्हें धोती और पोथी देंगे, और तुम्हारे कुल-पुरोहित तुम्हारा यज्ञोपवीत-सस्कार कर देंगे।'

(१०)

हरिअर बँसवा कटाएब मारब छायब रे
आजु मोर लाल के जनेऊआ केहि केहि नेवतव हे
जेकरा के जे कोउ हयता से सब नेवतव हे
नेवतब गोतिया सहोदर जिनका सँ रूसन हें
घोरवहि अयताह गोतिया डडिया गोतिन लोग हे
आहे बइसे के देवइन गलइचा
कि बइसु गोतिया लोग हे
मडवहि झखथिन कोन बाबा
बिरा भेल थोर—आदर भेल थोर
मिनतिय बोलथिन कोन ओझा
हम न अहांक जोग हे
मडवहि झखथिन कन्या चाची
आदर भेल थोर सेनुर भेल थोर
मिनतिय बोलथिन कन्या चाची
हम ने अहांक जोग हे

हरे बांस ला कर मडप छवाऊँगी। आज मेरे पुत्र का यज्ञोपवीत-संस्कार है। मैं किसे-किसे न्योतूं?

जिसका जो हित-कुटुम्ब है उन सब को न्योतूंगी, और उन सभी सगे-सम्बन्धियों और दैयादों को, जिनसे मेरा मनमुटाव रहा है, न्योतूंगी।

डोली में दैयादिन और घोड़े पर हित-कुटुम्ब आयेंगे। उन्हें बैठने के लिए गलीचा दूंगी।

मंडप में बैठे हुए अमुक पितामह ने कहा—'मेरा यथोचित आदर नहीं हुआ। मुझे पान की गिलौरियां कम मिलीं।'

उलाहना सुनकर अमुक पितामह ने कहा—'मैं तुम्हारे लायक नहीं हूँ। तुम मानापमान का विचार मत करो।'

मंडप में बैठी हुई अमुक चाची ने कहा—'मेरा यथोचित सत्कार नहीं हुआ। मुझे सिन्दूर-विन्दी नहीं की गई।'

उलाहना सुन कर अमुक चाची ने कहा—'मैं तुम्हारे योग्य नहीं हूँ। तुम मान-अपमान को भूल जाओ।'

सम्मरि

'सम्मरि'—शैली के गीतों का सम्वन्ध स्वयम्वर से होने के कारण इनमें तत्कालीन विवाह-प्रथा का ही चित्र मिलता है। इनके दो विभाग किये जा सकते है—

(१) प्रवन्धात्मक . इनकी कथावस्तु पुराण से ली गई है, जिनमें लग्न-प्रथा और उसके लौकिक आचारों के विवरण की अपेक्षा प्रबन्धात्मकता का निर्देश अधिक है, जीवन की सदेशवाहिनी सामाजिक भावना की अपेक्षा कला-चातुर्य प्रदर्शन का प्राधान्य है। प्रबधात्मक 'सम्मरि' की यही मर्यादा है कि 'मुक्तक' शैली के गीतों की सुघड आकृति से साम्य रखने के वावजूद उसने इनकी भाव-भंगी की नकल नहीं की, और 'मुक्तक' सम्मरि की उलट-वाँसी पाठ्य-सामग्री अपनी कुल-परम्परा के ऊँचे गौरव से गिर गई। 'मुक्तक'-शैली के अनेक गीतों में अनेक प्रकार के विषयों का समावेश है, जिनमें स्वयम्वर के सार्वजनीन रूप का किंचित् आभास भी लक्षित नहीं होता। क्योंकि 'सम्मरि'-शैली के वर्ज में स्थान पाने के लिए स्वयम्वर की आदर्श रूप-रेखा को सुरक्षित रखने की मर्यादा है, और उस आदर्श में स्वयम्वरकालीन युग की कथा-मान्यता को स्थान देना अनिवार्य है।

(२) मुक्तक · इनकी रचना-शैली और इनके अनेक गीतों में कोई कथा-प्रबध नही है। इनमें आख्यान परिपाटी का सम्पूर्णत. अनुसरण न कर प्रत्येक विषय का स्वच्छन्द वर्णन है।

'सम्मरि' शब्द स्वयम्वर का अपभ्रंश है। 'सम्मरि' गीत-शैली की कथावस्तु इस कथन की आधार-शिला है। इस शैली के शत-प्रति-शत गीत स्वयम्वरकालीन युग (विशेषतया त्रेता और द्वापर में प्रचलित) स्वयम्वर-प्रथा की याद दिलाते है। गीत की कथावस्तु, वाक्य-विन्यास,

और अभिव्यक्ति की परम्परा में अभूतपूर्व सौन्दर्य है। एक समय था, जब इसकी सजीव भावभगी और ललित रूप-विधान पर रसिक-हृदय लट्टू हो जाते थे। किन्तु, अब इस शैली के गीतो में कोई आकर्षण नहीं रहा। छुटपन में न जाने कितनी बार ग्रामीण गायको की आकर्षक आवाज़ में इन गीतो को सुन कर एक अलौकिक आनन्द का अनुभव किया था। और काफी देर पहले इस पौध के गीतो को पर्याप्त तादाद में सगृहीत कर लेने के बावजूद इन्हें अँधेरे से प्रकाश में लाने की चेतना न हुई।

वैदिककालीन वर्णधर्म के अनुकूल जैसे लोग ब्रह्मचर्य और गृहस्थाश्रम की अवधि समाप्त कर वानप्रस्थ, और वानप्रस्थ से संन्यासाश्रम में प्रवेश करते थे, और सम्पत्ति का उत्तराधिकार अपने किसी सत्पात्र वंशज को सौंप जाते थे उसी तरह लोक-गीत तरुणाई की देहली पार कर सन्यासाश्रम में प्रवेश करने के वक्त अपनी गद्दी नई पीढी के सुयोग्य गीतो को दे जाते हैं, और नई पीढी के नये नये गीत रूप बदल कर ग्रामीण गायको की ज़बान पर अनायास उतरने लगते हैं। पुन जैसे लोग मृत पूर्वजों के नाम भूल जाते हैं, उसी तरह लोकमानस भी पुरातन मृतप्राय गीतो को अपने अजायब घर में बरामद नहीं रखता, और वे सदा के लिए समाधि के पत्थर के नीचे राख बन जाते हैं।

कोई-कोई 'सम्मरि' को विवाहकालीन गीत-शैली के दर्जे में बिठा देते हैं। केवल विवाह के ही मगलमय अवसर पर 'सम्मरि' गाया जाता, तब इन्हें अलबत्ता विवाहकालीन गीत-शैली की कोटि में शुमार करना युक्तिसंगत होता। किन्तु, ऐसा नहीं देखा जाता। होली के उन्मत्त दिनो में भी ग्रामीण गवैयो के सरल कंठ से 'सम्मरि' की मस्त तान फूट-फूट कर लोक-जीवन के ऊसर में संगीत की सुधा बरसाती है। अत. 'सम्मरि'-शैली के गीत-प्रसूनों को लग्न-गीत के गमले में न सजा कर एक अलाहिदा स्थान दिया गया। एक ही बात एक तरह से कही जाने पर उसमें एकरसता आ जाती है, और वही बात दूसरी जगह दूसरी तरह कही जाने पर मनोरजक लगती है। कुछ नमूने देखिये—

सीता-स्वयम्वर

(१)

राजा जनक जी यज्ञ कियो सखि
धनुपा देल धराय
जे भूप इहो धनुपा तोरय
सिया विआहव ताहि
—भला सिर मटुकी शोभय लाल ध्वजा
सिया स्वयम्वर पाँती फिरि गेल
सब जग राज मँझार
राम लछुन यग पूरन कारन
चले मुनी के साथ
—भला कठ किमकिम झिमझिम बाज रहे
हतो ताडको दानो
तारो पावन गौतम नार
बकसर जाय मुनी मख राखो
उतर तिरबेनी पार
—भला रामभद्दर जब से नाम परय
राम लछुन मुनि सँ आज्ञा माँगथि
माँगथि सखि कर जोरि
जनकनगर फुलवारी देखव
इहो मनोरथ मोर
—भला तरकस में तीर विराज रहे
जनकदुलारी गेल फुलबारी
सखि लिय सग लगाय
चम्पा वेलि चमेली तोरय
चीर अमीरी रग
—भला रघुवर पर दृष्टि जाए परय

रामचन्द्र इहो धनुषा तोडल
सिआ देल जयमाल
सुर नर मुनि सब जय-जय बोलल
धनि दरशथ के लाल
—भला लिखि भेजेउँ पाँती दशरथ के

ढोल नङ्गेरा बाजन बजि गेल
औ' खुर्दक शहनाई
जनक दोआर बधावा बाजय
मुनि सब धूम मचाए
—भला वीरो की छाती कडकि रहय

मगल मूल सोहाओन पाँती
गेल अवधपुर धाम
हमसो किछु न बनाय सकय
आपहुँ पिंगल कसि शुद्ध किय
— × × × × ×

रामचन्द्र जी सहित जानकी
साजि लेल बरिआत
साँवल गोर दुइ रूप निहारल
छकित भेलि पुर नारि
—भला भौंरेपति झुडन गुजि रहय

सजत डोलि चडोल पालकी
हौदन औ तमदान
मोतियन झालरि श्वेत कियो सखि
तापरि सामधि भेल असवार
—भला बानातहुँ झुम्ह कहारन के

लगय बरात जनक के द्वारे
सखि सब मगल गावि

\+ + +
\+ + +
भला सखियन सब झूमर करन लगय

काँच बाँस कचन के खाम्ही
चारो माँडव छारि
जगमग जोति झलामल मौरी
रघुवर भाँर फिराय
—भला पुरहितगन कगन बान्हि दियो

भेल विआह राम चलु कोवर
सखि सब मगल गावि
\+ + +
\+ + +
—भला भोजन के आज्ञा भेज दियो

छप्पन भोग छत्तीसो व्यञ्जन
भाँति-भाँति पकवान
मरी छहोरा दाख इलायची
अँचवन बगला पान
—भला अब दही परय घर सोतन के

रामचन्द्र जी सहित जानकी
गेल अवधपुर धाम।
\+ + +
\+ + ×
भला सखियन सब धैरज त्यागि दियो

कहय कबीर दिगम्बर थाकत
लीला बरनि ने जाय

छूटल अच्छर रघुवर जानथि
हमसो किछु ने वसाय
—भला आपहुँ स मिलि कय शुद्ध किय

राजा जनक ने घोषणा की—'जो वीर भूप इस धनुष को तोड़ेगा उसीसे सीता का व्याह होगा।'

उनके सिर पर मुकुट और लाल छत्र शोभा पा रहे थे।

सीता के स्वयम्वर में सम्मिलित होने के लिए पृथिवीमडल के वडे-वड़े राजा-महाराजाओं को पाँती भेजी गई। उसी समय अयोध्या के राज-कुमार राम और लक्ष्मण ने भी ऋषि विश्वामित्र के साथ उनके यज्ञ की रक्षा करने से लिए प्रस्थान किया।

मगलसूचक वाजे वज उठे।

रास्ते में राम ने दानवी ताडका का वध कर शिला के रूप से तपस्या करती हुई गौतम की पत्नी पाषाणी अहल्या का उद्धार किया। वक्सर जाकर ऋषि विश्वामित्र के यज्ञ की रक्षा की, और त्रिवेणी नदी पार कर आगे की ओर वढ़े।

उस समय वह भद्र राम के नाम से लोकप्रिय हुए।

राम-लक्ष्मण ने ऋषि विश्वामित्र से जनक की फुलवाडी देखने की अभि-लाषा प्रकट की। उनके तरकश में तीर सुशोभित थे।

जनक की दुलारी वेटी सीता भी सखियो को साथ लेकर फुलवाडी गई। यहाँ वह चम्पा, वेली और चमेली के फूल तोडने लगी कि उनकी दृष्टि राम पर पडी। उनके आभरण से राजसी सौन्दर्य उमड रहा था।

राम ने धनुष तोड डाला। सीता ने उनके गले में जयमाल पहनायी। देवता, मनुष्य और ऋषि सव ने 'जय-जय' के नारे वुलन्द किये। दशरथ के दोनों पुत्र राम और लक्ष्मण सचमुच धन्यवादार्ह हैं।

तत्काल दशरथ को पाँती लिख कर भेज दी गई।

खुर्दक, शहनाई, ढोल और नक्कारे आदि वाजे वजने लगे। राजा

जनक के द्वार पर बधाई के रूप में अनेक प्रकार के उत्सव हुए, और ऋषियों ने आनन्दसूचक शब्दों में आशीर्वचन कहा।

यह देख कर बड़े-बड़े नरपतियों एव वीरो की छाती दहल गई।

मगलमयी सुहावनी पाती अयोध्या भेजी गई जिसमें नम्रतापूर्वक निवेदन किया गया—'मै अपनी श्रद्धापूर्ण अभिव्यक्ति को भली भाति कलमबद नहीं कर सकता। उसमें अनेक दोष है। हे सम्राट, आप स्वयं पिंगल और व्याकरण की कसौटी पर कस कर उन्हें शुद्ध कर लें।'

राम और सीता की बरात सज-धज कर निकली। साँवली और गोरी—अपूर्व जोडी देखकर नगर के स्त्री-पुरुष फूले न समाये।

रूप-रस के लोभी मधुकर गुञ्जार करने लगे।

डोली, चदोल, पालकी और तामदान गली-गली से सज कर निकले। हाथियों की पीठ पर हौदे रख दिये गये। उन पर मोतियो की सुफेद झालड बिछा दी गई, और उस पर समधी सवार होकर बरात में सम्मिलित हुए।

कहारों के अग-अग में वनात के कपडे लहराने लगे।

जनक के द्वार पर जाकर बरात रुकी। सखियाँ आनन्द-विभोर होकर 'झूमर' गाने लगीं।

कांच बांस काट कर चारों मडप छाये गये। उनमें कचन के खम्भे लगाये गये। राम के शिर पर मौर रक्खा गया जिसका प्रकाश चारों ओर फैल गया। इस प्रकार दूल्हा राम की भावरी हुई।

कुल-पुरोहितों ने उनके हाथ में कगन बांध दिये।

अन्त में बडी घूमधाम के साथ राम का ब्याह सम्पन्न हुआ। वह कोहवर घर में बिठा दिये गये, और सखिया मगल गाने लगीं।

इधर बरातियों को भोजन की आज्ञा भेज दी गई।

छत्तीस प्रकार के व्यञ्जन और छप्पन प्रकार के भोज्यपदार्थ बरातियों को परोसे गये। नारियल की कतरन, छोहारा, दाख, इलायची, बंगला पान आदि विविध प्रकार की वस्तुएँ बाँटी गई।

श्रोत्रिय ब्राह्मणो के पत्तल पर दही खूब परोसे गये।

राम सीता के साथ अयोध्या गये। इधर सीता की सभी सखियाँ उनके विरह में शोकातुर हो विलाप करने लगीं।

'कबीर' कहता है कि सीता के स्वयम्वर का गुणगान करने में असमर्थ हूँ। इस वर्णन में जो त्रुटियाँ है उन्हें ईश्वर जाने। मैं उन्हें दूर करने में असमर्थ हूँ। विज्ञ पाठक स्वय सशोधन कर लेंगे, ऐसा विश्वास है।

रुक्मिणी-हरण

(२)

प्रथमहि वन्दहुँ विघ्न विनाशन
गिरिजातनय गणेश यो
देवि शारदा चरण मनाविय
देहु सुमति उपदेश यो

कुण्डिनपुर एक नग्र वखानल
जनि इन्द्रासन रूप यो
जनि इन्द्रासन रूप मनोहर
ऊपर मन्दिर छाय यो

दह अति निर्मल पकज शोभित
केलि करत राजा हस यो
चहुँ दिशि लागल वेंत वाँस घन
चानन गाछ दुआरि यो

माय मनावथि मनहि विचारथि
धिया भेलि व्याहन योग यो
रानि सुमति लै अएला राजा
भीषम हँकरथि कुल परिवार यो

प्राणिग्रहण कय कृष्णहि दीजै
मत्र मिलि रचथि विचार यो

ओहि अवसर रुक्मद तहँ आयल
रुक्मिणि केर जेठ भाय यो
पाँच तनय दुहिता एक रुक्मिणि
सुर नर मुनि मन मोह यो
ई कन्या शिशुपालहि दिजै
निन्दित यादवराज यो

धेनु चरावथि वेणु वजावथि
छिर विच करथि अधार यो
नन्दमहर घर जन्म हुनक छैन्हि
जातिक ओछ गोआर यो

कान्हे कम्मल, हाथे सैली
गौआ चरावथि वनमाहि यो
कोन-कोन राजा के नौतव
कोन-कोन अरु देश यो

नौतव कनौज छतिस कोटि लय
नौतव दिल्लीक राज यो
मथुरा मोरङ्ग तिरहुत नौतव
नौतब सकल समाज यो

गया नौतव गयाघर नौतव
नौतव अयोध्या ग्राम यो
स्वर्गहि इन्द्र पतालहि नौतव
मर्त्यभुवन कैलाश यो

ऐलङ्ग, तैलङ्ग सव गढ नौतव
नौतव मगह मुगेर यो
पूर्वहि नौतव गिरि उदयाचल
पश्चिम वीर हनुमान यो

नवा पार नेपाल चम्पारन
काशी सजु वरिआत यो
सादर सव ऋषि ब्राह्मण नौतव
सुर नर मुनि सव झारि यो

कारनाटपुर ठक्क ओडेसा
पाडव कौरवराज यो
एक नहि नौतव नग्र द्वारिका
जहाँ वसु नन्दकुमार यो

जे नहि औताह रुक्मिणि नौता
वान्हि देवैह्नि वनिसार यो
सभ दिशा तो जैह हे ब्राह्मण
एक दिशा जनु जाह यो

अरही वन सौं खरही मङ्गाएव
वृन्दावन विट वाँस यो
सहस्र योजन लय माँडव ठाडव
ताहि वैसायव वरिआत यो

रतन जडित चारु कान उरेहल
ऊपर पटम्बर छाज यो
धन विश्वकर्मा आजु सम्हारल
मगल गावथि नारि यो

कैसन वाजु राजवर वाजन
मोहि सखि कहु समुझाय यो
राजा भीषम घर तुही कुमारी
तें तोहि वाजु वधाय यो

ई जव सुनलन्हि रुकमिनि कामिनि
उठलहे हृदय तरास यो

ओ नव नागरि दसलि सोहागिनि
मुरुछि खसल महि माँझ यो
क्यौ सखि धावय चानन लावय
क्यौ सखि विजन डोलाय यो
सखियन चेतल चेत जगाओल
कर धय लेल उठाय यो

किए तोहे रुकमिनि मनहिं विरोवलि
किय रे खँसल मुरछाय यो
जौं जीवह तौं कृष्ण सरन देत
नहिं त मरव विप खाय यो

केदलि वन सौं पत्र मगाओल
निर्मद कैल मोसिआन यो
लिखय विलाप विनय कय माधव
हैव हमहुँ तब दास यो

सिंहक भाग सियार लै भागत
जनम अकारथ जाय यो
कुआँ बावली इष्ट कयल यदि
आवि धरिअ यहो हाथ यो

लिखि पतिया विप्रहिं बोलाओल
तुरन्त द्वारिका जाह यो
देवउ हे ब्राह्मण अन धन लछमी
और सहस्र धेनु गाय यो

हारा, लीला, काल, कलगर
मटिआ रग सुरग यो
पवनहुँ सँ अधिक रथ जोतह
जे रथ जायत तुरन्त यो

देव हे ब्राह्मण पैरक नूपुर
गारां क मुक्ताहार यो
एक दिवस विप्र द्वारिका रहिअह
दोसरे सागर पार यो

कृष्ण लेवाय तुरत तों अविह
हम होयव दास तोहार यो
एतेक वात लै जाहु द्वारिका
कृष्णहि लाउ लिवाय यो

दै पतिया सव वात जनाओल
ब्राह्मण ठाढि दुआर यो
हरषि लेल यदुपत्र हाथ कों
वचइत भेल सनाथ यो

खन वांचथि खन हृदय लगावथि
खन पूछथि निज वात यो
पाछां सें वलभद्रहिं आयल
भगवन कयल गोहारि यो

चललि सखी सव गौरि पूजय
रुक्मिणि मन पडि आव यो
हमरा लै कृष्ण कत अओताह
हम घनि परम अभागि यो

जों लगि रुक्मिणि गौरी पूजल
गरुड चढि प्रभु धाय यो
कर घै रुक्मिणि रथहि चढाओल
चलि भेल श्रीभगवान यो

इन्द्र ब्रह्मा सव साक्षी रहव
रुक्मिणि हरल कुमारि यो

रुक्मिणि हरण सुनल शिशुपालहिं
मुरुछि खसल महि माँझ यो

वहुत कटक लै रुक्मद धायल
रथ के घेरल जाय यो
वहुत कटक लै रुक्मद पहुँचल
लेल कृष्ण ताहि बान्हि यो

इहो सोदर भाय थिक रुक्मद
हिनका दियौन्हि जिवदान यो
द्वारकापति प्रभु द्वारका पहुँचल
रुक्मद कैल कन्यादान यो

'लोकनाथ' भजु चक्रपाणि प्रभु
अवसर ने करिय विचार यो
रुक्मिणि सम्मरि गावि सुनाओल
कलिपातक दुरिजात यो

गीत की कथावस्तु सक्षेप में निम्न-प्रकार है—

'महाराज भीष्मक विदर्भ देश के अधिपति थे। उनके पाँच पुत्र और एक सुन्दरी कन्या थी। सबसे बडे पुत्र का नाम था रुक्मी, और चार छोटे थे—जिनके नाम थे क्रमश. रुक्मरथ, रुक्मबाहु, रुक्मकेश और रुक्ममाली। इनकी वहिन थी सती रुक्मिणी। जब उसने भगवान श्रीकृष्ण के पराक्रम और वैभव की प्रशसा सुनी, तब उसने यही निश्चय किया कि श्रीकृष्ण ही मेरे अनुरू र है। श्रीकृष्ण ने भी रुक्मिणी से विवाह करने का निश्चय किया। रुक्मिणी के भाई-बन्धु भी चाहते थे कि उनका विवाह श्रीकृष्ण से हो। परन्तु रुक्मी श्रीकृष्ण से बडा द्वेष रखता था। उसने उन्हें विवाह करने से रोक दिया और शिशुपाल को ही अपनी वहिन के योग्य वर समझा। जव परम सुन्दरी रुक्मिणी को यह मालूम हुआ तब वह वहुत उदास हो गई। उन्होंने वहुत कुछ सोच-विचार कर एक विश्वासपात्र ब्राह्मण को तुरन्त

भगवान श्रीकृष्ण के पास भेजा। ब्राह्मण देवता ने रुक्मिणी का निम्न-लिखित सन्देश श्रीकृष्ण को सुनाया—'कमलनयन, मैं आप सरीखे वीर को समर्पित हो चुकी। अब जैसे सिंह का भाग सियार छू जाय, वैसे कही शिशुपाल निकट से आकर मेरा स्पर्श न कर जाय। मैंने यदि जन्म-जन्म में कुआँ, बावली आदि खुदवा कर तथा दान, नियम, ब्राह्मण और गुरु आदि की पूजा के द्वारा भगवान परमेश्वर की आराधना की हो तो आप आकर मेरा पाणिग्रहण करें।'

इधर महाराज भीष्मक अपनी कन्या शिशुपाल को देने के लिये विवाहोत्सव की तैयारी करने लगे। राजकुमारी रुक्मिणी को स्नान कराया गया। हाथो में मंगलसूत्र कंकण पहनाये गये। कोहबर बनाया गया।

रुक्मिणी ने अपने कुल के नियम के अनुसार कुलदेवी का दर्शन करने के लिए एक बहुत बडी यात्रा की। रुक्मिणी इस प्रकार इस उत्सव-यात्रा के बहाने मन्द-मन्द गति से चल कर भगवान श्रीकृष्ण के शुभागमन की प्रतीक्षा करने लगी। वह रथ पर चढना ही चाहती थी कि भगवान् श्रीकृष्ण ने समस्त शत्रुओं के देखते-देखते उनकी भीड में से रुक्मिणी को उठा लिया और उन सैकडों राजाओं के शिर पर पाँव रख कर उन्हें अपने रथ पर बैठा लिया। रुक्मी को यह बात बिल्कुल सहन न हुई कि मेरी बहिन को श्रीकृष्ण हर ले जायें और बलपूर्वक उसके साथ विवाह करें। अब रुक्मी क्रोधवश हाथ में तलवार लेकर भगवान श्रीकृष्ण को मार डालने की इच्छा से रथ से कूद पडा और इस प्रकार उनकी ओर झपटा, जैसे पतिंगा आग की ओर लपकता है। जब श्रीकृष्ण ने देखा कि रुक्मी मुझ पर चोट करना चाहता है तब उन्होंने अपने बाणो से उसकी ढाल-तलवार को चूर-चूर कर दिया। फिर भी रुक्मी उनके अनिष्ट की चेष्टा से विमुख न हुआ। तब श्रीकृष्ण ने उसको उसीके दुपट्टे से बांध दिया। इस प्रकार श्रीकृष्ण ने सब राजाओ को जीत लिया, और विदर्भ राजकुमारी रुक्मिणी को द्वारका में लाकर उनका विधिपूर्वक पाणिग्रहण किया।

उषा-स्वयम्वर

(३)

लछमी सरोसति सहित नरायण
गगा गौरी गणेशे
गिरिजानन्दन दुरिक निकदन
वन्दौं सिद्ध गणेशे

वलिनन्दन वाणासुर भूपति
तीन भुवन जनि वीरे
शोणितपुर एक नग्र वखानल
जनि इन्द्रासन रूपे

हर पूजन चलु वाण महीपति
तेज सकल निज राजे
सहस्रबाहु लय ताल वजावत
गावथि शिवक समादे

शिव प्रसन्न हो वाण पान लय
मागु-मागु वर आजे
मोनक मनोरथ सुफल करव तोहि
कह तोरित तेज धाखे

कतय यतन वाणासुर वोलल
नत भय अजलि जोरे
दीनदयाल कृपा एक मिनती
मन दय सुनह मोरे

से सुनि शकर रोष भयकर
योजन खसल गय केते

हम सन युद्ध ताहि दिन पएवह
दर्प हरत रन माँझे

इशर बोल सुनि पुलकि पूरल
मोन पाओल एक निदाने
कइअ प्रणाम चलल निज मन्दिर
हरसित वान समाने

लिअ-लिअ नाथ साथ कत विह देल
गौरि सहित कैलासे
सुरसरि पैसि वैसि कय गायव
गधर्व देव विलापे

उपा सहित सखि चलु ओहि अवसर
मत्रि सुता सखि पासे
सग सखी कत गौरि अगावव
किञ्जरगन कत गावे

ओहि अवसर हर झिलहेरि खेलथि
नारि सहित नदि माँझे
देखि उपा मन वास मनोरथ
कखन मिलत मोर नाहे

उपा मनोरथ जान भवानी।
हुलसि हकारल पासे
राजकुमारि उसरि तोह वोलह
सभ विध पूरत आसे

माधव मास इजोत दोआदसि
धरहर सुतिहि एकते

जे हो पुरुष मुख सपना देखवह
सैह तोहर हैत कते

इशर ऊपर होउ सुखद वसन लिअ
गौरि सहित चलि गेली
कुमरि विदा भय घर पहुँचाएल
हरसित दरपित देहे

किछु दिन बीतल दोआदसि आयल
मास वइसाख इजोते
कुमरि सुमरि कय सुतलि धरोहर
सपना पुरुप देख गोरे

सुन्दर वर तन सांवर-सांवर
पीताम्वर तनु ओढे
वाहु अजानु कमलदल लोचन
चित्त हरल जेहि देखै

सकल सुरति सुत अनुभव सुन्दरि
जागि निड्हारए पामे
अवर सुधा मधुपान व्यतित कय
किय गेल कन्त उदासे

चिन्ता लाज वेआकुलि मानुपि
धाधस धरय न पावय
उसँसि-उसँसि रहु किछु ने कुमरि कहु
नैन तजय जलधारे

मन्त्रि-सुता सखि छपलि पलग लग
चित्ररेखा हुनि नामे

सम्मरि

कुमरि वात देखि जागि चकित भेल
पृछ्य लागल तसु वाते

कोन पुरुप तोरा हरल हिया वसि
कोन तोहर समिलापे

वदन चन्द्र तोर भेल मलिन किय
कह सुन्दरि तेज लाजे

अपरुप रूप पुरुप सँ सगति
रग कहइत मोरा लाजे

हर्ष-विषाद दुहुँ मोरा उपजय
नुमरि सुखायल गाते

मैं पट लिखौं चिन्ह सखि मन दय
जे तोहि हृदय निवासे

तीन भुवन जौं हयत कुमर वर
आनि मिलत तोंहि पासे

देवासुर गवर्व उपचारल
मानुप सकल उरेहे

यदुकुल लिखल कुमर अनुरुद्धहि
उपा चिन्हल वर एहे

हरि घर चोरि मोंहि कोना फरओत
तीन भुवन जिन केरे

से परकार रचहु सखि सुन्दरि
जौं जानी कुल शीने

तोंहि सखि योगिन लखय के पारै
पाँव परै चलि जाहे

जौं सखि प्रानक अछहु काज
मोरा आनि देखावह नाहे

कुमर निकट अवकासो ने पावै
भ्रमय निलो हित देहे
तौलि पलग पलख में आयल
मन्त्रि सुता सखि पासे

कुसुममाल लय कुमरि अनन्दित
कुमर गरौं पहिराए
निशि दिन गुप्त भोग करि सुन्दरि
बिसरल घर छव मासे

कोपि उठल अँग-अँग महीपति
कडकि कएल सिंहनादे
ओहि अवसर कोतवाल पुकारय
कुमरि महल कोइ आवै

सुनि वाणासुर कोह मोह भय
छूटलि कुमरि घर गेले
देखि कुमरि सग पुरुष महावल
सारि-पाश दुहुँ खेले

देख कुमर पर उठल मुद्गर
लय जनि दोसर यमराजे
धरय धसय कत मारि नरायल
बाहर क्यो नहि वाजे

फरक फराक ताक सौं निकलल
असुर कुमर दुई युद्धे

चारि मास घर सर्जनि शोच करु
कुमर उदेश नहि पंवे

नारद मुनि तव बात जनाओल
सुनि हरि कैल पयाने
राम कृष्ण दल दुगुन साजि करि
कोनाक मजव ननवीरे

नन्दी वसहा चढि इशर महादेव
कार्तिक चढिय मयूरे
भगत वचल हरि वाण मदित कय
लय निज सेना शूरे

भय भउ मेदिनि कप झप लय
वूर पीत रनि शूरे
अपन परार चिन्हय नहि पावे
दुहुँ दिशि वाजय दूरे

हलधर रुप करन हरि मारल
कार्त्तिक छोंडल जेने
हरि शरि मारि वान्हि तेजु सारथि
वान्हि जननि तेजु चीरे

भव भय भजन शरण चरण गति
दिज प्रभु मोहि हित जाने
उठि जो जर नोरा देल अभय वर
जे परसय मोर नामे

जे मोहि परसय ताहि जनि परसि
नहि त करव जिव घाते

पाँओन तरुवर सयय साङ्गि लय
हरि पर चलल लवाने

हरि लेल चक्र विदातिन आतिम
पाँओन तरुवरि सेथे
विहुँसि वचन मवुसूदन वोलय
वकसह मोर अपरावे

मेवक हमर परम वानासुर
हम अभिमत वर देले
अभिमत वर देलों हुलसि कँ
अवमर करव पुकारे

आनि वानि रथ जोति वहरायल
वसलि गेलि रनमांझे
वर-कन्या रथ जोति चढाओल
देल दहेज अनेके

गौरि मिलल जनि इशर महादेव
सिआ मिलल श्रीरामे
लछमी मिलल जनि देवनरायन
तें मँ दुहुँ अभिरामे

यदुकुल जीत एला पुरदेवक
पुरभऊ वन्दनिवारे
वाजन विविध सहस्र लच्छ वाजय
घर-घर मगल चारे

'लोकनाथ' प्रभु चक्रपाणि लय
अवमर करव पुकारे

लोकनाथ सुत चक्रपाणि लय
अवसर करव सुमार्ग

गीत की कथावस्तु का सारांश नीचे दिया जाता है—

एक दिन बल-पौरुष के घमंड में चूर वाणासुर ने शंकर से कहा—'देवाधिदेव, आप समस्त जगत के गुरु और ईश्वर हैं। मैं आपको नमस्कार करता हूँ। आपने मुझे एक हजार भुजाएँ दी हैं, परन्तु वे मेरे लिए भाररूप हो रही हैं। त्रिलोकी में मुझे अपनी बराबरी का कोई वीर योद्धा ही नहीं मिलता जो मुझसे लड़ सके।'

शंकर ने तनिक क्रोध से कहा—'रे मूढ, जिस समय तेरी ध्वजा टूट कर गिर जायगी, उस समय मेरे ही समान योद्धा से तेरा युद्ध होगा, और वह युद्ध तेरा घमंड चूर-चूर कर देगा।'

वाणासुर की एक कन्या थी, उसका नाम था ऊषा। अभी वह कुमारी ही थी कि एक दिन स्वप्न में उसने देखा—'परम सुन्दर युवक के साथ मेरा समागम हो रहा है।' तब से वह विक्षिप्त-सी दीखने लगी। वाणासुर के मंत्री कुम्भाण्ड की कन्या चित्र-लेखा ने अपनी सखी को खिन्न देख कर पूछा—'तुम किसे ढूँढ़ रही हो ? अभी तक किसी से तुम्हारा ब्याह भी तो नहीं हुआ ?

ऊषा ने कहा—'मैंने स्वप्न में एक बहुत ही सुन्दर युवक को देखा है। उसके शरीर का रंग साँवला-साँवला-सा है। नेत्र कमलदल के समान कोमल हैं। शरीर पर पीताम्बर फहरा रहा है। उसने पहले तो अपने अधरों का मधुर मधु मुझे पिलाया। परन्तु मैं उसे छक कर पी भी न पाई थी कि वह मुझे दुःख के सागर में डाल कर जाने कहाँ चला गया। मैं अपने उसी प्राणवल्लभ को ढूँढ रही हूँ।'

चित्रलेखा ने कहा—'यदि तुम्हारा चित्तचोर त्रिलोकी में कहीं भी होगा, और उसे तुम पहचान सकोगी, तो मैं तुम्हारी विरह-व्यथा अवश्य शान्त कर दूँगी। मैं चित्र बनाती हूँ, तुम अपने प्राणवल्लभ को पहचान कर बतला दो।'

यो कह कर चित्रलेखा ने बात-की-बात में बहुत-से देवता, गन्धर्व, सिद्ध, चारण, पन्नग, दैत्य, विद्याधर, यक्ष और मनुष्यो के चित्र बना दिये। जब उसने अनिरुद्ध का चित्र बनाया तब ऊषा ने कहा—'मेरा वह प्राण-वल्लभ यही है।'

चित्रलेखा योगिनी थी। वह आकाशमार्ग से रात्रि में ही द्वारकापुरी पहुँच कर, अनिरुद्ध को पलग समेत उठा कर शोणितपुर ले आई। अनिरुद्ध के सहवास से ऊषा का क्वारपन नष्ट हो चुका। उसके शरीर पर ऐसे चिह्न प्रकट हो गये, जो स्पष्ट इस बात की सूचना दे रहे थे कि जिन्हें किसी प्रकार छिपाया नहीं जा सकता था। पहरेदारों ने समझ लिया कि इसका किसी-न-किसी पुरुष से सबध हो गया है। उन लोगो ने बाणासुर से जाकर इस बात की शिकायत की। वह झटपट ऊषा के महल में जा धमका, और देखा कि अनिरुद्ध वहाँ बेखटके बैठा हुआ है। जब अनिरुद्ध ने देखा कि बाणासुर सुसज्जित वीर सैनिकों के साथ महल में घुस आया है तब वे उसे धराशायी कर देने के लिए एक भयकर मुद्गर लेकर डट गये, मानो स्वय कालदण्ड लेकर यम खडा हो। जब बली बाणासुर ने देखा कि यह तो मेरी सारी सेना का सहार कर रहा है, तब उसने क्रोध से तिलमिला कर उन्हें नागपाश में बाँध लिया।

बरसात के चार महीने बीत गये। परन्तु अनिरुद्ध का कहीं पता न चला। एक दिन नारद ने जाकर श्रीकृष्ण को सारा समाचार सुनाया। श्रीकृष्ण ने यदुवशियों की विशाल फौज लेकर बाणासुर की राजधानी को घेर लिया। घोर युद्ध हुआ। श्रीकृष्ण ने छुरे के समान तीखी धारवाले चक्र से उसकी भुजाएँ काट डालीं। अन्त में शकर के प्रार्थना करने पर श्रीकृष्ण ने बाणासुर को अभयदान दे दिया। वह अनिरुद्ध को अपनी पुत्री ऊषा के साथ रथ पर बैठा कर श्रीकृष्ण के पास ले आया। इधर द्वारका में अनिरुद्ध आदि के शुभागमन का समाचार सुन कर झडियो और तोरणो से नगर का कोना-कोना सजा दिया गया। बडी-बडी सडकों और चौराहों को शीतल जल से सींचा गया, और खूब धूमधाम के साथ उनका स्वागत हुआ।

सीता-स्वयम्वर

(४)

नगर अयोध्या राज उचित थिक[1]
जहँ वसु[2] दशरथ नन्द यो
राम क जोरी वसथि जनकपुर
छपन कोटि देल दान यो

गया नौतव[3] गदाधर नौतव
काशी नौतव विश्वनाथ यो
मृत्यु भुवन एक दानी नौतव
वासुकि नाग पताल यो

राजपाट पर रामजी वइसल[4]
झटकि चलु वरिआत यो
अठारह छौंहनि[5] वाजन वाजै
सवा लाखहि ढोल यो

जयखन[6] सुनता[7] कतेक वुझओता
धरु ध्यान धन-लोक यो
पहिल दान कयल तिल कुस लै
दोसर दान गोदान यो

तेसर दान कैल शाल दोशाला
चारिम दान कन्यादान यो
ऊखर आनल मूसर दै-दै
केहन ढक-ढक ताल यो

---

१ है। २ रहते है, राज्य करते है। ३ न्योतूगा। ४ वैठे। ५ अक्षौहिणी।
६ जिस समय। ७ सुनेंगे।

आमक पल्लव कगन वान्हल
ब्रह्मा वेद पढावि यो
भेल विवाह चलल राम कोवर[1]
सीता लै अगुरि घरावि यो

(५)

ऋषि मुनि चलला नहाय[2]
धनुप-तर नीपल हे
अजगुत[3] हम एक देखल
धनुप-तर नीपल हे

भल कयलौं[4] आहे सीता-भल कयलौं
धनुप-तर नीपल हे
एहि विधि रहव कुमार
जनम कोना वीतत हे

हम नहिं जानल वावा कि
पूजव भवानिय हे
घुरमि-घुरमि[5] सीता पूजथि
कि पुजथि भवानिय हे

सजि लिअ आहे सीता आरति
सजि लिअ धूप-दीप हे
सजि लिअ सखिया सलेहर[6]
जनकपुर-नन्दिनि हे

खँसल[7] सुगधित फूल
इन्द्र-लोक मोहित हे

---

१ कोहवर। २ स्नान करने। ३ आश्चर्य। ४ किया। ५ परिक्रमा करके। ६ हमजोली। ७ गिरना, टपक कर चूना।

अगिलहिं घोडा राजा रामहिं
पछिलहिं लछुमन हे

हम तोरा पुछु सीता
तुअ[1] मोरा भाउज हे
कओन सकट तोरा घेरल
पुजिए[2] भवानिय[3] हे

कहइत आहे बाबू लछुमन
कहइत लजाऊ हे
धनुष-सकट हमें घेरल
पुजिए भवानिय हे

फेरि[4] दिअ आहे सीता आरति
फेरि दिअ धुप-दीप हे
फेरि दिअ मखिया-सलेहर
जनकपुर-नन्दिनी[5] हे

होयव अयोध्याक रानी
कि तुरही बजाएव हे

---

१ तुम। २ पूजती हो। ३ पार्वती को। ४ वापिस कर दो। ५ सीता।

लग्न-गीत

लोक-सगीत महफिलो के लिए विवाह-उत्सव एक सर्वोत्तम अवसर है। मिथिला का विवाह-उत्सव बडा ही मनोरजक है। विवाह में वर-रक्षा, जिसे कहीं-कहीं सगाई भी कहते है, से लेकर चतुर्थी कर्म—ककण छूटने के दिन तक अनेक विधि-व्यवहार होते है। इसलिए यहां विवाह-सस्कार के पृथक्-पृथक् कर्मों में पृथक्-पृथक् शैली के गीत प्रचलित है। विवाह-सगीत की इन विविध शैलियो में कुछ ऐसे गीत है, जो वर्णनात्मक है, जिनमें केवल तथ्यपूर्ण घटनात्मक वर्णन है। उनमें विकास की वेदना का अतिरजन करने में कवि की तूलिका ने जमीन-आसमान के कुलाबे नहीं मिलाये है। केवल करुणावर्ती घटनाओं की दिव्य तरी काव्य की शुभ्र तटी में हसिनी-सी मन्द-मन्द विचर रही है। उनमें कुछ ऐसे गीत भी है, जिनमें विरहपूर्ण यन्त्रणा के आंसू ओस की नन्हीं बूंदो की तरह मोतियों के गोल-गोल दाने के रूप में बिखर गये है, और कुछ ऐसे है, जो प्रेम, करुणा, वैराग्य आदि मनोविकारो के अनेक रगों से रंजित वैचित्र्यनिलय-सा चित्रित हो रहे है, और विश्व के नैराश्य-रजित वातावरण से सतप्त आत्माओ का मनोरजन करते है।

विवाह-सस्कार की ऋतु आने पर पहले किसी शुभ मुहूर्त्त में कन्या के हित-कुटुम्बी, उसके पिता-भाई या उसकी ओर से नाई और ब्राह्मण जाकर विवाह की बात पक्की कर वर ठीक करते है। वर ठीक कर चुकने पर हाथ में केसर, हलदी और दही-अक्षत लेकर वर के ललाट में तिलक लगाते है।

वर को तिलक चढाने के बाद मण्डप-निर्माण और स्तम्भारोपण की वारी आती है। मण्डप-निर्माण और स्तम्भारोपण हिन्दू-विश्वासों के प्रतीक

है। ये मण्डप बहुत साफ-सुथरे और बाअसर होते है। इनके स्तम्भो में सुन्दर कलापूर्ण काम किया जाता है, जिसे देख कर प्राचीन वैदिक सस्कृति की याद नूतन हो आती हैं। मण्डप की भूमि प्राय ढालवाँ होती है, और आसपास की भूमि से एक या आध हाथ ऊँची। विवाह के पहले ही दिन मण्डप बन कर तैयार हो जाता है। मण्डप बनाने की विधि यह है कि उसकी लम्बाई और चौडाई बराबर रखी जाती है। मण्डप-निर्माण में पूर्व दिशा का भी पूरा विचार किया जाता है और ईशान, अग्नि आदि कोनो में मण्डप बनाना हानिकर माना जाता है। मण्डप में चार दरवाजे होते हैं। दरवाजे मण्डप की चारों दिशाओं—उत्तर, दक्षिण, पूर्व और पश्चिम की ओर बनाये जाते है। प्रत्येक दरवाजे के आगे एक-एक तोरण होता है; जो शमी, जामुन, और खैर की लकडी के होते है। लेकिन जो समर्थ हैं, वे उत्तर का तोरण बरगद का, दक्षिण का गूलर का, पश्चिम का पाकड का और पूरब का तोरण पीपल का बनवाते हैं। तोरण के दोनो पार्श्व खूबसूरत बेल-बूटो और सुगन्धित फूल-पत्तियो से सजाये जाते हैं।

मण्डप के हाशिये—किनारे की भूमि तीन भागों में विभक्त कर उसके चारो ओर बाँस के बारह खूँटे गाडे जाते है, और उनके सिरे में एक दूसरे को छूती हुई मुञ्ज की पतली रस्सी बाँध दी जाती है। मण्डप-भूमि के जिन-जिन स्थानो में रस्सी के छोरो का सम्मिलन होता है, उन-उन स्थानो में भी चार खूँटे गाडे जाते हैं और इन सोलह खूँटो के समानान्तर मण्डप-निर्माण में सोलह स्तम्भ व्यवहृत होते है। स्तम्भ किसी यज्ञिय वृक्ष के होते हैं, जैसे—देवदारु, पीपल, गूलर, पलाश, बिल्व आदि। मण्डप का छाजन बगलेनुमा होता है, और फूस तथा चटाई से छाया जाता है। छाजन के भीतरी हिस्से गेंदई, धानी, सुरमई अथवा सलमे-सितारे से जडे चँदोवे और रग-बिरगी फूल-पत्तियो से सजाये जाते हैं। मण्डप की सजावट इतनी सुन्दर होती है कि कोई भी व्यक्ति उस पर गर्व कर सकता है। मण्डप के स्तम्भो में भी वन्दनवार, आम के हरे पल्लव, केले के पत्ते, फूलों के छज्जे, नरम बनात और मखमल के सुनहरे फरेरे और कृत्रिम फूल लगाये जाते हैं।

भभक उठा है, और विवाह के लिए समानता के आदर्श, पारस्परिक प्रेम या मित्रता को ही वर-वधू का हार्दिक समर्थन मिला है।

मैथिली विवाह-गीतों के वर्ण-पट में मयूर-पुच्छ की भाति विविध शैली की विविधरगी रेखायें दिखलायी पडती है। इनमें प्रत्येक की भाव-भगी भिन्न है। इसीलिए, यद्यपि गीत-पट की भिन्न-भिन्न शैली के रगो का एकत्रित रूप-चित्र प्रस्तुत करना कठिन है तो भी यहा केवल विशेष चमकती हुई रेखाओं का ही परिचय दिया गया है।

यहाँ मिथिला के कुछ चुने हुए लोक-गीत दिये जाते है, जो विवाह के अवसर पर गाये जाते है—

(१)

निम्न-लिखित गीत सिन्दूर-दान के पूर्व विवाह-पडाल में कन्या-पक्ष की ओर से गाया जाता है। पुरातन ग्राम-सस्कृति इस गीत की पृष्ठभूमि है—

कहमहि जनमल आगर-चानन
कहमहि उपजय बगला- पान हे
कहमहि जनमल सीता-अइसन सुन्दरि
कहमहि जनमल श्रीराम हे
वनहि मे जनमल आगर-चानन
वनहि में उपजय वगलापान हे
जनकपुर में जनमल सीता अइसन सुन्दरि
अयोध्या में जनमल श्री राम हे
आउ-धाउ नउआ हे आउ धाउ बाभन
आउ-धाउ अयोध्या के लोग हे
सउँस अयोध्या में राम जी दुलरुआ
हुनके क तिलक चढाउ हे
आउ-धाउ नउआ हे आउ-धाउ वाभन
धाउ-धाउ अवध क लोग हे

हमरा अयोध्या में सोने क मरउआ
सोने क मरउआ मँगाउ हे
मरवा के ओते-ओते सीता मिनति करथि
सोआमीजी सँ अरज हमार हे
सोने क मरउआ से विआह् न होयत
इकरी के माडव छवाउ हे
धाउ-धाउ नउआ हे धाउ-धाउ वाभन
धाउ-धाउ अयोध्या क लोग हे
हमरा अयोध्या में सोने क मउरिया
सोने क मउरिया मँगाऊ हे
मउरी क ओते-ओते सीता मिनति करथि
सोआमीजी न अरज हमार हे
सोने क मउरिया स विआह् न होयत
फुलवा के मउरि मँगाउ हे
धाउ-धाउ नउआ हे धाउ-धाउ वाभन
धाउ-धाउ अयोध्या के लोग हे
हमरा अयोध्या में सोने क कलसवा
सोने क कलस मँगाउ हे
कलसा क ओते-ओते सीता मिनति करथि
सोआमी जी न अरज हमार हे
सोने क कलसा से विआह न होयत
माटी के कलस मँगाउ हे

कहाँ मलयागिरि चन्दन पैदा होता है, और कहाँ बंगला पान?
कहाँ सीता-सी सुन्दरी अवतरित हुई, और कहाँ श्रीराम पैदा हुए?
वन में मलयागिरि चन्दन पैदा होता है, और वन ही में बंगला पान।

जनकपुर में सीता-सी सुन्दरी अवतरित हुई, और अयोध्या में श्रीराम पैदा हुए।

हे हज्जामो! आओ! दौड़ो!! हे ब्राह्मणो! आओ! दौड़ो!! हे अवध के रहनेवालो! आओ! दौड़ो!! सारे अयोध्या के राम प्यारे हैं। उनको तिलक चढ़ाओ।

हे हज्जामो! आओ! दौड़ो!! हे ब्राह्मणो! आओ! दौड़ो!! हे अयोध्या के रहनेवालो! दौड़ो! दौड़ो!! हमारे अवध में सुवर्ण का मण्डप है। जाओ। ला दो।

सीता मण्डप की ओट में अपने पति से निवेदन करती है कि सुवर्ण-निर्मित मण्डप में हमारा व्याह न होगा। कुश और बाँस-पत्तियों से मण्डप सजा दो।

हे हज्जामो! आओ! दौड़ो!! हे ब्राह्मणो! आओ! दौड़ो!! हे अवध के रहनेवालो!! दौड़ो! दौड़ो!! हमारे अवध में सुवर्ण-निर्मित मुकुट है। जाओ। ला दो।

मुकुट की आड में सीता अपने पति से अनुरोध करती है कि सुवर्ण-रचित मुकुट से हमारा व्याह न होगा। इसलिए फूल का मुकुट ला दो।

हे हज्जामो! दौड़ो! दौड़ो!! हे ब्राह्मणो! दौड़ो!! हे अवध के बाशिन्दो! दौड़ो! दौड़ो!! हमारे अवध में सोने का कलश है। ला दो।

कलश की ओट में सीता अपने पति से निवेदन करती है कि सोने के कलश से हमारा विवाह न होगा। अत मिट्टी का कलश मँगवा दो।

यह गीत हिन्दू-सभ्यता के उस समय का स्मरण दिलाता है, जब लोग सुवर्ण-निर्मित मण्डप और मुकुट की अपेक्षा बाँस-पत्तियों तथा फूल के मुकुट और मण्डप को ही उत्कृष्ट समझते थे। यह गीत गाँवों की प्राचीन संस्कृति का एक सुन्दर प्रमाण है। इसमें गाँव के प्राचीन आदर्श का परिचय सीता के मुख से अपने स्वाभाविक रूप में कराया गया है।

(२)

पिपरक पात झलमलि हे
वहि गेल तितल वतास
ताहि तर कोन वावा पलगा ओछाओल
वावा क आयल सुख नीद हे
चलइत-चलइत अइलि वेटी कोन वेटी
खटिआ के पउआ धयले ठाढि हे
जाहि घर आहे वावा घिआ हे कुमारि
से हो कोना नुतथि निचित हे
अतना वचनिया जव सुनलन्हि कोन वावा
घोडा चढि भेला असवार हे
चलि भेल मगह मुगेर हे
पुरुव खोजल वेटी पछिम खोजल
खोजल में मगह मुगेर हे
तोहरा जुगुति वेटि वर नहि भेंटल
खोजि अएलौं तपसि भिखार हे
निरधन तपसिया हमें न विआहव
मरि जएवौं जहर चवाय हे

पीपल के झिलमिल पत्ते हैं। मन्द-मन्द शीतल हवा वह रही है। उस पीपल की ठंडी छांह में अमुक पिता पलग विछा कर वैठा और ठंडी हवा के झोंके से गाढी नींद में सो गया।

यह देख कर अमुक वेटी वहां पलंग का डांड पकड कर खड़ी हुई, और वोली—

'हे पिता, जिसके घर में कुँआरी कन्या है, भला वह किस तरह सुख की नींद सोयेगा?'

यह सुन कर उसका पिता घोडे पर सवार हुआ, और दूल्हा की

तलाश में निकला। उसने पूरब ढूंढा, पच्छिम ढूंढा, मगध और मुगेर भी ढूंढ डाला; लेकिन उसकी कन्या के उपयुक्त वर नहीं मिला।

अन्त में उसने लौट कर अपनी कन्या से कहा—'हे बेटी, तुम्हारे उपयुक्त वर नहीं मिला। अत: मैंने तुम्हारे लिए एक निर्धन वर तलाश किया है।'

कन्या ने कहा—

'हे पिता, निर्धन तपस्वी को मैं नहीं ब्याहूंगी। (निर्धन को ब्याहने के पूर्व ही) मैं गरल-पान कर मर जाऊंगी।'

इस गीत से मालूम होता है कि जिस समय का यह गीत है, उस समय कन्या अपना जीवन-सगी चुनने के लिए स्वतत्र थी और वह अपनी इच्छा के अनुरूप योग्य वर का वरण करती थी। इसीलिए जब पिता ने अपनी कन्या के उपयुक्त वर न ढूंढ कर एक निर्धन तपस्वी को तिलक चढाया तो कन्या ने उसका विरोध किया। इसके अतिरिक्त कन्या के विवाह के लिए पिता को कितनी चिन्ता होती है, यह कवि ने 'जाहि घर आहे बाबा धिया हे कुमारी, से हो कइसे सुतथि निचित हे' में बडे मार्मिक ढग से चित्रित किया है।

(३)

देखु देखु देखु सखिया श्यामल पहुनमा हे
जिनका देखइत सखी मोहि जात मनमा हे
मिथिला के असही-दुसही डारे ने कोइ टोनमा हे
ताते सहेलिया मोरी दइ दिउ डिठोनमा हे
घोरवा चढल आवै छयला अलबेलवा हे
घोरवा गुमान भरे करे फनफनमा हे
जोहर जरित जिन जेवर झनझनमा हे
झुकि झुकि चुचुकारे झुले मोरिया छोरनमा हे
भाल विशाल पर तीन रेखनमा हे
मनहु जनावे तीन लोकन अइसनमा हे
गोल-गोल गाल पर डोले अलकनमा हे

झुकि-झुकि पूछे मानो केहि मन ठेकनमा हे
मुशकन मद पीके डोले मोतिया कुण्डलनमा हे
चोलिया अनमोलिया पर अग पुलकनमा हे
मलवा अलबेलवा सखी देवय सिखनमा हे
आउ- आउ शरनिया हुनकि चाहु कल्यनमा हे
जनके हित करते-करते वढे कर-कमलनमा हे
अँखिया में रहते-रहते श्याम भेल रगनमा हे
मुट्ठी एक ऊँच छथिन सिया से सजनमा हे
एके गढवैया गढे दुहुँ के गढनमा हे
धन-धन किशोरी मोरी जेहि लागि ललनमा हे
आपहि सँ वनि अयलन्हि मिथिला मेहमनमा हे
जुग-जुग जीवयु सखि दुलहिन दुलहनमा हे
सब सखि मगल गावे वरसे नुमनमा हे

हे सखी, देखो। सांवरे दूल्हे को देखो, जिसे देखते ही मन आकर्षित हो जाता है।

मिथिला की कोई डायन दूल्हे पर टोना न कर दे। हे सखी, नजर से बचाने के लिए दूल्हे के माथे में काजल का टीका लगा दो।

हे सखी, देखो वह अलवेला दूल्हा घोडे पर सवार होकर आ रहा है। घोडा गुमान से भरा है। चुस्ती से अकड कर कूद रहा है। उसकी पीठ पर जवाहर से जड़ा हुआ जीन है। गहने से लदे हुए उसके अग-प्रत्यंग झकृत हो रहे हैं।

दूल्हे के मुकुट के झूलते हुए छोर झुक-झुक कर घोडे को पुचकार रहे हैं।

दूल्हे के विशाल ललाट पर चन्दन की तीन रेखाए हैं, जैसे वे तीनो लोक की विशालता की सूचना दे रही हों।

दूल्हे के गोल-गोल गाल पर काले-काले छल्लेदार वाल बिखर रहे हैं, जैसे ये झुक-झुक कर दूल्हे के मन की वात पूछ रहे हो। दूल्हे की मद-भरी

मुसकान पी कर मोती से जडे हुए कुडल डोल रहे हैं, और उसकी अनमोल बोली सुनकर श्रोता आनन्द-विभोर हो जाते हैं।

हे सखी, लगता है जैसे दूल्हे के वेशक़ीमती हार कह रहे हों—'हे मनुष्य, यदि कल्याण चाहते हो तो दूल्हे की शरण आओ।'

सज्जनों का हित करते-करते दूल्हे के कर कमल खिल गये हैं, और श्रद्धालु भक्तों की आँखों में रहते-रहते उसका रग साँवला हो गया है।

हे सखी, दूल्हा दुलहिन सीता से एक मुट्ठी ऊँचा है। मालूम होता है, एक ही कारीगर ने दोनो की सृष्टि की है।

हे सखी, हमारी सौभाग्यवती सीता धन्य है जिसके लिए ऐसा सुन्दर दूल्हा स्वय मिथिला का मेहमान वन कर आया।

हे सखी, दूल्हे और दुलहिन की यह युगल जोडी युग-युग जीये।

इस प्रकार सखियाँ प्रफुल्लित होकर मगल गाने लगीं, और दूल्हे पर बार-बार फूलों की वर्षा की।

(४)

वर की माँगे—वर सोने क अगुठी
रूमाल माँगे
वर चन्दन मे रोली लगाय माँगे
वर की माँगे
वर सिकरी माँगे—
वर सिकरी में करी लगाय माँगे
वर की माँगे
वर दुलहिन माँगे—
वर दुलहिन में परदा लगाय माँगे

दूल्हा क्या माँगता है?
सोने की अँगूठी माँगता है—रूमाल माँगता है।
चन्दन में रोली लगा कर माँगता है।
दूल्हा क्या माँगता है?

सिकडी मांगता है—सिकडी में कड़ी लगा कर मांगता है।

दूल्हा क्या मांगता है?

दुलहिन मांगता है—दुलहिन में पर्दा लगा कर मांगता है।

(५)

जरी क टोपी में रूपा लगे
पेन्हु त रामजी देखव भरि नजरी
हँसु त रामजी देखव भरि नजरी
चलु त रामजी देखव भरि नजरी
आजु त रामजी अवधपुर नगरी
काल्हु त रामजी जनकपुर नगरी
सोने क कुडल में मोती जरे
पेन्हु त रामजी देखव भरि नजरी
चलु त रामजी देखव भरि नजरी
सोने क माला में हीरा जरे
पेन्हु त रामजी देखव भरि नजरी
इतर क पानी में चन्दन घिसे
करू त रामजी देखव भरि नजरी

जरी की टोपी में रूपा खिल रहा है। हे दूल्हा, जरा पहन तो लो, आंखें भर कर देखूं?

हे दूल्हा, जरा हँस तो दो, आंखें भर कर देखूं?

जरा चलो तो आंखें भर कर देखूं?

आज दूल्हा अवध में है। कल जनकपुर रहेगा।

सोने के कुंडल में मोती सुशोभित है। हे दूल्हा, जरा पहन तो लो, आंखें भर कर देखूं?

सोने के हार में हीरा सुशोभित है। हे दूल्हा, जरा पहन तो लो, आंखें भर कर देखूं?

जरा चलो तो, आंखें भर कर देखूं?

इत्र के जल में चन्दन घिसा हुआ है। हे दूल्हा, जरा लगा तो लो, आँखें भर कर देखूं?

(६)

दुलहा आए दुअरिया मे– घन साजु हे सखिया इजोरिया मे
दउरि चलत प्रभु हँसत सखी सब जनमाए बाजीगरिया से
ठुमुकि चलत कहत सखी सब जनमाए हाथि हथिसरिया में
ठारि भए प्रभु कहत सखी सब जनमाए शैल सगरिया मे

दूल्हा द्वार पर आ गया। हे सखी, चलो हम जमात में सज-धज कर चांदनी रात में दूल्हे का स्वागत करें।

दूल्हा दौड कर चलता है तब सखियाँ ताली पीट देती है। कहती है—'लगता है जैसे दूल्हे की माँ ने दूल्हे को अस्तवल में घोडे के साथ प्रसग कर पैदा किया है।'

दूल्हा द्वार पर आ गया। हे सखी, चलो हम जमात में सज-धज कर चाँदनी रात में दूल्हे का स्वागत करें।

दूल्हा धीरे-धीरे पाँव उठाता है तो वे कहती है—'लगता है जैसे दूल्हे की माँ ने दूल्हे को हाथी के साथ प्रसग कर फीलखाना में पैदा किया है।'

और जब दूल्हा सकोच में पड कर रुक जाता है तो वे कहती हैं—'मालूम होता है, जैसे दूल्हे की माँ ने पहाड के साथ प्रसग कर दूल्हे को समुद्र में पैदा किया है।'

दूल्हा द्वार पर आ गया। हे सखी, चलो हम जमात में सज-धज कर चाँदनी रात में दूल्हे का स्वागत करें।

(७)

चितचोरवा आजु वन्हैलनि हे
एहि चितचोरवा के शिर मणि मउरवा
छोरवा छवि छहरओलनि हे
एहि चितचोरवा के चोखे दृग कोरवा
ओठवा अनुठवा कहओलनि हे

सोने के उखरिया मे मणि के मुसरवा
आठे चोट चउरवा छोरओलनि हे
ओहि रे चउरवा के वान्हु शुभ करवा
सिया प्यारी वरवा कहओलनि हे
एहि चितचोरवा के लालि-लालि ठोरवा
मनमोरवा भरमओलनि हे
चितचोरवा आजु वन्हैलनि हे

हे सखी, आज यह चित्तचोर वांध दिया गया।

इस चित्तचोर के शिर पर मणि का मुकुट है, जिससे सौन्दर्य उमडा पडता है।

हे सखी, इस चित्तचोर की आखों की कोर नुकोली है। होठ अनूठे है।

सोने के ऊखल में मणि का मूसल है जिससे छाट-छाट कर चावल छुड़ा लिया गया। उस चावल को सुन्दर हाथो में रख कर राम सीता का दूल्हा वन गया।

हे सखी, दूल्हे के होठ लाल-लाल है जो दर्शको के चित्त को आकर्षित कर लेते है।

हे सखी, आज यह चित्तचोर, वन्धन में वांध दिया गया।

(८)

धरिअउ मूसर सम्हारि अठोगर विघ भारी हे
आठ ही चोट अहाँ कसि-कसि मारु
देखु अहाँ के वरिआरी
मार मडप चहुँ ओर घुमाओल
वेदी क नजर निहारी
एहि विधि करत अठोगर चारु दुलहा
सखी सब गावत गारी
अठोगर विध . भारी हे

हे दूल्हे, मूसल सँभाल कर पकड़ो। अठोंगर की विधि (अत्यन्त) कठिन है।

मूसल की मोटी धार से आठ बार कस-कस कर धान कूटो। देखूं, तुम्हारे बाजू में कितना बल है।

हे दूल्हे, अठोंगर की विधि (अत्यन्त) कठिन है।

साला—दुलहिन का भाई दूल्हे को (उसकी गरदन में चादर लपेट कर) वेदी के चारों ओर (वेदी पर दृष्टि रख कर) घुमा रहा है।

इस प्रकार चारों दूल्हे—राम, लक्ष्मण, भरत और शत्रुघ्न अठोंगर की विधि सम्पन्न कर रहे हैं। सखियां गाली दे रही हैं।

हे दूल्हे, अठोंगर की विधि (अत्यन्त) कठिन है।

(९)

दुलहा देखन में छथि छोट, विद्या गुनन में छथि मोट
दुलहा अहाँ लिय खाउ बरफी, कोबर में मिलत अशरफी
दुलहा अहाँ लिय खाउ पेरा, न अइ में करू बखेरा
दुलहा तनि लिय खाउ बताशा मत करू बहुत तमाशा
दुलहा तनि लिय खाउ धनिया, अहाँ क कोवर में मिलत कनिया

दूल्हा देखने में छोटा है। पढ़ने में खोटा।
हे दूल्हा, तुम बर्फी खाओ। कोहवर में तुम्हें अशरफी मिलेगी।
हे दूल्हा, पेड़ा खाओ। बखेड़ा मत करो।
हे दूल्हा, बताशा खाओ। तमाशा मत करो।
हे दूल्हा, धनिया खाओ। कोहवर में तुम्हें कनिया (दुलहिन) मिलेगी।

(१०)

मोर पछुअरवा लवग केर गछिया
लवगा चुअए आधि रात हे
लवगा में चुनि-चुनि सेजिया डँसाओल
इगुर ढेउरल चारु कोन हे

ताहि सेजिया सुतलन्हि दुलहा कओन दुलहा
सगे भड़अवक धिआ हे
आशुर सुतु आशुर वइसु कन्या सुहवे
घाम सँ चादर होय मझल हे
अतना वचनिया जव सुनलन्हि कन्या सुहवे
रूसलि नइहरवा के जाथि हे
एक कोस गेलि दोसर कोस गेलि
तेसर कोस नदि छछकाल हे
आ रे आ रे केवट मलहवा रे भइया
जल्दी से नइया लय आउ हे
आजुक रतिया सुनरि अतहि गँवाऊ
विहने उतारव पार हे
आ रे आ रे केवट मलहवा रे भइया
अहाँक वोलि मोहि ने मोहाय हे
सेजयाहि छोड़ल कुँअर कन्हैआ
जइमें सुरुजव क जोत हे
एक लेवय आवय आजन-वाजन
दोसर आवय मोजन लोग हे
तेसर लावन आवय दुलहा सँ कोन दुलहा
मोहि मनावन होय हे

मेरे पिछवाड़े लौंग का गाछ है। लौंग आधी-आधी रात को चूता है। लौंग बीन-बीन कर मैंने सेज सजाई और कोहवर के चारों किनारे इंगुर और चोआ-चन्दन से चर्चित किया।

उस सेज पर अमुक दूल्हा सोया और उसके साथ (उसकी प्रियतमा) अमुक कन्या सोई।

दूल्हे ने कहा—'हे प्यारी, तुम मुझसे हट कर सोओ। हट कर बैठो। पसीने से मेरी चादर मैली हो जायगी।'

यह सुन कर उसकी प्रियतमा रूठ कर नैहर चली। वह एक कोस गई। दो कोस गई। जब वह तीसरा कोस तय करने लगी तो सामने भयानक नदी दीख पड़ी।

नायिका ने कहा—'रे केवट भाई, जल्दी नाव लाओ, और मुझे पार लगा दो।'

मल्लाह ने कहा—'हे सुन्दरी, आज की रात तुम मेरे ही साथ बिताओ। कल प्रातःकाल तुम्हें पार लगा दूंगा।'

नायिका ने उत्तर दिया—'रे केवट भाई, मुझे ऐसी कलुषित बोली नहीं भाती। मैंने अपनी सेज पर (तुमसे सुन्दर) सूर्य के प्रकाश की तरह देदीप्यमान अपने प्रियतम का परित्याग कर दिया, और मुझे वापिस ले जाने के लिए हित-कुटुम्ब, मेरे पुरजन-परिजन और मेरे प्रियतम अमुक दूल्हा आ रहे हैं।'

इस गीत में प्राचीन आर्य-संस्कृति का एक क्षीण आभास वर्त्तमान है, जब आर्य-ललनाएँ लाख प्रलोभन मिलने पर भी धर्म से च्युत नहीं होती थीं। गीत की नायिका जब अपने पति से अपमानित होकर नैहर चली तो रास्ते में उसके सौन्दर्य्य पर एक मल्लाह लट्टू हो गया। इस पर उस सती साध्वी स्त्री ने उस मल्लाह को जो उत्तर दिया, वह उसके उच्च चरित्र-बल का परिचायक है।

(११)

सांवली सुरतिया बिलोकु सखिया
हे विलोकु सखिया
जादूवाली अपन जदुआ बचाए रखिह
हे बचाए रखिह
अपन टोनावाली टोनमा सम्हार रखिह
हे सम्हार रखिह
शिर के मऊरिया विलोकु सखिया
हे विलोकु सखिया
लाल-पीत जामा-जोरा देखु सखिया
हे देखु सखिया

मुखवा के पनमा विलोकु सखिया
हे विलोकु सखिया
जादू-भरी अँखिया निहारु सखिया
हे निहारु सखिया

हे सखी, इस साँवरी सूरत को तो देखो। हे सखी, तनिक देख लो।

हे जादूवाली जोगन, अपने-अपने ततर-मतर रोक रक्खो।

रोक कर रक्खो अपने-अपने ततर-मतर!

हे टोनेवाली जादूगरनी, अपने-अपने टोने सँभाल कर रक्खो।

सँभाल कर रक्खो अपने-अपने टोने। दूल्हे पर कोई वशीकरण टोना ना डाले।

हे सखी, दूल्हे के सिर के मुकुट को तो देखो। तनिक सिर के मुकुट को देख लो।

हे सखी, उनके लाल-पीले आभरण को तो देखो। हे सखी, तनिक उन्हें देख लो।

हे सखी, उनके होठ के पान की लाली तो देखो। हे सखी, तनिक उन्हें देख लो।

और हे सखी, उनकी जादू-भरी आँखें भी देखो! हाँ हे सखी, तनिक उन्हें देख लो।

(१२)

मिथिला नगरिया की चिकनी डगरिया
सखि धीरे-धीरे
चले जात दुनु भइया, सखि धीरे-धीरे
दाएँ-बाएँ गौर-श्याम
ठुमुक धरत पाँव, सखि धीरे-धीरे
विहरत शहर डगरिया, सखि धीरे-धीरे
निरखत धवल धाम
हरखि कहि-कहि ललाम
चितवत कलग अटरिया, सखि धीरे-धीरे

देखन मह देव-योग
हँसि-हँसि कहत लोग, सखि धीरे-धीरे
• जादू-भरी नजरिया, सखि धीरे-धीरे

मिथिला नगर की चिकनी डगर पर—जा रहे री सखी, धीरे-धीरे !
दोनों भाई—दाएँ-बाएँ
सांवले और गोरे; राम और लक्ष्मण।
री सखी, थम-थम कर उठाते हैं पांव, धीरे-धीरे।
शहर की गली-गली और डगर-डगर में—
विहर रहे हैं, री सखी, धीरे-धीरे !
लो घूर-घूर कर निहार रहे हैं धवल प्रासादों को—
और उसके लावण्य की दाद दे रहे हैं—पुलक-पुलक कर !
हेर रहे हैं एक टक अट्टालिकाओं की मुंडेर को—
अपनी चितवन से, री सखी, धीरे-धीरे !
लोग हँस-हँस कर कह रहे हैं—
देवता के तुल्य हैं वे देखने में।
आह, उनकी आँखें जादू-भरी हैं, री सखी, धीरे धीरे !

(१३)

विजुवन विजुवन तलिया खनावल
तलिया कँ चिकनियो माटि हे
ताहि पइसि मालिन कमल रोपावल
भँओरा पइसि रस लिउ हे
आँख अहाँक देखु दुलरुआ कमल कँ फुलवा
ओठ अहाँक लगै विमफल हे
दाँत अहाँक देखु दुलहुआ
अनार केर दनमा
गरदन शीशा कँ होर हे

एतना सुरतिया के दुलहा मे कोन दुलहा
कोन विधि रहलि कुमार हे
वावा जें हमर दर रे देवनिया
पितिया जोतथि कुँर खेत हे
भाय जें हमर जीरा कँ लदनिया
तेहि सासु रहलि कुमार हे
वावा जे छोडलन्हि दर रे देवनिया
पितिया कयल कुँर खेत हे
भइया जे छोडलन्हि जीरा के लदनिया
अव सासु होयत विआह हे

विजुवन में तालाव खुदाया। उसकी मिट्टी चिकनी है। उसमें पैठ कर मालिन ने कमल का पौधा लगाया, जिसमें क्रीडा कर भौंरा कमल का रस पीता है।

दूल्हे की सास कहती है—'हे दूल्हा, तुम्हारी आँखें ऐसी हैं, मानो कमल के फूल हों। तुम्हारे होंठ कुदरु फल की तरह लाल हैं। तुम्हारे दाँत अनार के दाने की तरह विखरे हैं, और तुम्हारी गरदन सुराही की होड करती है। इतना सौन्दर्य्य पाकर भी हे अमुक दूल्हा, न मालूम तुम अव तक कैसे क्वारे रहे ?'

दूल्हे ने कहा—हे सास, मेरे पिता दरवारदारी करते थे। चाचा गृहस्थी का काम सँभालते थे, और मेरे भाई जीरे के व्यापारी थे। इसलिए मैं अव तक क्वारा रहा।

लेकिन, अव मेरे पिता ने दरवारदारी का पेशा छोड दिया। चाचा गृहस्थी का काम सँभालते रहे और मेरे भाई ने जीरे का व्यापार करना छोड दिया। इसलिये हे सास, अव मेरा व्याह होगा।

इस गीत में कवि ने गरदन की उपमा सुराही से देकर हिन्दी में एक नई मिसाल पेश की है। यह संस्कृत और हिन्दी-साहित्य के लिए विल्कुल

अनोखी बात है। हिन्दी में तुलसी, सूर आदि महाकवियों ने गरदन की उपमा शख से दी है—

'रेखा रुचिर, कम्बु कल ग्रीवा,
जनु त्रिभुवन-सुखमा की सीवा।'

गीत में व्यवहृत 'सुराही' की उपमा से प्रतीत होता है कि इस पर मुगल-कालीन संस्कृति की छाप है। क्योंकि फारसी और उर्दू-साहित्य में गरदन की उपमा सुराही से दी गई है—

'कुरबान तेरी आँख पै, हो दीदए-सागर
गरदन पे फिदा शीशए, बिल्लौर की गरदन।'

(१४)

कोवर लिखल कोशिला रानी
अओरो सुमित्रा रानी हे
आम कें घौंद लिखल केकइया रानी
बड रे यतन सये हे
ताहि कोवर सुतलन्हि कोन दुलहा
संगे कन्या सुहवे हे
मुहमा उघारि जब प्रभु देखलन्हि
किय किय अभरन हे
माग के टीका प्रभु तोहे छहु
देवरा शखा चुढि हे
चन्द्रहार सासु दुलरइतिन
बाजुबन्द देवरानी हे
पुत मोरा नयना के इजोरवा
ननद नवरग चोलि हे
भँइसुर माँग के टिकुलिया
ए हो रे सब अभरन हे

रानी कौशल्या और सुमित्रा ने कोहवर को विविध प्रकार से सजाया और कैकेयी ने बड़े यत्नपूर्वक आम के फले हुए गुच्छे के चित्र लिखे।

ऐसे सुचित्रित कोहवर में अमुक दूल्हा सोया, और उसके साथ उसकी नवोढ़ा दुलहिन भी सोई।

दूल्हे ने अपनी नवोढा दुलहिन का घूंघट खोला, और पूछा—

'हे प्रियतमे, तुम्हारे पास कौन-कौन आभूषण हैं?'

दुलहिन ने उत्तर दिया—हे सजन, तुम मेरी मांग का शृंगार हो। मेरा देवर शंख की चूड़ी है। मेरी सास मेरे गले का चन्द्रहार है, और देवरानी मेरा बाज़ूबन्द। मेरा पुत्र मेरी आँखों का दिव्य नूर है। मेरी ननद नवरंगी चोली है, और मेरा भसुर मेरी मांग की टिकली। हे सजन, यही मेरे शरीर के आभूषण हैं।'

कितने सुन्दर भाव हैं? यदि हमारे देश की सभी कुल-ललनाएँ सोने-चाँदी के कृत्रिम गहनों को ठुकरा कर परिवार के लोगों को ही अपना गहना समझ लें, तो सामाजिक गृह-कलह सदा के लिए बन्द हो जायँ।

(१५)

कथि बिनु आहे अमा चउरबो ने सीझल
कथि बिनु अँखियो ने नींद हे
दूध बिनु आहे बेटी चउरबो ने सीझल
पुत्र बिनु अँखियो ने नींद हे
जाहि दिन आगे बेटी तोहरो जनम भेल
भरला भदउआ के रात हे
दाइ तोहर गे बेटी मनहिं बेदिल भेल
घरे-घरे ठोकल केंवार हे
फूआ तोहर गे बेटी मनहिं कुपित भेल
गोरे-मुरे चादर लपटाय हे

गोइठि कसिय गील वोरसि भरयलन्हि
दुख सँ काटलि रात हे
जाहि दिन आगे वेटी पुत्र हे जनम लेल
भेल पूर्णिमा के रात हे
दाइ तोहर गे वेटी मनहिं हुलसि गेल
घरे-घरे खोलल किवार हे
फूआ तोहर गे बेटी मनहि हरसित भेल
सब सखी सोहर उठाउ हे
वाप तोहर गे बेटी मनहिं हरसित भेल
कठउत मोहर लुटाउ हे
धूप भरिय बेटी बोरसि भरयलन्हि
सुख सँ काटल आ हे रात हे

बेटी ने पूछा—'हे माँ, किस वस्तु के अभाव में चावल नहीं गला, और किसके बिना आँख में नींद नहीं आई?'

माँ ने कहा—'हे बेटी, दूध के अभाव में चावल नहीं गला, और पुत्र के बिना आँख में नींद नहीं आई। हे बेटी, जिस दिन तुम्हारा जन्म हुआ, उस दिन भादों की अँधेरी रात थी। तुम्हारी दादी का चित्त उदास था। उसने घर-घर के द्वार बन्द कर शोक मनाये। तुम्हारी फूआ आगवगूला हो गई और सिर से पैर तक चादर लपेट कर सो गईं। और, मैंने जगल के गीले कडे लेकर अँगोठी जलाई और बडी बेचैनी में रात काटी।

लेकिन हे बेटी, जिस दिन मेरे पुत्र का जन्म हुआ, उस दिन पूर्ण चाँदनी खिल गई। तुम्हारी दादी बाँसों उछल पडी। उसने घर-घर के द्वार खोल कर उत्सव मनाये। तुम्हारी फूआ आनन्द-विह्वल हो गई। सखियों ने मिल कर मगल गाये। तुम्हारे पिता बडे प्रसन्न हुए, और कठौता-भर मुहरें दान कीं। और हे बेटी, मैंने सुगन्धित धूप भर कर अगीठी जलाई तथा बडे सुखपूर्वक रात काटी।'

(१६)

कहमहि लिखल मोर रे मजुरवा
कहमहि लिखल आठ दल रे
कोवर लिखल मोर रे मजुरवा
वेदिय लिखल आठ दल रे
कहमहि वोलल कारी रे कोयरिया
कहमहि वोलल मजूर रे
आम डारि वोलल कारी रे कोयलिया
दुअरहि वोलल मजूर रे
कोवरहि वोलल दुलहा से कोन दुलहा
जकर अति वड भाग रे
केहि मोरा लिखलन्हि एहो प्रेम कोवर
केहि सेज फूल छिरिआउ रे
साली मोरा लिखलन्हि ए हो प्रेम कोवर
सरहज फूल छिरिआउ रे
ताहि कोवर सुतलन्हि दुलहा से को न दुलहा
कोन सुहवे वेनिया डोलाउ रे
वेनिया डोलैवइत वँहिया मुरुचि गेल
सुहवे त रोदन पसारु रे
चुपे रहु चुपे रहु सुहवे मे कोन सुहवे
भोरे देव वहिया जुटाय रे

कहाँ मोर-मयूर चित्रित हुए? कहाँ अष्टदल कमल लिखा गया? कोवर में मोर-मयूर चित्रित हुए। वेदी के इर्द-गिर्द अष्टदल कमल लिखा गया।

कहाँ काली कोयल कूकी? कहाँ मयूर वोला।

आम की डाल पर काली कोयल कूकी, दरवाजे पर मयूर वोला।

कोवर में अमुक सौभाग्यशाली दूल्हा बोला—'यह प्रेम-कोवर किसने लिखा? किसने सेज पर फूल बखेरा?'

मेरी साली ने यह प्रेम-कोवर लिखा, और सलहज ने सेज पर फूल बखेर दिया। कोवर में अमुक दूल्हा सोया और अमुक दुलहिन उसे पखा से हवा करने लगी।

पंखा झलते समय दुलहिन की बाँह में मोच खा गई। वह रोने लगी। दूल्हे ने कहा—हे प्यारी, चुप रहो। मैं सुबह होते ही यह पीड़ा हर लूँगा।

(१७)

विआहन जयता रे हजरिया
विआहन जयता रे
ढोलक मजीरा बाधि दुलहा
विआहन जयता रे
छुरी कटारी बाधि दुलहा
विआहन जयता रे
पथरे जयता रे हजरिया
पथरे जयता रे

ढोलक सितारा बाँधि दुलहा
पथरे जयता रे
छुरी कटारी बाँधि दुलहा
पथरे जयता रे
दुअरे जयता रे हजरिया
दुअरे जयता रे
भाय भतीजा साथ में वर
दुअरे जयता रे
छुरा कटारी बाँधि दुलहा
दुअरे जयता रे

मड़वे जयता रे हजरिया
मड़वे जयता रे
ढोल सरगी बाँधि दुल्हा
मड़वे जयता रे
सास-ससुर संग साथ में वर
मड़वे जयता रे
कोवर जयता रे हजरिया
कोवर जयता रे

साली सरहज साथ मे वर
कोवर जयता रे
ढोल सितारा बाँधि दुल्हा
कोवर जयता रे
पलंगे जयता रे हजरिया
पलंगे जयता रे

इतरक शीशी हाथ नेने
पलंगे जयता रे
हँसिक बोऽलु हे धनि तो
हँसिक बोऽलु हे
सखी नलेहर साथ में कोना
हँसिक बोऽलु हे

हजरिया (हजार-दो हजार जिसे तिलक चढाया गया हो) दूल्हा ब्याह करने जायगा। दूल्हा ढोलक, मजीरे बांध कर ब्याह करने जायगा।

छुरी, कटारी बांध कर दूल्हा ब्याह करने जायगा।

हजरिया दूल्हा पैदल ही जायगा। ढोलक, सितार बांध कर पैदल ही ब्याह करने जायगा। छुरी, कटारी बांध कर दूल्हा पैदल ही ब्याह करने जायगा।

हजरिया दूल्हा दरवाजे पर जायगा। भाई, भतीजे को साथ में लेकर दूल्हा दरवाजे पर जायगा। छुरी, कटारी बांध कर दूल्हा दरवाजे पर जायगा।

हजरिया दूल्हा मडप में जायगा। ढोलक, सारगी बांधकर दूल्हा मडप में जायगा। सास, ससुर को साथ में लेकर दूल्हा मडप में जायगा।

हजरिया दूल्हा कोहबर-घर में जायगा। साली और सरहज को साथ में लेकर दूल्हा कोहबर घर में जायगा। ढोलक और सितार बांध कर दूल्हा कोहबर-घर में जायगा।

हजरिया दूल्हा पलंग पर जायगा। इत्र की शीशी हाथ में लेकर दूल्हा पलग पर जायगा।

हे धन, जरा हँस कर बोलो! हे प्यारे, कैसे हँस कर बोलूं? सखी-सहेलियां साथ में हैं। हँस कर कैसे बोलू?

नचारी

'नचारी' के गाने का कोई खास मौसिम, कोई खास मुहूर्त नहीं। अन्तःपुर में सूनी सेज पर, बेटी के विवाह के अवसर पर, पावस ऋतु में खेतों की मेंड़ पर, संध्या और प्रातःकाल चौपाल में बैठ कर प्रायः हर समय 'नचारी' गाया जाता है। भुक्खड़ और भिखमंगे साधु समर्थ गृहस्थों के द्वार पर इन्हें गा-गाकर भीख मांगते हैं, और शिव की प्रार्थना की ओट में अपनी आर्थिक दुरवस्था का नग्न चित्र खींच कर श्रोताओं में करुणा का भाव जागृत करते हैं। इसलिए इन गीतों में श्रमजीवी किसान और मजदूरों का दर्द-भरा हुंकार भी सुनने को मिल जाता है।

'नचारी' शैली के गीतों में शिव की उपासना का भाव बड़ी उत्कृष्ट रीति से निरूपित हुआ है। किसी-किसी पद में शिव की बरात का उल्लेख, किसी-किसी में उनके स्वभाव, चरित्र और रहन-सहन का परिचय, किसी-किसी में उनके तांडव नृत्य का चित्रण और किसी-किसी पद में कवियों ने दार्शनिक और धार्मिक आदर्शवाद का स्तर निर्धारित किया है। हां, आत्म-निवेदन, स्तुति और आत्मबोध का भाव प्रबल हो जाने के कारण इनमें दर्शन का रंग गहरा नहीं है।

अक्सर कन्या-पक्ष की तरफ से दूल्हे शिव को दुलहिन पार्वती से हीन और लघु प्रदर्शित करने का प्रयास किया जाता है। और यह सब गहरे व्यंग्य के रूप में इतनी कुशलता से कहा गया है कि उन्हें पढ़ते ही बनता है। पदावली में यत्र-तत्र सरल और शिष्ट हास्य का भी पुट मिलता है। जहां इस तरह के पदों में प्रयुक्त शब्दावलियां अपनी व्यंजनावृत्ति के द्वारा दूल्हे के रूप-रंग और उसके हृदय की न जाने कितनी भावनाओं का मनोवैज्ञानिक अध्ययन उपस्थित करती हैं, वहां दूसरी ओर मैथिल स्त्रियों के तर्जवयान

और उनकी अनोखी भाव-भगिमा का सूक्ष्म रेखा-चित्र भी खींचती है इन दोनो बातों का इतना सफल समन्वय अन्यत्र कम देखने में आता है सरल भाव-विश्लेषण और स्वाभाविक विदग्धतापूर्ण वर्णन 'नचारी' गीत शैली की सबसे बडी व्याख्या है।

यहाँ इस शैली के कुछ मधुर सुन्दर गीत दिये जाते हैं—

(१)

आजु नाथ एक व्रत महा सुख लागल हे
तोहे शिव धरु नट वेप डमरु बजावहु हे
तोहे गौरि कहैछह नाचह हम कोना नाचव हे
चारि सोच मोरा होय कोना विधि बाँचत हे
अमिय चुविय भूमि खँसत बघम्बर जागत हे
होयत वघम्बर बाघ बसहा के खायत हे
सिर सौं ससरत साँप दहो दिशि जाएत हे
कार्त्तिक पोसल मयूर से हो रे धरि खायत हे
जटा सौं छिलकत गग भूमि पर पाटत हे
हैत सहस्र मुख धार समेटियो ने जायन हे
रुण्डमाल टुटि खँसत मसानी जागत हे
तोहें गौरि जयवह पराय नाच के देखत हे
भनहि 'विद्यापति' गाओल गावि सुनाओल हे
राखल गौरी केर मान चारि बचाओल हे

हे शिव, आज एक महान त्योहार का मुहूर्त्त है। तुम नटर... धारण करो, और डमरू बजा कर ताडव नृत्य करो।

हे गौरी, तुम नृत्य करने का अनुरोध करती हो। नृत्य कैसे करूँ सोच-समझ लो। चार प्रकार की चिन्ताएँ नृत्य में बाधक होंगी।

नृत्य के वेग के कारण अमृत की बूदें टपक कर पृथिवी पर गिरें जिनके स्पर्श-मात्र से निर्जीव व्याघ्र-चर्म सजीव हो उठेगा, और बैल खा जायगा।

जूडे में लिपटा हुआ सर्प ससर कर दशों दिशाओ में दौड पडेगा, और कार्त्तिक का पालतू मयूर उसे पकड कर निगल जायगा।

गठीली जटाओ में विराजमान गंगा सहस्र-सहस्र धाराओ में पृथिवी पर फूट वहेगी, जो लाव सँभालने के वावजूद कावू में नहीं आयेगी।

गले की रुण्डमाल टूट कर विखर जायेगी, और साय में भूतो की असख्य सेना नाचने लगेगी।

ऐसी दशा में हे गौरी, तुम डर कर भाग जाओगी। नृत्य कौन देखेगा ?

हे सखी, 'विद्यापति' ने यह पद्य गाया है। गा कर सुनाया है। सुनती हूँ, शिव ने गौरी की प्रार्थना स्वीकार कर ली, और उक्त चार वाधाओ का निराकरण कर अपना विकट नृत्य दिखलाया।

शिव नृत्यो में तीन विशेष प्रसिद्ध है—

(१) हिमालय का सांध्य नृत्य

(२) हिमालय का ताडव नृत्य

(३) चिदम्वरम् का नदान्त नृत्य

पहला, सान्ध्य वेला में गौरी को सिंहासन पर वैठा कर कैलाश पर्वत पर शिव नृत्य करते हैं। यह शिव की सात्विक वृत्ति का नृत्य है।

दूसरा नृत्य ताडव तामसिक वृत्ति का सूचक है। इसका स्थान श्मशान भूमि है। गीत में इस विकट नृत्य की ओर सकेत-मात्र किया गया है।

तीसरा नृत्य नदान्त है। इसका उल्लेख दाक्षिणात्य लोक-गीतो में मिलता है।

(२)

सुनिअन्हि हर वड सुन्दर
आगे देखिअन्हि विभूति भयकर
सुनिअन्हि हर अओताह रथ पर
आगे देखिअन्हि वूढ वरद पर
सुनिअन्हि पाट पटम्वर
आगे देखिअन्हि फाटल वघम्वर

सुनिअैन्हि गारा मोती माल लय
आगे देखिअैन्हि रुद्रक हार लय

सुनती थी, शकर बड़े सुन्दर है। लेकिन देखती हूँ—भयंकर विकराल स्वरूप।

सुनती थी, शकर रथ पर आयेंगे। लेकिन देखती हूँ—बूढ़े बैल पर।

सुनती थी, शकर पीताम्बर पहनते है। लेकिन देखती हूँ—फटा हुआ व्याघ्रचर्म।

सुनती थी, शकर के गले में मोती का हार है। लेकिन देखती हूँ—रुद्राक्ष।

(३)

उमा कर वर बाउरि छवि घटा
गला माल बघछाल वसन तन
बूढ बयल लटपटा
भसम अग शिर गग तिलक शशि
बाल भाल पर जटा
अति सुकुमारि कुमारि मोरि गिरिजा
वर बुढवा पेट सटा
कहत 'कारनाट' सुनिय मनाइनि
काहे करत जिव खटा

उमा का दूल्हा बौराहा और देखने में अत्यन्त कुरूप है। उसके गले में मुण्डमाल, कमर में व्याघ्र-चर्म और सवारी के लिए एक लटपटा बूढा बैल है।

उसके अग-प्रत्यग में भस्म है। मस्तक पर गगा विराजमान है। जूडे के ऊपर द्वितीया का चाँद है। योगियों की ऐसी उसकी जटाएँ है।

हे सखी, मेरी बेटी गिरिजा अत्यन्त सुकुमार है। लेकिन उसका दूल्हा बूढ है। उसके पेट-में-पेट सटा है।

कवि 'कारनाट' कहता है—'हे मनाइन, सुनो। दिल छोटा मत करो। तुम्हारी मनोकामना पूरी होगी।'

(४)

हम नहि आजु रहब एहि आङ्गन
जों बुढ होयता जमाय
एक तँ वैरि भेल विध विधाता
दोसर धिआ केर बाप
तेसर वैरि भेल नारद ब्राह्मण
जेहि लायल बूढ जमाय
धोती लोटा पोथी पतरा
से हो सब लेवैन्ह छिनाय
जों किछु बजताह नारद ब्राह्मण
दाढी धय घिसिआय
ऐपन निपलन्हि पुरहर फोडलन्हि
फेंकलन्हि चउमुख दीप
धिया लय मनाइनि मन्दिर पैसलि
केओ जनु गावय गीत
भनहि 'विद्यापति' सुनिय मनाइनि
इहो थिक त्रिभुवननाथ
शुभ-शुभ कय गौरि विआहिय
इहो वर लिखल ललाट

यदि मेरा दामाद बूढा हुआ तो आज इस आँगन में नहीं रहूंगी।

एक तो विधाता टेढा है। तिस पर कन्या का बाप भी दुश्मन हो गया। एक और दुश्मन है—ब्राह्मण नारद, जो हाथ धोकर पीछे पड गया है, और निपट बूढ़ दामाद ढूंढ लाया है।

उसकी धोती, पोथी, लोटा, पत्रा सब छीन लूंगी। यदि उसने रोब दिखलाया तो दाढी पकड कर उसे घसीटूंगी।

तीन अँखिया
दिगम्बर वेप देखि फाटे मोरा हिया
दूर दूर छीआ
काँख तर झोडी शोभैन
घथुरक वीआ
सह-सह करैछैन साँप सखिया
दूर दूर छीआ
भाँग केर मोटरी हफीम केर वीआ
ओढना वाघम्वर छैन
फाटे मोरा हिया
धान लेलथिन दुव लेलथिन
आओर लेलथिन दिया
सासु जे परीछन चललिन
साँप कलकैन 'फू' आ
दूर दूर छीआ
जो इ कदापि विष लागत मोरा धीआ
कोहवर में मरि जैतन
अकारथ जतइन जीआ
दूर दूर छीआ
भनहिं 'विद्यापति' सुनु सखिया
गौरी के लिखलछइन वुढवा अइसन पिया
दूर दूर छीआ

छी! दूर! दूर!! (व्यग्य और घृणासूचक अभिव्यक्ति) ऐसे अवधूत—दिगम्बर के साथ मेरी बेटी कैसे रहेगी?

ऐसे बौराहा के साथ बेटी पार्वती कैसे जायगी?

दूर! दूर! छी!!

दूल्हे के पाँच मुख हैं, तीन नेत्र। उसका नग-धड़ग वेष देख कर कलेजा फट रहा है। उसकी काँख के नीचे झोली है। उसमें धतूर के बीज है। हे सखी, उसके समस्त शरीर में सर्प सहर-सहर कर रहा है।

छी! दूर! दूर!!

उसकी बगल में भंग की झोली है, और उसमें अफयून के बीज। ओढ़ने के लिए व्याघ्र-चर्म है जिसे देख-देख कर मेरा कलेजा फट रहा है।

छी! दूर! दूर!!

दूल्हे की सास धान के नवीन अंकुर, हरित दूर्वादल और दीपक जलाकर परिछन करने चली कि सहसा सर्प ने फन फैला कर क्रोध से 'फू' किया।

हे सखी, संयोगवश यदि सर्प ने मेरी बेटी को डँस लिया तो कोहबर में ही उसकी अकाल मृत्यु होगी, और उसके प्राण व्यर्थ जायेंगे।

छी! दूर! दूर!!

कवि 'विद्यापति कहते हैं—हे सखी, गौरी के ललाट में विधाता ने वृद्ध पति लिख दिया। कोई दूसरा क्या करे?'

(८)

मब टा खाइय गेलैन भाग
फूजि गेलैन बसहा
चिबाइय गेलैन भाग
सबटा खाइय गेलैन भाग
कात्तिक गणपति दुनु छैन नदान
ब्रम्हा के नग में करैछय कूद-फान
सबटा आइय गेलैन भाग
घुरि-फिरि अओतन खोजतन भाग
किछियो न छैन अब कि करताह महान
मागि-चागि अयतन उठैतन तूफान
बैल सब खाइय गेलैन

मचौतन घमासान
सबटा खाइय गेलैन भाग
भनहि 'विद्यापति' सुनु हे मनाइन
तइ लेल कि करवैन
आनि लैतन भाग
सबटा खाइय गेलैन भाग

बैल भंग खा गया। बैल खुल गया, और भग की बनी हुई पत्ती चबा गया।

बैल सब भंग खा गया।

कार्त्तिक और गणेश—शिव के दोनों लडके बडे लापरवाह हैं। बैल के साथ कूद-फाँद करने में ही वक़्त गुज़ार देते हैं, और भंग की निगरानी नहीं करते।

बैल सब भंग खा गया।

थोड़ी भी भंग नहीं बची। अब दिगम्बर शिव क्या लेकर रहेंगे ?

बाहर से जब वह माग-चांग कर लौटेंगे, तो आज ज़मीन-आसमान एक कर देंगे।

हाय! बैल सब भंग खा गया। नशाख़ोर शिव आज सिर पर आसमान उठा लेंगे।

'विद्यापति' कहते हैं—'हे मनाइन, चिन्ता मत करो। वह पुनः मांग-चांग कर भंग ले आयेंगे।'

(६)

वर देखि सब के लागल टकाटक
विधि ककरो न सक
पाँच मुख, तीन नेत्र
आग भकाभक
चन्द्रमा ललाट शोभैन गगा झकाझक
केओ जान मोट डाँट केओ लकालक

भूत पिचाश देखि सखी लटापट
विधि ककरो न सक
भनहिं 'विद्यापति' सुनु हे मनाइन
गौरी वड तप कैलन
पयलन एहन वर
विधि ककरो न सक

दूल्हे की सूरत देख कर सब की टकटकी बँध गई। हे सखी, ब्रह्मा की लकीर को भला कौन टाले?

शिव के पांच मुख हैं, तीन नेत्र। अंग-प्रत्यंग में भभूत भक-भक खिल रहा है। ललाट में द्वितीया का चाँद, और गंगा विराजमान हैं।

हे सखी, ब्रह्मा की लकीर को भला कौन टाले?

बरातियों को तो देखो। कोई उसमें हृष्ट-पुष्ट है। कोई दुबला-पतला। भूत-पिशाचों की भयावनी जमात को देखकर उमा की सभी सखियाँ एक दूसरे को पीछे की ओर ढकेलती हुई भय के मारे भागने लगीं।

कवि 'विद्यापति' कहते हैं—हे मनाइन, सुनो। गौरी ने बड़ी कठिन तपस्या की है। फलस्वरूप उसे ऐसा सुभग दूल्हा मिला है।'

(१०)

माइ हे अजगुत भेल
गौरी के उचित वर विधि नहिं देल
तेल फूलेल शिव के
कोवर रखि देल
लगावे के बेर शिव
भसम लेपि लेल—माइ हे अजगुत भेल
पेंडा जलेबी शिव के
कोवर रखि देल
भोजन के बेर शिव
भाग पिवि लेल—माइ हे अजगुत भेल

तोसक गलइचा शिव के
कोवर रखि देल
मुते के वेर शिव
मृगछाला राखि लेल—माइ हे अजगुत भेल
हाथी घोडा शिव के
वान्हल रहि गेल
चढे के वेर शिव
वनहा चढि लेल—माइ हे अजगुत भेल

हे सखी, आश्चर्य की वात है कि गौरी को, उसके उपयुक्त दूल्हा विधाता ने नहीं दिया।

शिव के कोहवर-घर में तेल-फुलेल रख दिये गये। लेकिन उनने तेल-फुलेल न लगा कर अंग-प्रत्यंग में भस्म लेप लिया।

जलेवी और पेड़े शिव के कोहवर-घर में रख दिये गये। किन्तु, खाने के वक्त उनने खूब छक कर भंग छान ली, और नशे में गर्क हो गये।

शिव के कोहवर-घर में तोशक और गलीचे विछा दिये गये। किन्तु, सोने के वक्त उन्होंने मृगछाला विछा ली।

हे सखी, उनकी सवारी के लिए हाथी और घोडे वँधे ही रह गये। और विदा होने के वक्त उनने वैल पर सवार होकर यात्रा की।

(११)

अति वुढ वर भेल
गौरी के मनक वात मने रहि गेल
अति वुढ वर भेल
वुढवा भुतनी सग करए कलोल
गौरी के भोग ओ विलास रहि गेल
अति वुढ वर भेल
कतहुँ जगह नहि साँप क लेल
देखितो में छथि अकलेल वकलेल

अति वुढ वर भेल
एहन विआ के इहो वर किय मेल
हृदय विचारि कोना विधिना देल
अति वुढ वर भेल

हे सखी, उमा का व्याह अत्यन्त वृद्ध दूल्हे से हुआ। उमा के मन की वात मन ही में रह गई।

हे सखी, एक ओर उसका वूढ़ा दूल्हा भूतनियों के साथ प्रेम-क्रीड़ा करता है। दूसरी ओर हमारी प्यारी सखी उमा भोग-विलास से विरक्त होकर और भस्मशायिनी वन कर दिन-रात तप करती है।

हे सखी, उसके दूल्हे का स्वभाव इतना विचित्र है कि जब सर्पों के वैठने के लिए अन्यत्र स्थान नहीं मिलता तो वे उसीके अग-अंग में लिपट कर विश्राम लेते हैं।

देखने में भी यह उजवक, निरा गोवरगणेश है।

समझ में नहीं आता कि आखिर विधाता ने क्या सोच कर ऐसी सुन्दर कन्या की तकदीर में ऐसा उजवक दूल्हा लिख दिया।

(१२)

गौरि दुख भोगती—
भगिया के सग गौरि दुख भोगती
नित दिन भगिया ला भाग पिसती
गौरि दुख भोगती
खन नहि चैन कखन सुतती
माग-चाग लयथिन धान कूटती
माड सग गेल भात कोना खेती
गौरि दुख भोगती
फूजल वनहा टाट धरती
एखनर घर मे कोना रहती

गौरी दुख भोगती
सासु-ससुर सुख नै जनती
ओरहन सुनि-सुनि नित कनती
गौरी दुख भोगती

बेटी गौरी दुख भोगेगी। अपने भगेरी पति के साथ गौरी दुख भोगेगी।

नित्य नियमपूर्वक अपने भगेरी पति के लिए भंग पीसेगी। गौरी दुख भोगेगी।

उसे पल-भर के लिए भी विश्राम नहीं मिलेगा। जाने वह कब सोयेगी? इधर-उधर से भिक्षाटन कर भीख लायेगी, और धान कूटेगी। न जाने वह किस प्रकार माँड के साथ गीला भात खायेगी?

जब उसके पति का बूढ़ा बैल खुल जायगा तब वह उसे डाँट-डपट कर खूँटे में बाँधेगी, और घर में अकेली ही सोयेगी।

सास-ससुर के राज्य के सुख भी न जान सकेगी। उल्टे उलाहना सुन कर नित्य विसूर-विसूर कर रोयेगी।

(१३)

बरदो न बाँधे गौरा तोर भगिया
गौरा तोर भगिया
अँगने-अँगने खाए पथार
रोमे गेलहुँ झुकि-झुकि मार
एक मन होए शिव के दियैन उपराग
देहरि बैसल छथिन वासुकि नाग
कारतिक गनपति दुइ चरवाह
इ हो दुनु बालक वरद हराह
भनहि 'विद्यापति' सुनह हे समाज
इ हो दुनु बेकति के एको के ने लाज

हे गौरी, तुम्हारा भगेरी पति बैल भी नहीं बांधता।

तुम्हारे भगेरी पति का बैल हमारे आंगन में घूम-घूम कर पयार खा जाता है।

जब उसे डपट कर भगाना चाहती हूं, तब वह सींगें झाड कर मार बैठता है।

सोचती हूं कि शिव को उलाहना दूं, लेकिन उनकी देहली पर भयंकर नाग फन फैला कर बैठा है।

कार्त्तिक और गणेश—ये दोनों बैल के चरवाहे है, किन्तु अभी दोनों बच्चे हैं। और बैल मरखहा है।

कवि 'विद्यापति' कहते हैं—'हे समाज के सन्य पुरुष, सुनो। दम्पत्ति शिव और पार्वती दोनों में एक के भी शर्म नहीं है। दोनों-के-दोनों निर्लज्ज है।'

(१४)

कहलो ने जाइछइ भोला विपति के हाल
भोला विपति के हाल
माय-बाप धय गेल फिकिर जजाल
नारी बिन घर भेलइ नरक समान
भोला विपति के हाल
एक टा पुतर छिका तिनि जेहन काल
राजा नगर मे त देलन्हि निकाल
रोजी पुंजी छीन लेलन्हि घर धन माल
बन-बन डोलु शिव नामी कगाल
सुनि तेरो नाम जन दिन प्रतिपाल
तोरे चरन पर टेकव कपाल
भनहि 'विद्यापति' सुनह हे कगाल
एक बार भोला हेरयुन हो जएब नेहाल

हे शिव, अपने दुख की बात कही भी न जाती। मां-बाप मुझ पर चिन्ताओं का बोझ लाद कर स्वयं विदा हो गये।

स्त्री के बिना घर नर्क के समान प्रतीत होता है। एक पुत्र है, जो साक्षात यम का स्वरूप है।

राजा ने नगर से निर्वासित कर दिया। उसने मेरी रोजी-पूंजी हड़प ली, और धन-दौलत लूट ली।

हे शिव, मैं वन-वन डोल रहा हूं। मैं मशहूर कंगाल हूं, और तुम हो दीन-बन्धु। अब मैं नित्य तुम्हारे ही चरणों की वन्दना करूंगा।

कवि 'विद्यापति' कहते हैं—'हे कंगाल, सुनो। यदि एक बार भी शिव तुम्हारी ओर देख देंगे तो तुम्हारा दुख-दारिद्रय दूर हो जायगा।'

(१५)

बइजनाथ दरबार में हम त खुशी सँ रहवइ ए
कोई मांगे अन-धन सोना
कोई मांगे रूप
कोई मांगे निरमल काया
कोई मांगे पूत
ब्राह्मण मांगे अन-धन सोना
वेश्या मांगे रूप
कोढ़िया मागे निरमल काया
बाँझिन मांगे पूत—हम त खुशी सँ रहवइ ए
कथिए लागि अन-धन सोना
कथिए लागि रूप
कथिए लागि निरमल काया
कथिए लागि पूत—हम त खुशी सँ रहवइ ए
लुटवै लागि अन-धन सोना
देखवै लागि रूप
तीर्थ चलएला निरमल काया
जल-भरि लावए पूत—हम त खुशी सँ रहवइ ए

वैद्यनाथ—शंकर के दरबार में मैं प्रसन्नता से रहूँगा।

कोई अन्न-धन और सोना माँगता है। कोई रूप माँगता है। कोई स्वस्थ शरीर माँगता है, और कोई पुत्र की याचना करता है।

शंकर के दरबार में मैं प्रसन्नता से रहूँगा।

ब्राह्मण अन्न-धन और लक्ष्मी माँगता है। वेश्या रूप माँगती है। कोढ़ि स्वास्थ्य माँगता है, और वाँझिन पुत्र की याचना करती है।

मैं शंकर के दरबार में प्रसन्नता से रहूँगा।

किसलिए अन्न-धन और सोना है?

किसलिए रूप?

किसलिए स्वस्थ शरीर है?

और, किसलिए पुत्र?

अन्न-धन और सोना दान करने के लिए है।

रूप देखने के लिए है।

स्वस्थ शरीर तीर्थ-यात्रा करने के लिए है।

और प्यासे को जल पिलाने के लिए पुत्र है।

(१६)

सुभ दिन लगन बिआहल गौरि बनि ठनि दुल्हा भेला हे
[illegible] सजैला हे
भाल तिलक [illegible] बहैला हे
बूढ़ बरद असवार सदाशिव डमरू डिमिक बजैला हे
भूत प्रेत डाकिनि साकिनि संग [illegible] नाच नचैला हे
अंगना [illegible] दुल्हा [illegible] हे
[illegible] हे
[illegible] हे
[illegible] पठैला हे
ब्राह्मन [illegible] मैना परिछन कैला हे
[illegible] हे

स्त्री के बिना घर नर्क के समान प्रतीत होता है। एक पुत्र है, जो साक्षात यम का स्वरूप है।

राजा ने नगर से निर्वासित कर दिया। उसने मेरी रोजी-पूँजी हड़प ली, और धन-दौलत लूट ली।

हे शिव, मैं वन-वन डोल रहा हूँ। मैं मशहूर कगाल हूँ, और तुम हो दीन-बन्धु। अब मैं नित्य तुम्हारे ही चरणो की वन्दना करूँगा।

कवि 'विद्यापति' कहते हैं—'हे कगाल, सुनो। यदि एक बार भी शिव तुम्हारी ओर देख देंगे तो तुम्हारा दुख-दारिद्रय दूर हो जायगा।'

(१५)

बइजनाथ दरबार में हम त खुशी सँ रहवइ ए
कोई माँगे अन-धन सोना
कोई माँगे रूप
कोई माँगे निरमल काया
कोई माँगे पूत
ब्राह्मण माँगे अन-धन सोना
वेश्या माँगे रूप
कोढिया मागे निरमल काया
बाँझिन माँगे पूत—हम त खुशी सँ रहवइ ए
कथिए लागि अन-धन सोना
कथिए लागि रूप
कथिए लागि निरमल काया
कथिए लागि पूत—हम त खुशी सँ रहवइ ए
लुटवै लागि अन-धन सोना
देखवै लागि रूप
तीर्थ चलएला निरमल काया
जल-भरि लावए पूत—हम त खुशी सँ रहवइ ए

वैद्यनाथ—शंकर के दरबार में मैं प्रसन्नता से रहूँगा।

कोई अन्न-धन और सोना माँगता है। कोई रूप माँगता है। कोई स्वस्थ शरीर माँगता है, और कोई पुत्र की याचना करता है।

शंकर के दरबार में मैं प्रसन्नता से रहूँगा।

ब्राह्मण अन्न-धन और लक्ष्मी माँगता है। वेश्या रूप माँगती है। कोढ़ी स्वास्थ्य माँगता है, और बाँझिन पुत्र की याचना करती है।

मैं शंकर के दरबार में प्रसन्नता से रहूँगा।

किसलिए अन्न-धन और सोना है?

किसलिए रूप?

किसलिए स्वस्थ शरीर है?

और, किसलिए पुत्र?

अन्न-धन और सोना दान करने के लिए है।

रूप देखने के लिए है।

स्वस्थ शरीर तीर्थ-यात्रा करने के लिए है।

और प्यासे को जल पिलाने के लिए पुत्र है।

(१६)

शुभ दिन लगन बिआहन गौरा बनि ठनि दुलहा अएला हे
कठ गरल उर नर सिरमाला अगनाग लपटैला हे
भाल तिलक शशिपाल लगैला जटा से गग बहैला हे
वूढ़ वरद असवार सदाशिव डमरु डिमिक वजैला हे
भूत प्रेत डाकिन साकिन सँग जोगिन नाच नचैला हे
अघरा वहिरा लगरा लुल्हा अगनित भेस धरैला हे
स्वान सूअर सिरगाल मुखरतनु सग वरिअतिया लैला हे
नगर निकर चढ़ि-चढ़ि है गै रथ अगुआनन अगुअैला हे
नजर परत वरिआत भयकर सवही विररि परैला हे
साहस करि सव सखियन सँग मिलि मैना परिछन कैला हे
नाग छोरल फुफकार डेरैला खसत परत घर अएला हे

सग वरिअँतिया हुलसत छतिया शिव जनवासा गैला हे
व्याह उछाह उमा शिवशकर विशेश्वर पद गैला हे

शकर पूर्व निश्चित मगलमय लग्न पर गौरी को व्याहने के लिए दूल्हा वन कर आये।

कठ में गरल, हृदय-प्रदेश पर मनुष्य के मुण्ड की माला, अंग-प्रत्यग में भयकर सर्प, ललाट पर द्वितीया के चाँद का तिलक और वडी-वड़ी जटाओ में गंगा की धारा—इस वेश-भूषा में बन-ठन कर शकर दूल्हे के रूप में आये।

वह एक वुड्ढे वैल पर सवार हैं। डिम-डिम डमरू वजा रहे हैं। उनके साथ में भूत, प्रेत, डाकिन और जोगिन का असंख्य दल नृत्य करता हुआ आ रहा है। उनमें कितने अन्धे हैं। कितने बहरे। कितने लगडे और लूले हैं। वहुरूपिये-सा विविध प्रकार के वेश धारण कर वे आ रहे हैं। उनमें कितने के मुख कुत्ते के हैं। कितने के मुख सूअर के और कितनों के स्कन्ध पर गीदड और गवहे का मुख जडा है।

नगर के निकट आने पर वे सब हाथी, घोडे और रथ पर सवार हो-हो कर दूल्हे के आगे-आगे चलने लगे।

जव कन्या-पक्ष के लोगों की दृष्टि इस विचित्र दृश्य की ओर आकृष्ट हुई तो वे डर कर सिर पर पाँव रख कर भागे।

अन्त में कन्या की माँ मैना ने हिम्मत करके सखियों को साथ लेकर दूल्हे का परिछन किया। इतने में नाग ने फन फैला कर भयकर फूत्कार किया और वे भयभीत हो कर गिरती-पडती भाग खडी हुई।

उधर दूल्हा बरातियों को साथ लेकर प्रसन्न-चित्त से जनवासे लौट गया।

'विशेश्वर' ने उमा और शकर के विवाहोत्सव की उमंग में यह पद गाया है।

(१७)

शिव एम्हर[1] सुनि जाउ
एम्हर सुनि जाउ भोला
एम्हर सुनि जाउ
पानी लिउ पैर घोउ
बाघम्बर बिछाउ
डमरू बजाउ नाच देखाउ
अहाँ तब कहुँ जाउ
कुंडी लिउ सोटा लिउ
भांग घोंटबाउ[2]
एक लोटा पिबिलिउ[3]
तब कहुँ जाउ
भोला एम्हर सुनि जाउ
दाल लिउ चाउर लिउ
खिचरी बनाउ
हमरा परमेश्वर छथिन[4]
अहाँ भरपेट खाउ
शिव एम्हर सुनि जाउ
एम्हर सुनि जाउ शिवजी
एम्हर सुनि जाउ

(१८)

बम बैद्यनाथ गौरी बर
भोला चाकर राखह हे

---

१ यहाँ। २ जल के साथ बार-बार रगड कर और बारीक पीस कर परस्पर मिलाना। ३ पी लो। ४ हे।

चाकरी मे वाग लगाएव
लोढी-लोढी गुलफुलवा लाएव
ओहि[1] फुलवा के हार वनाएव
पारवती पहिनाएव
पारवती पति आज्ञा पाएव
गगाजल भरि लाएव
वावा वैद्यनाथ मस्तक पर
सिसियन - ढारि - चढाएव[2]
वाबा चाकर राखह हे
चाकरी में दरसन पाएव
परसन[3] पाएव खर्ची
राम नाम जागीरी पाएव
तीन वात के अरजी

(१६)

अद्भुत रूप योगी एक देखल
डमरू देल बजाय गे माई
गाल छइन बोकटल
मुंह छइन चोकटल
मुंह मधे एको गो ने दांत गे माई
सउँसे देह बुढबा के थर-थर कँपइन
पुरुष बड भोगिआर गे माई
आगे माई तोडि देवइनि रूद्रमाला
फोडि देवइनि डमरू
टुक-टुक करवइन बघछाल गे माई
अद्भुत रूप योगी एक देखल
डमरू देल बजाय गे माई

१ उस। २ शीशियो से जल उँडेल कर पूजा करूँगा। ३ स्पर्श करने से

हे सखी, आज मैंने एक विचित्र योगी देखा है जो डमरू बजा रहा था। उसके गाल भीतर की ओर धँसे हुए हैं। मुंह सूखा हुआ है। उसके मुंह में एक भी दांत नहीं है। उस बुड्ढे के अंग-प्रत्यंग काँप रहे हैं। (फिर भी) वह देखने में आकर्षक लगता है।

हे सखी, उसकी रुद्रमाल तोड़ डालूंगी। उसका डमरू फोड डालूंगी। और उसके व्याघ्र-चर्म फाड़ कर चियड़े-चियड़े कर दूंगी।

हे सखी, आज मैंने एक विचित्र योगी देखा है जो डमरू बजा रहा था।

(२०)

केहि खोजल वर केहि ढूंढल वर
केहि बूढ लयला बोलाय गे माई
केकरा कहल बूढ चउका चढि बइसल
ककरा से होइछइन विआह गे माई
हजमे खोजल वर बाभन ढूंढल वर
बवे बूढ लयलन बोलाय गे माई
अगुए कहल बूढ चउका चढि बइसल
गौरी से होयत विआह गे माई
ककरा के मारू केकरा गरिआऊ
ककरा के फँसिया चढाउ गे माई
हजमे के मारू बभने गरिआऊ
बवे के फँसिया चढाऊ गे माई
कओन-कओन धन छओ आहे बूढ वर
कथि लागि करइछ विआह गे माई
धन में धन हुए गोला बरदवा
खेत मधे उपजय भांग गे माई
मरयु हजमा हे मरयु ब्राह्मण
मरयु निर्दय बाबा गे माई

ढगरे-ढगरे पिलुआ अगुआ के परउन
जिनि वर खोजलन भिखार गे माई

हे सखी, किसने बुड्ढे दूल्हे की तलाश की ? किसने बुड्ढे दूल्हे को ढूंढ कर पसन्द किया ? किसकी अनुमति से यह बुड्ढा दूल्हा विवाह-मंडप की वेदी पर बैठ गया ? और किस रूपवती कन्या से इसका व्याह होने वाला है।

हे सखी, हज्जाम ने बुड्ढे दूल्हे की तलाश की। ब्राह्मण ने बुड्ढे दूल्हे को ढूंढ कर पसन्द किया। अगुवे की अनुमति से यह बुड्ढा दूल्हा विवाह की वेदी पर बैठा, और रूपवती गौरी से इसका व्याह होनेवाला है।

हे सखी, किसे मारूं ? किसे गाली दूं, और किसे फांसी की तख्ती पर चढाऊं ?

हे सखी, हज्जाम को मारो। ब्राह्मण को गाली दो, और अपने बाबा को फांसी की तख्ती पर चढाओ।

रे बुड्ढा दूल्हा, तुम्हारे पास कौन-कौन-सी सम्पत्ति है, और तुम क्यूं व्याह कर रहे हो ?

मेरे पास धन-में-धन एक गोला बैल है, और जो कुछ थोडी-बहुत खेती-बाडी है उसमें भग की फसल (अच्छी) होती है।

यह सुन कर कन्या ने कहा—'वह हज्जाम मर जाय, वह ब्राह्मण मर जाय, मेरा वह कठोर-हृदय बाबा भी मौत की दाढ़ में चला जाय, और अगुवे के अंग-अग में कोडे पड जायें जिनने ऐसा खूसट और भिखमंगा दूल्हा मेरे लिए तलाश किया।'

(२१)

आइ बुढा रुसता गे माई
हमरो बूढ दिगम्बर हर
आइ रुसता गे माई
काटल भाग रहए आँगन में

वसहा गेल चिवाई
जखनहे सुनताह वुढा दिगम्वर
करत में महा लराई—आइ वुढा रुसता गे माई
पीसल भाग रहे कुडी में
गणपति. देलन हेराई
जखनहे अओताह वुढा दिगम्वर
करव में कओन उपाई—आइ हर रुसता गे माई
आँखि तरेरि-वुढा देल दमसाई
गणपति गेल पराई
चहुँ दिशि खोजथिन वुढा दिगम्वर
कोई न देत वताई—आइ वुढा रुसता गे माई।

हे सखी, आज वुड्ढे शंकर रूठ जायेंगे। मेरे वुड्ढे दिगम्वर पति आज रूठ जायेंगे।

कटी हुई भग आँगन में रक्खी थी, उसे वैल चवा गया।

वुड्ढे दिगम्वर को इसकी खवर मिलेगी, तो वह आगवगूला हो जायेंगे।

पीसी हुई भंग कुंडी में रक्खी थी। गणेश ने कुल-की-कुल जमीन पर गिरा दी। वुड्ढे दिगम्वर आयेंगे तव मैं क्या जवाव दूंगी?

जव वुड्ढे दिगम्वर को इसकी खवर मिली तव उन्होंने क्रोधित होकर गणेश को फटकारा। गणेश नौ-दो ग्यारह हो गये। वह उसे चारों ओर ढूढ़ने लगे। लेकिन कोई उन्हें उसकी टोह नहीं वतलाता।

हे सखी, आज वुड्ढे शंकर रूठ जायेंगे।

(२२)

अनका जे देथ शिव अपने भिखारी
अनका के अन-धन सम्पत्ति नारी
अनका के कोठा कोठरी अटारी
अपना टुटल घर चारु दिशा वारी

अनका के खोआ पुरी अओर तरकारी
अपना के आक-भाग धथुर अहारी
अनका के हाथी-घोडा पालकी सवारी
अपना के बूढ वैल वघम्वर धारी

हे सखी, दूसरे को शिव मालामाल कर देते हैं, और स्वयं भिक्षुक है।

दूसरे को अन्न-धन, स्त्री, कोठा, कोठरी और अटारी देते है, और स्वयं चाडी और टूटी हुई झोपडी में निवास करते है।

दूसरे को अनेक प्रकार के मेवा-मिष्ठान देते है और स्वयं आक, भग और धतूर की पत्ती चवाते है।

दूसरे को हाथी-घोडा और पालकी चढने के लिए देते है, और स्वय व्याघ्रचर्म पहन कर वुड्ढे बैल पर सवारी करते है।

समदाउनि

मिथिला का लोक-साहित्य करुण रस से ओत-प्रोत है। करुण रस के इतने गीत शायद ही ससार के किसी प्राचीन अथवा नवीन लोक-साहित्य में मिल सकें। कविता के आदि अस्तित्व का मूल कारण करुणाजनक परिस्थिति ही है—

मा निषाद। प्रतिष्ठा त्वमगम शाश्वती समा,
यत् क्रौञ्चमिथुनादेकमवधी काममोहितम्

वाल्मीकि मुनि का यह करुण श्लोक करुणाजनक घटना का ही परिणाम है।

भवभूति ने भी करुणरस को मुख्य माना है—

एकोरस करुण एव निमित्तभेदात्
भिन्न पृथक्पृथगिवाश्रयते विवर्त्तान्

एक करुण रस ही निमित्त-भेद से शृंगारादि रसों के रूप में पृथक् पृथक् प्रतीत होता है। शृंगारादि रस करुणरस के ही विवर्त्त है।

विवाह-संस्कार की समाप्ति के बाद जब दुलहिन डोली में बैठ कर ससुराल जाने की तैयारी करती है, उस समय मिथिला में एक विशिष्ट शैली का गीत गाया जाता है जो 'समदाउनि' के नाम से प्रसिद्ध है। विदा के समय दुलहिन की माँ, बहन, भावज और उसकी हमजोलियाँ सब उसके गले लिपट कर रोती हैं। उस समय उनके सवेदनाशील गीतों को सुन कर पाषाण-से कठोर हृदयवालों की आँखें में भी सावन-भादो की झड़ी लगा देती है, और उनकी वियोग-वेदना से हृदय-पटल फटने लगता है।

'समदाउनि' का सब से बडा गुण है—स्वाभाविकता। इसका शृंगार प्रेम और करुणा के मोतियो से हुआ है। वर्णन झरने के माफिक साफ और

भाषा सीधी तथा साफ-सुथरी है। वास्तव में कविता वही है, जो पढ़ने और सुननेवालों के दिल पर असर करे।

'समदाउनि' बेटी की विदाई के अवसर के गीत हैं। समय के परिवर्तन के साथ-साथ 'समदाउनि' गीत-शैली की दुनियां भी व्यापक-विस्तीर्ण होती जा रही है। पहले जहां 'समदाउनि' गीत-शैली में बेटी के विदा-काल के ही करुण, मर्मभेदी चित्र अंकित किये जाते थे, आज वहां इन गीत-शैलियों में मृत्यु काल के कारुणिक दृश्य को भी—जब आत्मा भौतिक और नश्वर शरीर का परित्याग कर अज्ञात लोक की ओर प्रयाण करती है—विषय-वस्तु का अंग समझ लिया गया ह। अधिकांश लोक-गायकों अथवा गायिकाओं ने छन्द की पगडण्डी छोड कर मानव-जीवन के किसी भी करुण प्रसंग को इस गीत-शैली का निर्दिष्ट वर्ण्य-विषय मान कर अपनी वाणी को रूप-रंग प्रदान किया है। अत 'समदाउनि' गीत-शैली का प्रधान सुर विवाह-संस्कार की समाप्ति के बाद कन्या के विदाकालीन मार्मिक दृश्य की अभिव्यक्ति ही नहीं, प्रकृति की करुणाजनक घटना तथा संवेदनाशील मानव-हृदय का अकन भी है।

यहां कुछ करुण रस के गीत दिये जाते हैं —

(१)

जखन चलल हरि मधुपुर सजनि गे
कै देल व्रज के उदास
केहि विधि हरि विनु रहु हम सजनि गे
केकर करुअ हम आस
छन-छन दिन सम हरि-बिनु सजनि गे
पहर लागत एक मास
अब केहि मुरली अधर विच सजनि गे
बजबइत उर लेत बास
केकरा सँ कहबो कठिन दुख सजनि गे
कै देल मोहन निरास

जिअवो में कोना हम पिय विनु सजनि गे
करवो में तन के विनास
व्रजनारी सग लै वृन्दावन
अव के रचत नित रास
राधिका कहत सव सखि मिलि सुनु हे
मिलत कन्हैया तोहि पास

हे सखी, जब श्रीकृष्ण मधुपुर चले गये, तव सारा व्रज शोक-सागर में डूबने लगा।

हे सखी, श्रीकृष्ण के विना कैसे रहूँ? मै किसकी आशा करूँ?

हे सखी, श्रीकृष्ण के विना एक-एक क्षण दिन की तरह, और एक-एक पहर एक-एक महीना की तरह प्रतीत होता है।

हे सखी, अव कौन होठों के बीच मुरली रख कर मधुर शब्द सुनायेगा, और इस हृदय में कौन विहार करेगा?

हे सखी, मै यह कठिन दुःख किससे कहूँ? श्रीकृष्ण ने मेरी आशा पर पानी फेर दिया।

हे सखी, प्रियतम श्रीकृष्ण के विना मै कैसे जिऊँगी। अव तो इस शरीर का विनाश कर देना ही उचित है।

अव व्रजांगनाओ को साथ लेकर वृन्दावन में कौन रास-क्रीड़ा करेगा?

राधिका को विरह-व्याकुल देख कर उसकी सखियाँ सान्त्वना देने लगीं—

'हे राधे, श्रीकृष्ण तुम्हारे पास है। तुम्हें अवश्य मिलेंगे।'

इस 'समदाउनि' में कवि ने विरह की यत्रणा से कातर राधा का वियोग-चित्रण जिस स्वाभाविक ढग से किया है, वह पढने के क़ाबिल है। उर्दू-साहित्य के सिद्ध-हस्त शायर मीर असर ने भी वियोग का करुण चित्र कुछ इसी प्रकार खींचा है—

दिन कहाँ चैन, रात ख्वाव कहाँ
बिन तेरे आये दिल को ताव कहाँ

अब न दिन ही कटे, न रात कटे
किस तरह अर्सए, हयात कटे

कविवर मीर साहब की उपर्युक्त पक्तियां और एक ग्रामीण कवि की निम्न पक्तियो का पाठक तुलनात्मक दृष्टि से मुलाहिज़ा करें—

छन-छन दिन-सम हरि-विनु सजनि गे
पहर लागत एक मास

(२)

जइती बडि हे दूर
लगती बडि हे बेर
अँगने-अँगने बुलु हँसइत जमाय
धिआ हे समोधु सासु मन चित्त लाय
गैया के बँधितो में खुटा हे लगाय
बछिया के लेल जाइय भागल जमाय
जइती बडि हे दूर
लगती बडि हे बेर
गैया जँ हुँकरय दुहान केर बेर
बेटी क माए हुँकरय रसोइया केर बेर
बाट रे बटोहिया कि तुहि मोर भाय
एहि बाटे देखलो में धिआ घी जमाय
जइती बडि हे दूर
लगती बडि हे बेर
देखलौं में देखलौं अशोकवा तर ठाढ
धीआ हकन कानु हँसइय जमाय
धिअवा के कनइत में गगा बहि गेल
दमदा के हँसइत में चादरि उडि गेल

बहुत दूर जाऊँगी। बडी देर लगेगी। मेरे दामाद आँगन में हँसते हुए चहलकदमी कर रहे हैं।

दामाद ने कहा—'हे सास, अपनी बेटी को अच्छी तरह समझा-बुझा दो।'

सास ने कहा—'गाय को खूंटे में बांधा जाता है। लेकिन बछिया को कौन बांधता है? हाय! मेरा दामाद मेरी बेटी को लिए भागा जाता है।'

बहुत दूर जाऊँगी। बड़ी देर लगेगी।

दूध दुहने के समय गाय हुँकारती है। बेटी की माँ बेटी की जुदाई में भोजन करने के समय बिसूर रही है।

'हे पथिक, तुम मेरे भाई हो। क्या तुमने रास्ते में मेरी बेटी और दामाद को देखा है?

पथिक ने उत्तर दिया—'हे बहन, रास्ते में मैंने अशोक के वृक्ष के नीचे तुम्हारी बेटी और दामाद को देखा है। तुम्हारी बेटी की आँखों से सावन-भादों की झड़ी लग रही है, और तुम्हारा दामाद क़हक़हा लगा रहा है। तुम्हारी बेटी इस कदर बिसूर रही है कि उसके रोने से गंगा नदी उमड़ बही है, और तुम्हारे आनन्द-विह्वल दामाद के हँसने से मेरी चादर उड़ गई है।'

यह गीत 'समदाउनि' का सुन्दर उदाहरण है। गीत में कवि ने बेटी की जुदाई में बिसूरती हुई माँ, और माँ की याद में तड़पती हुई बेटी—दोनों के हृदय निकाल कर रख दिये हैं। निम्न-लिखित पंक्तियों के शब्द-शब्द से करुणा फूट बही है—

> गैया के बांधितो मे खुटा में लगाय
> बछिया के लेल जाइय भागल जमाय
> धिअवा के कनइते में गंगा बहिगेल
> दमदा के हँसइते मे चादरि उड़ि गेल

'बेटी के रोने से गंगा नदी उमड़ बही, और दामाद के क़हकहा लगाने से राह चलते हुए पथिक की चादर उड़ गई', में कवि ने कैसी युक्तिपूर्ण एवं कवित्वमयी कल्पना की है। भोली-भाली ग्राम-देवियों के सरल कंठ से इन पंक्तियों को सुन कर मैं कई बार अश्रु-भरी आँखों में डूब चुका हूँ।

(३)

नयन नीर अविरल किय ढारल
कह-कह सुन्दरि नारि
कञ्चन-तन झामरि-सन देखिय
के धनि पढलक गारि
केहन चकमक चानक शोभा
सुरभित अलस समीर
चारि दिशा अछि मदनक वेढल
तिख-तिख पुहुपक तीर
की दुख पडलह कह-कह नागरि
आव तेजह अनुताप
कनइत देखि सेज, पर सूतलि
मोर मन थर-थर कांप
आजु सुनिय पति मातु-पिता-मुख
हेरल सपनहि मांझ
छोटि मोर वहिन भाय मम पारल
कछमछ काटल सांझ
माइक नेह जखन मन पारल
जे देलक प्रतिपालि
तिनका कनइत तेजि कतै छी
केहन जगतक चालि
पिता-भाय जत सखिगन सव छल
सव सौं कएलहुँ कात
से सव चरचा करइत होयत
हिय भेल पिपरक पात
भरि दिन छोटि वहिन कोरहि कै
केहन विहँसि खेलाय

अवइत काल निठुर मोर भाउजि
कर सो लेलन्हि छोडाय
अवइत काल ववा की कहलन्हि
लेलन्ह पैर छोडाय
थर-थर हमर हृदय छल कँपइत
रथ पर लेल चढाय
तखनुक ध्यान अपन घर आँगन
परिजन सकल समाज
आजुक सपन सकल मन पारल
तैं उदास चित्त आज
शैशव अओर किसोर वयस जहँ
सगे-सगे जीवन विताय
तहि ठाँ सौं कथिलै सुनु हे पति
आनल सबके कनाय
चुप रहु चुप रहु कामिनि सुनु-सुनु
काल्हिहि आवत कहारि
रथ चढि जाएव नइहर सुन्दरि
कथिलै रुदन पसारि
मातु-पिता ओ भाय-बहिन सब
देखब सुन्दर नारि
'कुमर' भनहि पुन घर घुरि आयव
रहि नइहर दिन-चारि

हे सुन्दरी, कहो तुम्हारी आँखों से इस तरह लगातार आंसुओं की झडी क्यों लग रही है? तुम्हारा यह कुन्दन-सा दमकता हुआ शरीर मैला क्यों हो गया? हे प्रियतमे, क्या तुम्हें किसी ने गाली दी?

देखो, आसमान में चमकते हुए चाँद की मन्द मुसकान छा गई। सुगन्ध से तर ठंडी हवा मन्द-मन्द बहने लगी, और दिशा-विदिशाएँ मदन के फूल के

तीखे बाणो से विंध गईं। हे सुन्दरी, इस समय तुम्हारे हृदय में कौन ऐसी पीडा है, जो तुम इस प्रकार सेज पर विसूर रही हो ? सेज पर तुम्हें इस तरह विसूरते देख कर मेरा मन थर-थर कांप रहा है।'

नायिका ने कहा—'हे सजन, आज मैंने स्वप्न में माता-पिता का दर्शन किया। छोटी बहन और प्रिय भाई की याद भी ताजी हो उठी, जिससे रात बडी बेचैनी में कटी। नेहमयी मां के नि:स्वार्थ प्रेम की सुध हो आई, जिसने मुझे पाल-पोस कर बडा किया। हाय! ऐसी नेहमयी मां को विलाप करती हुई छोड कर मैं कहां आ गई ? हाय! इस ससार की लीला कैसी विचित्र है ?

हे प्रियतम, मां-बाप, भाई-बहन और सभी सखियों से तुमने मुझे जुदा कर दिया। वे सब मेरा स्मरण कर रहे होंगे। मेरा हृदय पीपल के पत्ते की तरह कांप रहा है।

मैं नित्य अपनी छोटी बहन को गोद में लेकर पुचकारती थी। लेकिन वहाँ से विदा लेने के वक्त निर्मम भावज ने उसे मेरे हाथ से छीन लिया। विदा लेने के समय न मालूम मेरे पिता ने क्या कहा ? उन्होंने अपना पैर छुडा लिया। हृदय थर-थर कांप रहा था। और हे प्रियतम, तुमने मुझे झपट कर डोली में बिठा लिया। आज के स्वप्न ने विदा-समय की सभी स्मृतियाँ मेरे हृदय-पटल पर एक-एक कर अंकित कर दीं। इसीलिए आज मन उदास है।

हे प्रियतम, जिस मैके में मैंने अपने प्रिय कुटुम्बों के साथ शैशव और किशोरावस्था बिताई, उस मैके से तुमने मुझे क्यूं जुदा किया ?

उसके प्रियतम ने कहा—'हे प्रिये, चुप रहो। कल मैं कहार बुलाऊँगा। तुम डोली में सवार हो कर मैके जाना। तुम क्यों बिसूरती हो ? अपने मां-बाप, भाई-बहन और सभी हित-कुटुम्बों से तुम्हारी फिर भेंट होगी। 'कुमर' कवि कहते हैं कि तुम वहां दो-चार दिन सुखपूर्वक रह कर फिर लौट आना।'

इस मार्मिक और करुणापूर्ण गीत में कवि ने मैके से बिछुडी हुई एक नवोढ़ा दुलहिन की व्यथा का चित्र खींचा है। इसकी पंक्ति-पंक्ति में शिशिर ऋतु के प्रभात में जलाशयों से उठनेवाले कुहरे-सी धूमिल आह है।

(४)

केम्हर सँ डाँरी आयल
कहाँ रे के ले जाय
उत्तर मेँ डाँरि आयल
दक्खिन के ले जाय
जव डाँरि चलल उत्तर राज देश
वावा मन पडि गेल हे माड
वावा मोरा रखितथि पगरिक फेँच जकि

अव डाँरी जायत ससुर देश राज
दूध क माछि होयवाँ हे
जव डाँरि चलल पूव राज
वावू मन पडिय गेल
वावू मोरा रखितथि धोतिया क फेँच जकि

अव डाँरी जायत ससुर देश राज
घर क वढनिया होएवाँ हे
जव डाँरी चलल दखिन राज
अमा मन पडि गेल हे
अमा मोरा रखितथि पिजरा क सुगा जकि

अव डाँरी चलल ससुर-घर देश
घर क पोतन होएवाँ हे'
जव डाँरी चलल पछिम राज
भउजि मन पडि गेल हे
भउजि मोरा रखितथि वसिया भात जकि

अव डाँरी चलल ससुर-घर देश
घरक चालन होएवाँ हे

कहाँ से यह डोली आई है, और कहाँ जायगी ?

उत्तर से यह डोली आई है, और दक्षिण जायगी।

जब डोली उत्तर की ओर चली तब अपने बाबा की याद ताजी हो आई। बाबा मुझे पगडी के पेच की तरह रखते थे। लेकिन अब यह डोली मुझे ससुर के राज्य में ले जायगी, जहाँ मैं दूध की मक्खी हो जाऊँगी।

जब डोली पूरब की ओर चली, तब अपने पिता की याद तड़पाने लगी। मेरे पिता मुझे धोती के पेच की तरह रखते थे। लेकिन अब यह डोली मुझे ससुर के राज्य में ले जायगी, जहाँ मैं घर की बोहारी हो जाऊँगी।

जब डोली दक्षिण की ओर चली, तब मुझे अपनी माँ की याद ताजी हो आई। मेरी माँ मुझे पिंजड़े के सुग्गे की तरह रखती थी। लेकिन अब यह डोली मुझे ससुर के देश में ले जायगी, जहाँ मैं घर की पोतन (कपड़ों का तह किया हुआ एक क़िस्म का कूँचा, जिसे भिंगो कर आँगन लीपा जाता है) हो जाऊँगी।

जब डोली पश्चिम की ओर चली, तब भावज की याद ताजी हो आई। भावज मुझे बासी भात की तरह रखती थी। लेकिन अब यह डोली मुझे ससुर के देश में ले जायगी, जहाँ मैं घर की चलनी हो जाऊँगी।

गीत के एक-एक शब्द बेबसी और करुणा में शराबोर हैं। इसमें कवि ने मैके से जुदा और ऐसी जुदा कि अब जीते जी दो-चार बार ही मैकेवालों से मिलने की आशा हो, एक वियोगाकुल रमणी की मनोदशा का चित्रण बड़े ही स्वाभाविक ढग से किया है।

'पिता मुझे धोती के पेच की तरह रखते थे। लेकिन अब यह डोली मुझे ससुर के राज्य में ले जायगी, जहाँ घर की बोहारी हो जाऊँगी', इन पक्तियो को पढ कर कौन ऐसा सहृदय है, जिसकी आँखों से अश्रु प्रवाहित न हो जाय।

(५)

गगा उमडि गेल यमुना उमडि गेल
उमडल घोघा सेमार हे

एक नइ उमड़ल बाबा कौन बाबा
आयल धर्म क वेर हे
कहिति त आहे वेटी तमुआ तनइति
आभोर रेशमक ओहार हे
कहिति त आगे वेटी सुरुज अरोधितौं
गोरे वदन न झमाय हे
कथि लागि ववा तमुआ तनाएव
कथि लागि रेशम ओहार हे
कथि लागि बाबा सुरुज अरोवव
जएबौं सुन्दर वर पास हे
हम भइया मिलि एक कोख जनमल
पिअलि सोरहिया क दूव हे
भइया के लिखइन एहो चउपरिया
हमरो लिखल परदेश हे
ककरहि कानल में नग्र लोग कानय
ककरहि दहलल भुइँ हे
कोन निरवुधिया क आंगि टोपी भिजल
ककर हृदय कठोर हे
ववा क कनले में नग लोग कानल
अमा क कनल दहलल भुइँ हे
भइया निरवुधिया के आंगि टोपी भिजल
भउजि के हृदय कठोर हे
केहि जे कहय वेटी नित्य वोलायव
केहि कहय छौ मास हे
केहि कहय एतही भय रहथि
केहि कहय दुर जाऊ हे

ववा कहथि नित्य वोलाएव
भइया कहथि छौ मास हे
अमा कहथि एतही भए रह
भउजि कहथि दुर जाउ हे

गंगा उमड आई। यमुना उमड कर बह चली। घोंघे और सेवार भी उमड बहे। हाय! धर्म का मुहूर्त्त आया, लेकिन अमुक पिता नहीं उमडे।

पिता ने कहा—'हे बेटी, अगर तुम कहो तो मैं शामियाना तना दूं, रेशम का पर्दा लगा दूं, और सूर्य्य की आराधना करूं कि वह अपनी धूप से तुम्हारा गोरा वदन काला न करें।'

बेटी ने उत्तर दिया—'हे पिता, आप क्यों शामियाना तनायेंगे, क्यों रेशम का पर्दा लगायेंगे और क्यों सूर्य्य की आराधना करेंगे? मैं बगैर किसी कठिनाई के ही प्रियतम के पास चली जाऊँगी।

हे पिता, मेरा और मेरे भाई का एक ही कोख से जन्म हुआ। हमने एक ही साथ कामधेनु गाय का दूध पिया। लेकिन विधाता ने भाई की क़िस्मत में यह चौपाल लिखा, और मेरी किस्मत में परदेश।'

किसके रोने से सारे गाँव के लोगों ने रो दिया?

किसके रोने से पृथिवी दहल उठी?

किस निर्बुद्धि के विलाप करने से उसके शरीर की मिरज़ई और टोपी भींग गई, और किसका हृदय पाषाणवत् कठोर है?

पिता के रोने से सारे गाँव के लोगों ने रो दिया।

माँ के रोने से पृथिवी दहल उठी।

निर्बुद्धि भाई के रोने से उसके शरीर की मिरज़ई और टोपी भींग गई, और मेरी भावज का हृदय पाषाणवत् कठोर है।

किसने कहा—'नित्य बुलाऊँगा?'

किसने कहा—'छ महीने पर बुलाऊँगा।'

किसने कहा—'नित्य यहीं रहो?'

और किसने कहा—'आँखों के ओझल हो जाओ।'

पिता ने कहा—'नित्य बुलाऊँगा।'
भाई ने कहा—'छ महीने पर बुलाऊँगा।'
माँ ने कहा—'नित्य यहीं रहो।'
और भावज ने कहा—'आँखों के ओझल हो जाओ।'
कैसा मर्म-वेधी चित्रण है!

(६)

कथिलै रुदन पसारह नागरि
कमल-नयन मुरझाय
के की कहलक सुन्दरि कहु-कहु
सोचहि हस सुखाय
कथिलै रुदन पसारव हे पति
नइहर जाएव आसे
मातु-पिता-मुख देखव कखनहि
किछु दिन नइहर वासे
कते दिन लै परतारव हे पति
आव मरव विप खाय
काल्हिक भामिनि भाग हुनक भल
सव जनि नइहर जाय

हे सुन्दरी, तुम क्यो विलाप कर रही हो? तुम्हारे कमल-नयन क्यो लिन हो रहे हैं?

हे सुन्दरी, कहो तुम्हें किसने क्या कहा, जो तुम्हारे प्राण कंठगत हो हे हैं?

हे प्रियतम, भला मैं क्यों विलाप करूँ? नैहर जाने की मेरी इच्छा है। छ दिन नैहर में रह कर माँ-बाप का दर्शन कब करूँगी? तुम मुझे और कितने दिनों तक दिलाशा दोगे? यदि तुमने नैहर जाने की अनुमति नहीं ो तो मैं गरल-पान कर शरीर त्याग दूँगी। जो सुहागिन हमसे पीछे श्वसुर-ह आई, वह भी अपने नैहर चली गई।

यह उक्ति अपनी जन्म-भूमि और बन्धु-बान्धवो का परित्याग कर श्वसुर-गृह में बसी हुई नवोढ़ा नायिका की मनोदशा को खूब दर्शाती है।

(७)

अइसन निरमोहिया से जोरलि पिरितिया
बिछुरइत बिलमो न होय आहे सखिया
गौना कराइ पिया देहरी बइसवलन्हि
अपने चलल परदेश आहे सखिया
सासु जी के घर में ननद भेल वइरिन
हमरो गुजारा कोना होय आहे सखिया
फोरबइ में शखा चुरी फारबइ में चोलिया
से धरबइ जोगिनिया क वेष आहे सखिया
दास कबीर एहो गावल समदाउनि
करवइ मे पिया के उदेश आहे सखिया

हे सखी, मैंने ऐसे निर्मोही से प्रेम किया कि बिछुड़ने में जरा भी देर न हुई। द्विरागमन करा कर वह मुझे घर में बिठा गया, और स्वयं परदेश चला गया।

सास के घर में ननद मेरी बैरिन हो गई। हे सखी, कहो अब मेरे ये दिन कैसे कटें ?

हे सखी, मैं अपनी यह शंख की चूडी तोड़ डालूंगी। कचुकी फाड़ दूंगी। और प्रियतम की टोह में जोगिन बन कर अलख जगाऊँगी।

कबीरदास ने यह 'समदाउनि' गाया है। हे सखी, मैं (अवश्य) कभी-न-कभी प्रियतम की खोज कर लूंगी।

(८)

जब माधो चललन माधोपुर नगरिया
छाडि देल सकल समाज—आहे सखिया
एहो में जनितौं पिया माधोपुर जयता
बाँधितो में रेशम क डोर—आहे सखिया

रेशम बँधनमा टुटिए फाटि जएतइ
बाँधितो में अँचरा लगाय—आहे सखिया
अँचरा के फारि-फारि कगदा बनइतौं
लिखितौं में पिया के सन्देश—आहे सखिया
काते-कुते लिखितौं हुनक कुशलिया
बिचे में पिया क वियोग—आहे सखिया

जब श्रीकृष्ण मधुपुर जाने लगे तो सभी हित-कुटुम्बों का परित्याग कर दिया। हे सखी, यदि मैं जानती कि वह मधुपुर जायेंगे तो उन्हें रेशम की डोर में बांध कर रखती। रेशम की डोर टूट जाती, अतः उन्हें चुंदरी के आंचल में बांध कर रखती। आंचल फाड़-फाड़कर कागज बनाती। उस पर अपने प्रियतम को प्रणय-सन्देश लिख कर भेजती। पत्र के हाशिये में कुशल-क्षेम लिखती, और बीच में अपने प्रियतम का वियोग।

(६)

बड रे यतन हम सिया जी के पोसलौं
सेहो रघुवशी ने ने जाय आहे सखिया
रानी जे रोवैं रामा रोवैं रनिवसवा
राजा जे रोवैं दरबजवा हे सखिया
हाथी जे रोवैं रामा रोवैं हथिसरवा
घोडा जे रोवैं घोडसरवा हे सखिया
टोला ओ परोस मिलि अओर सब रोयलै
रोवैं नगरिया के लोग आहे सखिया
मिलि लिअ मिलि लिअ सग के सहेलिया
अब ने अयतन सिया राज आहे सखिया

हे सखी, बड़े प्रेमपूर्वक जिस सीता का लालन-पालन किया, उसी सीता को राम लिये जा रहा हैं।

रानियां रग-महल में रो रही हैं। राजा दरवाजे पर विलाप कर रहे हैं।

हाथी फीलखाने में रो रहे हैं। घोड़े अस्तबल में रो रहे हैं। अड़ोस-पड़ोस और सारे गाँव के लोग रो रहे हैं।

हे सखी, चलो हम सीता से अन्तिम विदा ले आवें। वह पुन इस देश में लौट कर नहीं आयेगी।

(१०)

छोट अँगनमा माइ वरि परिवार हे
मिलइत-जुलइत माइ हे भय गेल साँझ
उठु अमा उठु अमा विदा मोहि दिउ
पउतिया मँठइत अमा लेलि लुलुआय
पथर के छतिया गे वेटी विहुँसि न हे जाउ
चलइत के वेरि वेटी देलि समुझाए
उठु भउजी उठु भउजी विदा मोहि दिउ
वसिया देअइत भउजी लेलि लुलुआय
पथर के छतिया ननदो पसिझियो ने जाउ
चलइत के वेरिया ननदो देलि समुझाय
उठु बावा उठु बाबा विदा मोहि दिउ
दहेजवा देअइत वावा लेलि लुलुआय
पथर के छतिया वेटी विहुँसि ने जाऊ
चलइत के वेरिया वेटी देलि समुझाय
उठु वाबू उठु वाबू विदा मोहि दिउ
कपडा देअइत वावू लेलन्हि लुलुआय
पथर के छतिया वेटी बिहुँसि ने जाउ
चलइत के वेरिया वेटी देलि समुझाय
उठु भइया उठु भइया विदा मोहि दिउ
गहना देअइत भाय लेलन्हि लुलुआय
पथर के छतिया वहिन विहुँसि न हे जाउ
चलइत के वेरिया वहिन देलि समुझाय

छोटा आँगन है। बड़ा परिवार। मिलने-जुलने में ही शाम हो गई।

हे माँ, उठो। हे माँ, उठो। विदा दो।

यह सुन कर पिटारी साँठती हुई माँ ने मुझे तिरस्कारसूचक शब्दों में धिक्कारा।

'पत्थर की तरह कठोर कलेजावाली हे बेटी, विदा के समय मत हँसो'—इस प्रकार माँ ने मुझे समझाया।

हे भावज, उठो! हे भावज, उठो! विदा दो। यह सुन कर जलपान परोसती हुई भावज ने मुझे तिरस्कारसूचक शब्दों में दुत्कारा।

'पत्थर की तरह कठोर कलेजावाली हे ननद, विदा के समय मत हँसो'—इस प्रकार भावज ने मुझे समझाया।

हे बाबा, उठो! हे बाबा, उठो! मुझे विदा दो। यह सुन कर दहेज देते हुए बाबा ने मुझे दुत्कारा।

'पत्थर की तरह कठोर कलेजावाली हे बेटी, विदा के समय मत हँसो'—इस प्रकार मेरे बाबा ने समझाया।

हे पिता, उठो! हे पिता, उठो! मुझे विदा दो। यह सुन कर कपड़े देते हुए पिता ने मुझे दुत्कारा।

'पत्थर की भाँति कठोर कलेजावाली हे बेटी, विदा के समय मत हँसो'—इस प्रकार मेरे पिता ने समझाया।

हे भाई, उठो! हे भाई, उठो! मुझे विदा दो। यह सुन कर गहने देते हुए मेरे भाई ने मुझे दुत्कारा।

'पत्थर की तरह कठोर कलेजावाली हे बहन, विदा के समय मत हँसो'—इस प्रकार मेरे भाई ने समझाया।

(११)

मिलि लिय सखिया दिवस भेल रतिया
चित्त भेल जग मेँ उदास
सात भाय केर एक बहिनिया
से कोना जइति ससुरार

कोन भाय यमुना में नाव खिरओतनि
कोन भाय जयता सग-साथ
निर्गुण भाय यमुना में नाव खिरओतनि
सगुण भाय जयता सग-साथ
नहिरक लोग सब कउरना करथिन
ससुरा मे उधम-वधाय

हे सखी, आओ एक बार गले लग कर मिल लें। दिन रात हो गये। ससार से चित्त विरक्त हो गया।

सात भाइयों के बीच एक बहन है। हाय! वह ससुराल कैसे जायगी?

कौन भाई यमुना के बीच से नाव खेकर पार लगायेगा। कौन भाई साथ जायगा?

निर्गुण भाई यमुना के बीच से नाव खेकर पार लगायेगा। और सगुण भाई साथ जायगा।

नैहर के लोग विलाप कर रहे हैं, और ससुराल में उत्सव मनाया जा रहा है।

(१२)

वर रे यतन सं सीता जी कैं पोसलौं
सेहो रघुवशी ने ने जाय
मिलि लिय मिलि लिय सखि सब मिलि लिय
सीता बेटी जइति ससुरार
कथि केर डोलिया केहनि ओहरिया
लागि गेल वतिसो कहार
चननक डोलिया सबजि ओहरिया
लागि गेल वतिसो कहार
आगु आगु रघुवर पाछु पाछु डोलिया
तकरा पाछु लछमन भाय

बड़े यत्नपूर्वक सीता का लालन-पालन किया। उसी सीता को राम लिये जा रहा है।

हे सखी, एक वार मिल लो। गले लग कर मिल लो। बेटी सीता ससुराल जायगी।

किस वस्तु की डोली है? किस रंग का पर्दा लगा है? उसे बत्तीस कहार उठा कर चल पड़े।

चन्दन की डोली है। उसमें सब्ज रंग का पर्दा लगा है। उसे बत्तीस कहार उठा कर चल पड़े।

आगे-आगे राम हैं। पीछे-पीछे डोली, और उसके पीछे लक्ष्मण जा रहे हैं।

(१३)

कोन देश सँ अयले रे सोनरवा
बइसि गेलैं बवा क दुआर
पूर्वहि देश सँ अयलै सोनरवा
बइसि गेलै बवा क दुआर
नीक-नीक गहना गढ़िहे रे सोनरा
सीता बेटी जइति सम्रुरार
के मोरा साँठत पउति पेटारिहुँ
के साँठत धेनु गाय
के मोरा साँठत फूटलि बासन
ककरहि हृदय कठोर
माय मोर साँठत पउती पेटारिहुँ
बाबा साँठत धेनु गाय
भाय मोर साँठत फूटलि बासन
भउजिक हृदय कठोर
धिआ क जनम जनि दिअह बिधाता
मिया दूबथि बिच धार

रे सोनार, तुम किस देश से आये हो? और बाबा के दरवाजे पर बैठ गये हो?

सोनार पूरब से आया है, और बाबा के दरवाजे पर बैठ गया है।

रे सोनार, तुम कुछ अच्छे-अच्छे गहने गढ़ कर दो। बेटी सीता ससुराल जायगी।

कौन पिटारी साँठ[1] कर देगा? कौन धेनु गाय देगा?

कौन फूटी हाँडी साँठ कर देगा? और किसका हृदय कठोर है?

मेरी माँ पिटारी साँठ कर देगी। बाबा कामधेनु गाय देगा।

भाई फूटी हाँडी साँठ कर देगा, और मेरी भावज का हृदय कठोर है।

हे विधाता, कन्या का जन्म मत दो। उसके जीवन की नौका मँझधार में डूब जाती है।

(१४)

चइत बइसाख केर धूप मतओना
धिया मोरा जइति कुम्हलाय
जौं हम जनितो धिया सासुर जयती
बाटहिं बिरिछ लगाय
एक कोस गेली धिया दुइ कोस गेली
तेसर में लागल तरास
बास कोपर सन भाय हम तेजल
कमलक फुल सन बाप
पुरइन दह सन माय हम तेजल
छुटि गेल बबा केर राज
डाँरि उघारि जब देखलन्हि धिया
काँकरि जका हिया फाट

---

१ दहेज देना। भिन्न-भिन्न प्रकार की वस्तुएँ, जैसे—कंघे, दर्पण, लहँगे आदि सँभाल-सँभाल कर पिटारी में रखना।

बेटी की माँ चिंता कर रही है—चैत और वैशाख की धूप मूर्च्छित कर देनेवाली होती है। मेरी बेटी प्रखर ताप से कुम्हला जायगी। यदि जानती कि बेटी ससुराल जायगी तो रास्ते में—सडक के दोनो किनारे दरख्त लगवा देती।

बेटी एक कोस गई। दो कोस गई। तीसरे कोस में प्यास के मारे उसके कंठ सूख गये।

वह मन-ही-मन सोचने लगी—मैंने बांस की कोंपल के समान भाई का परित्याग कर दिया। कमल के फूल की भांति पिता को छोड आयी।

पुरइन से हरे-भरे सरोवर के समान मा को त्याग दिया, और बाबा के सुखमय राज्य से भी मेरा विछोह हो गया।

जब डोली का पर्दा हटा कर उसने इधर-उधर देखा तो जन्मभूमि की याद आ जाने से उसका कलेजा ककडी के समान विदीर्ण हो गया।

(१५)

सुभग पवित्र भूमि मिथिला नगरिया
हमरा के कहाँ ने ने जाइछे रे कहरिया
जूही वो चमेली, चम्पा, मालतिकुसुमगाछ
केवरा गुलाब सभ नुनु रे कहरिया
सुन्दर सुन्दर वन सुन्दर सुन्दर घन
सुन्दर सुन्दर सभ गाछ रे कहरिया
केरा ओ कदम्ब आम पिपर परास गाछ
आब कहाँ देखबइ हाय रे कहरिया
ककरा नयनमा में गगा नीर वहि गेल
ककरहि हृदय कठोर रे कहरिया
माता जी क नयन सँ गगा नीर वहि गेल
पिता जी क हृदय कठोर रे कहरिया
केहि मोरा साँठल पउति पेटरिया हे
केहि मोरा देल धेनू गाय रे कहरिया

माय मोरा साँठल पउति पेटरिया हे
पिता मोरा देल धेनु गाय रे कहरिया
लालि-लालि डोलिया में सबुज ओहरिया
लागि गेल बतिसो कहार रे कहरिया
गोर तोरा परिअऊ अगिला कहरिया रे
तनियक डँडिया रोकु रे कहरिया
भाय मोरा रहितथि डोलि संग चलितथि
बिनु भाय डोलिया सून रे कहरिया
नहिअरा के मुंह हम देखवइ कोना आब
नहिअरा के सपना करयले रे कहरिया
बाबू जी के मुंह हम देखब कोना आब
चाची कोना बिसरब हाय रे कहरिया
भाय ओ भतीजा अओर सखिया सलेहर
आब कोना देखबइ हाय रे कहरिया
आगा-आगा रामचन्द्र पाछाँ भाय लछमन
पहुँचि गेल झटपट अवध नगरिया
आरति उतार लागल कोशिला महलिया
सभ सखि मंगल गाउ रे कहरिया

रे कहार, मिथिला की सुंदर और पवित्र भूमि से नाता छुड़ा कर मुझे कहाँ लिये जा रहे हो?

जहाँ जूही, चमेली, गुलाब आदि के फूल-गाछ लहराया करते हैं। जहाँ के वन-उपवन अत्यन्त मनोरम हैं। सुन्दर बादल आसमान में मंडला रहे हैं। किस्म-किस्म के सुंदर गाछ हैं—केला, पीपल, पलाश आदि।

इन्हें अब कहाँ देखूंगी?

किसकी आँखों से गंगा-जल उमड़ बहा? और किसका हृदय प्रस्तर के समान कठोर है।

माँ की आँखों से गंगा-जल उमड़ बहा, और पिता का हृदय प्रस्तर के समान कठोर है ?

किसने मुझे उपहार में पिटारी सौंठ कर दी ? और किसने कामधेनु गाय दी ?

माँ ने उपहार में पिटारी साठ कर दी, और पिता ने कामधेनु गाय दी।

लाल रंग की डोली में सब्ज रग का पर्दा लग गया। उसको बत्तीस कहार कंधे पर उठा कर द्रुत वेग से चल पडे।

रे अगिला कहार, मैं तुम्हारे पैरों पडती हूँ। पल-भर के लिए डोली रोक लो। मेरे भाई होते तो डोली के साथ-साथ चलते। बिना भाई के डोली सूनी लगती है।

रे कहार, नैहर का मुख अब कैसे देखूगी ? हाय, मेरे लिए नैहर स्वप्न हो गया।

पिता का मुख कैसे देखूंगी ? और अपनी चाची को याद कैसे भूलूंगी ?

भाई, भतीजे, सखी और अपनी बहन को कैसे देख पाऊँगी ?

डोली के आगे-आगे राम है—पीछे-पीछे लक्ष्मण। वे बात-की-बात में अयोध्या पहुंच गये। रानी कौशल्या उनकी आरती उतारने लगी, और सखियाँ प्रसन्न होकर मंगल गाने लगीं।

झूमर

'झूमर' मोहन की उस मधुर वशी-ध्वनि की तरह है, जो अपने स्वर-वैचित्र्य से मानस-जगत को आन्दोलित करती हुई शिरा-शिरा में कम्पन भर देती है। स्थूल दृष्टिवालों के लिए तो वशी एक निर्जीव बाँस-मात्र है, लेकिन जिसकी आँखों में भेद-भरी चितवन है उसके लिए तो प्रेम की शलाका से तप्त वशी के उस सरल हृदय में प्रेम की गुनगुनाहट और जीवन के मौन रहस्यो की कथा भरी है।

'झूमर' की दो किस्में है—(१) सन्देशात्मक, और (२) भावात्मक। सन्देशात्मक 'झूमर' में भौंरे, काक, कोयल और राहगीरों के द्वारा प्रवासी साजन को विरहिणी नायिका की ओर से सन्देश भेजे गए हैं। और भावात्मक 'झूमर' में बुद्धिवाद हुकार कर उठा है अथवा यो कहिये कि भावात्मक 'झूमर' में रसात्मक अनुभूति और आनन्द का साधारणीकरण है। लेकिन अब तक हमें जो 'झूमर' उपलब्ध हुए है, उन्हें देखने से पता चलता है कि भावात्मक 'झूमर' की संख्या प्राय नगण्य है और उनमें मुश्किल से दश-प्रति-शत रचनाएँ उच्च कोटि में शुमार करने योग्य है।

'झूमर' का उत्पत्तिकाल पुराना है। अपढ गँवारो के कठ से निकलते-निकलते इसके पैरायो और कडियों में काफी परिवर्त्तन हो चुके हैं। इसकी भाषा, भाव, शैली और विषय सामयिकता के मनोहर साँचे में ढल कर परिष्कृत हो गये हैं। 'झूमर' के एक ग्रामीण विशेषज्ञ का कहना है कि 'झूमर' काल के प्रारम्भिक गीति-काव्य पुरानी फुलवाडी के वर्गे-ज़र्द—पीले पत्ते की तरह हैं जो 'निर्गन्धा इव किंशुका'-से प्रतीत होते हैं। लेकिन 'झूमर' के उत्तर-काल की रचनाशैली काव्य की फुलवाडी की फूली हुई लता है, जो अपनी उग्र गन्ध से तबीयत को गुलजार करती है। 'झूमर' के प्रारम्भिक

काल के अधिकाश 'झूमर' गीत प्राय अनमेल लम्बे-लम्बे चरणो के सग्रह होते थे, जिसके (ग़ज़ल के पहला शेर—'मतला' की तरह) दोनों चरणों की तुक एक दूसरे से परस्पर मिली होती थी। कोई-कोई 'झूमर' गीत उर्दू शायरी 'कसीदे' की तरह व्यक्ति-विशेष की प्रशसा में लिखे जाते थे, और कोई-कोई अपनी भाव-प्रवणता और रागात्मिका शक्ति से रगारग की कैफियतें जाहिर करते थे।

'झूमर' की एक अपनी दुनिया है। इसका मजमून प्रेम से शराबोर और पाक ख़यालातो से लबालब भरा है। पक्ति-पंक्ति में वारुणी और शब्द-शब्द में जादू का असर है। यह हर ऋतु और हर महीने में गाया जाता है। 'झूमर' का अर्थ है—झुमाना, मस्ती में नचाना। जब गायिकायें वायु के मन्द-मन्द झकोरो-सी झूमती हुई अपने कोकिल-कठो से इसे गाती है, तब पृथिवी का पत्ता-पत्ता नाच उठता है, और आनन्द की एक मन्दाकिनी-सी फूट बहती है। तिस पर इसकी साहजिकता और स्पष्टता तो सोने में सुगन्ध ला देती है। वह हमें भावार्थ निकालने—अनुसधान करने का मौका नहीं देती। अपितु उसका उत्तर उसके स्वच्छ हृदय-मुकुर में स्पष्ट झलक उठता है। वस्तुत यही चीज़ है, जो 'झूमर' को लोकोत्तर-आनन्ददायक बनाती है।

कुछ उदाहरण लीजिए।

निम्नलिखित 'झूमर'—जो खासकर हिंडोले पर बैठकर गाया जाता है, में देवर; जिसने बडे प्रेम से रेशम की डोरी गूँथकर हिंडोले लगाये है—अपनी भावज से झूला झूलने को कहता है। लेकिन उसकी भावज जो अपने नादान शिशु को गोद में लेकर हिंडोले पर बैठना खतरे से खाली नहीं समझती, उसके प्रस्ताव को स्पष्ट अस्वीकार करती है। पाठक देखें कि महज इतनी-सी बात निम्नलिखित 'झूमर' में कितने कोमल ढग से दरशाई गई है—

(१)

छोटका देवर रामा
बड रे रगीलवा

रेशम के डोरिया न
देवरा बान्हथि हिंडोरवा
रेशम के डोरिया न
से झूलि लिअउ न
भउजी कल के हिंडोरवा
त झूलि लिअउ न
कोना क झूलू देवरा
कल के हिंडोरवा
से मोरा गोदी न
कोमल कुसुम बलकवा
से मोरा गोदी न
बबुआ सुतइअउ भउजी
सोने के पलगिया
से झूलि लिअउ न
भउजी कल के हिंडोरवा
से झूलि लिअउ न
सोने के पलगिया
से गिरि जयतइ बबुआ
से टूटि जयतइ न
देवरा जनम पिरितिया
से टूटि जयतइ न
देवरा जनम सनेहिया
से छूटि जयतइ न

इस छोटे-से गीत में कवि ने एक माँ के निस्वार्थ वात्सल्य-रस-पूरित हृदय का, जो अपने शिशु के मंगल के लिए विश्व के भारी-से-भारी प्रलोभनों को भी लात मारने को तैयार है, कितना सुकुमार अंकन किया है।

(२)

निम्नलिखित रचना 'झूमर' का एक सुन्दरतम उदाहरण है। इसमें नायिका अपने भाई का विवाह देखने अपने मैके जाना चाहती है। वहाँ जाने के लिए उसके प्रियतम की रजामन्दी जरूरी है। प्रियतम टालमटोल करता है। सुनिये—

पिया हे नइहर मे भाई के विवाह
देखन हम जायव
सुनऽहे प्राण देखन हम जायव
धनि हे धय देहु सिरवा पर हाथ
कतेक दिन रहव
सुन हे प्यारी कतेक दिन रहव
पिया हे नय धरवड सिरवा पर हाथ
वरस विति जयतइ
सुनऽअ हे प्राण वरस विति जयतइ
धनि हे करवह सोलहो सिंगार
केही के देखलाएव
सुन हे प्यारी केही के देखलाएव
पिया हे करवड मे सोलहो सिंगार
सखी के देखलायव
सुनऽअ हे प्राण सखी के देखलायव
धनि हे अयतड मे जाडा के रात
केही के गोदी सोएव
सुन हे प्यारी केही के गोदी सोएव
पिया हे अएतइ मे जाडा के रात
अम्मा के गोदी सोएव
सुनऽअ हे प्यारे अमा के गोदी सोएव

वनी हे अएतइ मे फागुन के वहार
केहि मे रग खेलव
पिया हे अएतइ मे फागुन के वहार
भउजि सग खेलव
सुनऽअ हे प्यारे भउजि सग खेलव
वनि हे करवइ मे दोसरो विवाह
तोहि के न वोलाएव
सुनऽअ हे प्यारि तोहि के न वोलाएव
पिया हे नइहर मे भाइ अयह वकील
तोही के बँववाएव
पिया हे नइहर मे भाइ छथ दरोगा
तोही के पिटवाएव

ओ प्रीतम, मैके में मेरे भाई का विवाह है। देखने जाऊँगी। ओ प्राण, देखने जाऊँगी।

अयि प्रियतमे, पहले अपने सिर पर हाथ रख कर कसम खाओ कि तुम वहाँ कितने दिन रहोगी ? ऐ प्यारी, तुम वहाँ कितने दिन रहोगी ?

ओ प्रीतम, मैं सिर पर हाथ रख कर कसम नहीं खाऊँगी। मैं वहाँ वर्षों रहूँगी। ओ प्राण, मैं वहाँ वर्षों रहूँगी।

अयि प्रियतमे, तुम वहाँ सज-धज कर सोलह प्रकार के शृंगार किसे दिखाओगी ? अयि प्यारी, किसे दिखाओगी ?

ओ प्रीतम, मैं सज-धज कर सोलह प्रकार के शृंगार प्यारी सखी को दिखाऊँगी। ओ प्राण, अपनी प्यारी सखी को दिखाऊँगी।

अयि प्रियतमे, जाडे की रात आयेगी तब तुम किसकी गोद में सोओगी। अयि प्यारी, तुम किसकी गोद में सोओगी।

ओ प्रीतम, जाडे की रात आयेगी, तब अपनी माँ की गोद में सोऊँगी। ओ प्राण, मैं अपनी माँ की गोद में सोऊँगी।

अयि प्रियतमे, होली की वहार आयेगी तव तुम किसके साथ आमोद-प्रमोद करोगी ? ओ प्रियतमे, तुम किसके साथ आमोद-प्रमोद करोगी ?

ओ प्रीतम, होली की वहार आयेगी, तव अपनी भावज के साथ आमोद-प्रमोद करूँगी। ओ प्राण, मैं अपनी भावज के साथ आमोद-प्रमोद करूँगी।

अयि प्रियतमे, तुम जाओ। मैं दूसरा विवाह कर लूंगा, और मैं तुम्हे कभी नहीं वुलाऊँगा। अयि प्यारी, मैं तुम्हें कभी नहीं वुलाऊँगा।

दूसरा विवाह करने की वात सुन कर उसकी प्रिया व्यंग्यपूर्वक अपने प्रियतम के प्रश्न का जवाव देती है—

ओ प्रियतम, मैंके में मेरा भाई वकील है। तुम दूसरा विवाह कर लोगे तो मैं तुम्हें जेल भिजवा दूंगी।

ओ प्राण, मैंके में मेरा भाई दारोगा है। यदि तुम दूसरा विवाह कर लोगे तो मैं तुम्हें सजा दिलाऊँगी। ओ प्राण, मैं तुम्हें सजा दिलाऊँगी।

(३)

वँसिया वजा के कान्हा मोरा मन हरलन्हि
मधुवन मे गेल न
मोरा वंशीवाला कान्हा मधुवन मे गेल न
ओहि मधुवनमा में कुवरी जोगिनिआ
न जादू कयलन्हि न
मोरा वंशीवाला कान्हा पर जादू कयलन्हि न
अपने जें गेला हरि जी देश रे विदेशवा
त दऽय गेल न
एक मुगना खेलओना न दऽय गेल न
दिन के जें देवउ मुगना दही-चूरा भोजना
त राति के सुगना न
देवउ सूते के पलगिया न राति के सुगना न
अगली पहर राति पिछली राति न
सुगना काटय लागल चोलिया न पिछली राति न

एक मन करइ सुगना बाँहि धरि ममोरितौ
त दोसर मनमा न
सुगना पिया के खेलनमा त दोसर मनमा न
इहँमा के उडल सुगना जाय परदेशवा
त बइसे सुगना न
हाथ लेल प्रभु जँघिया बइसओलन्हि
त कहू रे सुगना न
मोरा घरे के कुशलिआ त कहू रे सुगना न
माए अहाँ क रोअथि साँझ भिनुसरवा
त वहिनि अहाँ के न
रोअथि आपन ससुररिया त बहिनि अहाँ के न
धनी अहाँ क रोअथि आधि-आधि रतिया
त सेजिए देखि न
धनि के फटइछइन करेजवा त सेजिय देखि न

मेरे कृष्ण ने वंशी बजा कर मेरा मन मोह लिया, और स्वय मधुवन चले गये। उस मधुवन में एक कुब्जा जोगन रहती है, जिसने मेरे वशीवाले कृष्ण पर जादू कर दिया है। मेरे प्रियतम तो स्वय परदेश चले गये, और मेरे मनोरजन के लिए एक खिलौना—सुग्गा छोड गये।

रे सुग्गे, मै तुम्हें दिन में दही-चूरा खाने को दूँगी, और रात में सोने के लिए लाल पलंग। जब पहली और चौथी पहर रात बीत गई तब सुग्गा ने कठोर चोंच से मेरी चोली कुतर डाली।

रे सुग्गे, तुमने मेरी चोली कुतर डाली। अगर तुम मेरे प्रियतम का प्यारा खिलौना न होता तो तुम्हें हाथों में लेकर मरोड डालती।

सुग्गा उड कर सीधे परदेश जाता है। वियोगिन का प्रियतम सुग्गा को अपनी जघा पर बिठाता है, और घर का कुशल-क्षेम पूछता है। सुग्गा कहता है—

तुम्हारी माँ तुम्हारे वियोग में सुवह-शाम आँसू वरसाती है। तुम्हारी वहन अपनी ससुराल में तुम्हारे लिए जार-जार रो रही है। तुम्हारी प्रियतमा आधी-आधी रात को सेज सूनी देख कर तड़पती है, और उसका हृदय विदीर्ण हो रहा है।

(४)

फुलवा पहिनि हम सोयलौं अँगनमा
अवा-जाइ कएलौ
ओ मोरा राजा अवा-जाइ कएलौं
इ देहिया मोर अमा के पोसल
कोना हक लगएलौं
ओ मोरे प्यारे कोना हक लगएलौं
फुलवा अइसन हम चमकइत रहलि
धूरमइल कइ देलौ
टिकवा पहिनि हम सोएलौं अँगनमा
अवा-जाइ कयलौं
ओ मोरा राजा अवा-जाइ कएलौं
इ देहिया मोरा चाची के पोसल
कोना हक लगएलौं
सोनमा अइसन हम चमकइत रहलि
पीतर कइ देलौं
ओ मोर राजा पीतर कइ देलौं

अजी ओ प्रियतम, मैं कर्णफूल पहन कर आँगन में सोई थी। तुमने आना-जाना किया। यह शरीर मेरी माँ का पाला हुआ था। तुमने कैसे हक जताया? अजी ओ प्यारे, तुमने कैसे हक जताया? मैं फूल की तरह सुगन्धित थी। तुमने धूल की तरह नीरस वना दिया।

अजी ओ प्रियतम, मैं मागटीका पहन कर आँगन में सोई थी। तुमने आना-जाना किया। यह शरीर मेरी चाची का पाला हुआ था। तुमने कैसे

हक़ जताया ? मैं सोने की तरह चमकती थी। तुमने पीतल बना दिया। अजी ओ प्यारे, तुमने पीतल बना दिया।

(५)

कोन वन हारि बाँस झुरमुट गे सजनी
कोन वन पिक कुहु कुहुकल गे सजनी
बाबू वन हारि बाँस झुरमुट गे सजनी
सँइए वन पिक कुहु कुहुकल गे सजनी
जौं हम जनितओ बलमु जयतइ परदेशवा
रखितऔं कलेजवा छिपाए गे सजनी
कथिए फारिए कोरा कागज गे सजनी
कथिए काजर-मसिहान गे सजनी
अँचरा फारिय कोरा कागज गे सजनी
नयना काजर मसिहान गे सजनी
ककरा हम बुझिअऊ कयथा गे सजनी
ककरा हाथ चिट्ठि लिखि भेजिअऊ गे सजनी
घरहिं में देवरा कएथवा गे सजनी
राही हाथ चिट्ठि लिखि भेजह गे सजनी
अऊँठि-पऊँठि देवर लिखह खेम कुशलवा
माँझे ठँइया धनी के विरोग
बाट रे बटोहिया कि तोहिं मोरा भाय
हमरो समाध नेने जइह रे बटोहिया
हमरो समाध बलमु आगु कहिह
कहिह में वचनि बुझाय
तोहरो बलमु जी के जनिअउ न सुन्दरि
कोना कहवइ वचनि बुझाय
हमरो बलमुआ के घुट्टि शोभइन धोतिया
जइमे रहे जइ जमिदार

जहँमा जँ देखिह भइया दस-वीस लोगवा
ताहाँ चिठि रखिह छपाय
जहँमा जँ देखिह अमगर वलमुआ
ताहाँ चिट्ठि दिअह पसार
चिठिया पढइते मे हरि मुसकयलन्हि
केता धनि लिखलक विरोग
देहि रे सहेववा रोज रे तलववा
अव हम घरु अपन वाट

हे सखी, किसके उपवन में यह वाँसों का हरा-भरा झुरमुट है, और किसके उपवन में यह कोयल कूक रही है ?

हे सखी, तुम्हारे पिता के उपवन में यह वाँसो का हरा-भरा झुरमुट है और तुम्हारे प्रियतम के उपवन में यह कोयल कूक रही है।

हे सखी, यदि मैं जानती कि मेरे धन के लोभी प्रियतम परदेश जायेंगे, तो मैं उन्हें कलेजे में रखती। अव उन्हें प्रणय-संदेश लिख कर भेजूंगी; लेकिन मेरे पास न तो कोरा कागज है और न स्याही।

मैं किस वस्तु का कोरा काग़ज़ तैयार करूँ, और किस वस्तु की स्याही ?

हे सखी, अपने आंचल को फाड़ कर कोरा काग़ज़ वना लो, और अपनी आंखो के काजल की स्याही।

नायिका अनपढ है। अपनी अनुभूतियों को क़लम पर उतारने में असमर्थ। इसलिए वह जिज्ञासा करती है—

हे सखी, मैं पत्र लिखने के लिए किस लेखक की मदद लूं और उसको किसके हाथ प्रियतम को भेजूं ?

उसकी सखी ने कहा—तुम्हारे तो घर में ही तुम्हारा देवर पत्र-लेखन-कला में पटु है। उसीसे पत्र लिखा लो और उसे किसी राह चलते हुए मुसाफिर के हाथ भेज दो।

नायिका देवर के पास जाती है, और पत्र का मजमून वतलाती है—हे देवर, पत्र के चारों कोने पर कुशल-क्षेम लिखो और उसके बीच में मेरे प्रियतम का वियोग।

हे पथिक, तुम मेरे भाई हो। मेरा प्रणय-संदेश मेरे प्रियतम के पास लेते जाओ। उन्हें मेरा सन्देश भली भाँति समझा देना।

पथिक ने कहा—हे बहन, तुम्हारे प्रियतम की मैंने सूरत तक नहीं देखी। मैं उसे तुम्हारा प्रणय-सदेश कैसे कहूँगा?

नायिका ने कहा—हे पथिक, मेरे प्रियतम घुटने तक धोती पहनते हैं और ऐसे ठाट-बाट से रहते हैं, जैसे कोई वाबू जमींदार रहे। जहाँ उन्हें मित्रों की गोष्ठी में देखना वहाँ चिट्ठी छिपा रखना और जहाँ अकेला देखना, वहाँ चिट्ठी खोल कर दे देना।

पथिक नायिका का पत्र लेकर उसके प्रियतम के पास गया। पत्र पढ कर उसका प्रियतम मुसकिराया और बोला—मेरी प्रियतमा ने कितना वियोग लिखा है?

पथिक ने कहा—मुझे पुरस्कार मिले। मैं अपना रास्ता नापूँ। मैं आपकी वियोगिन प्रिया का प्रणय-सदेश लाया हूँ।

'अँचरा फारिए कोरा कागज ग सजनी, नयना काजर मसिहान' (आँचल को फाड कर कागज बना लो और आँखों के काजल की स्याही।) में वियोगिन का हृदय उमड पडा है। इन पक्तियों में वेदना तड़प उट्ठी है। पुरानी 'झूमर'—शैली का यह गीत विरह का एक सजीव वर्णन है।

(६)

बोलिया सुना क कहाँ गेलौं रे
माटी के सुगनमा
उडि-उडि सुगना कदम चढि वइसल
कदम के सब रस ले लेल हे
माटी के सुगनमा

उडि-उडि सुगना लवग चढि वइसल
लवगा के सब रस ले लेल हे
माटी के सुगनमा
उडि-उडि सुगना जोवन चढि वइसल
जोवना के सब रस ले लेल हे
माटी के सुगनमा

रे मिट्टी के सुग्गे, अपनी बोली सुना कर तू कहां चला गया? मेरा मिट्टी का सुग्गा उड कर कदम की डाल पर बैठा, और कदम का सब रस चूस लिया। मेरा मिट्टी का सुग्गा उड कर लौंग की डाल पर बैठा और लौंग का सब रस चूस लिया। मेरा मिट्टी का सुग्गा उड कर जोवन की डाल पर बैठा, और जोवन का सब रस चूस लिया। रे मिट्टी के सुग्गे, तू अपनी बोली सुना कर कहां चला गया?

(७)

नयना में शीशा लगाउ
वलमु नयना में शीशा लगाउ
जकरा दुआरि पर गगा वहय
से कोना कुँइया पर जाय
वलमुआ नयना मे शीशा लगाउ
जकरहि घर मे पतिवरता तिरिया
से कोना वेनवा मेंग जाय
वलमुआ नयना में शीशा लगाउ
जकरहि हिया परमात्मा वसय
से कोना वन-वन भरमाय
वलमुआ नयना में शीशा लगाउ

रे सजन, जरा अपनी आंखो में शीशा लगा कर तो देख। जिसके दरवाज़े पर गंगा वहती है, भला वह कुएँ पर क्यो जायगा?

रे सजन, जरा अपनी आँखों में शीशा लगा कर तो देख।

जिसके घर में पतिव्रता नारी है, भला वह वेश्या के पास क्यों जायगा ?

जिसके हृदय-मन्दिर में परमात्मा है, भला वह जंगलों में उसकी खोज क्यों करेगा ?

रे सजन, ज़रा अपनी आँखों में शीशा लगा कर तो देख ।

(८)

सोने क झारी गंगाजल पानी
पिउ पिया पानी पिलाउ जल्दी सँ
दिल अति व्याकुल भेल गरमी सँ
सोने क थाली मे जेओना परोसल
जेंउँ पिया भोजना जेवाउँ जल्दी सँ
दिल अति व्याकुल भेल गरमी सँ
लवंगा मे चुनि-चुनि बिड़िया लगएलौं
चाभु पिया चभाउ जल्दी सँ
दिल अति व्याकुल भेल गरमी सँ
फुलवा क डाली सँ सेजिआ डँसयलौं
सोउ पिया सेजिया सुलाउ जल्दी सँ

मेरा दिल गर्मी से व्याकुल हो गया। ओ प्रियतम, सोने के घड़े में गंगा का जल है। पी लो, और मुझे भी पिलाओ।

सोने की थाली में भोजन परोसे है। ओ प्रीतम, खाओ। और मुझे भी खिलाओ।

लौंगों से सजा-सजा कर पान की गिलौरियाँ लगाईं। ओ प्रीतम, चाभो और मुझे भी चभाओ।

ओ प्रीतम, फूलों की डाली से सेज सँवारी है। सोओ, और मुझे भी सुलाओ।

मेरा दिल गर्मी से व्याकुल हो गया।

(९)

अहाँ क नजर दुनु छँहिया
वलमु दुपहरिया गँवा लिउ हे
चार महीना पिया जाड़ा रहइअ
थर-थर काँपे करेजा
वलमु दुपहरिया गँवा लिउ हे
चार महीना पिया गरमी रहइय
ठोपे-ठोपे चुए पसीना
वलमु तनि वेनिया डोला दिउ हे
चार महीना पिया वरसा रहइअ
ठोपे-ठोपे चुए मन्दिरवा
वलमु तनि वगला छवा दिउ हे

ओ प्रीतम, जरा मैं तुम्हारी दोनों आँखो की शीतल छाँह में चिलचिलाती हुई दोपहरी तो बिता लूँ ?

ओ प्रीतम, चार महीने तो कड़ाके का जाड़ा पड़ता है और मेरा कलेजा थर-थर काँपता है। इसलिए तुम्हारी दोनो आँखों की शीतल छाँह में जरा दोपहरी तो विता लूँ।

ओ प्रीतम, चार महीने तो भीषण गर्मी पड़ती है और मेरे शरीर से बूँद-बूँद पसीना टपकता है। जरा पंखा तो झल दो। ओ प्रीतम, तुम्हारे युगल नयनों की कोमल छाँह में जरा दोपहरी तो विता लूँ।

चार महीने तो पावस-ऋतु रहती है और मेरी यह घास-फूस की झोपड़ी टप-टप चूने लगती है। ओ प्रीतम, एक बँगला तो वनवा दो। ओ प्रीतम, तुम्हारी दोनो नजरों की शीतल छाँह में जरा दोपहरी तो विता लूँ।

(१०)

पूर्व में पौ फटती है। तालाव में कमलिनी खिलती है। चिड़ियाँ धीरे-धीरे खुशी का सन्देश सुनाती है। निम्नलिखित गीत में एक तरुणी **अपने प्रीतम**

से, जो अभी गाढी निद्रा में खर्राटे ले रहा है, पर्दे की जटिलता और लोक-लाज के कारण शयनागार से उठ जाने का अनुरोध कर रही है—

भोर भेल ह पिया भिनुसरवा भेल हे
पिया उठु न पलंगिया अब कोइलिया बोलै न
उठवे करब गे धर्न। उठवे करब हे
देही न मुरेठवा हम कलकतवा जयबइ हे
कलकतवा जयब हे पिया कलकतवा जयब हे
हम बाबा के बुलबाइए नइहरवा जयबइ हे
नहिहरवा जइब गे धनी नहिहरवा जइब हे
जेतना लागल अयह रुपइआ तेतना धइए देहि न
धइए जबओ हे पिया धराइए जबओ हे
जेहन अयलो बाबा घरसँ तेहन बनाए देहु हे
बनाए देबौ गे धनी बनाए देवौ हे
हम अंगूर के सरबतवा पिलाए देवौं हे
हम मोतीचूर के लडुआ खिलाए देवौं हे
नहिए बनबइ हे पिया नहिए बनबइ हे
जेहन अयवौं बाबा घर सँ तेहन नहिय बनवौं हे

कालिमा फट गई। उजेला छा गया। कोयल कूकने लगी। ओ प्रीतम, अब पलंग छोडो और जाओ।

प्रिये, मैं तो जाऊँगा ही, पर पहले मुरेठा तो ला दो। मैं कलकत्ते जाऊँगा।

उसकी प्रियतमा कहती है—ओ प्रीतम, यदि तुम मेरी बातों से नाराज होकर कलकत्ते जाओगे तो जाओ। पर मैं भी अपने पिता को बुला कर नैहर चली जाऊँगी।

पति ने जवाब दिया—प्रिये, यदि तुम नैहर जाती हो तो जाओ। पर तुम्हारी शादी में मेरे जितने रुपये लगे है, सब रख दो।

पत्नी कहती है—मेरे प्रीतम, मैं तो वे रुपये रख जाऊँगी, अथवा रखवा दूँगी; पर मैं यहाँ जैसी अपने पिता के घर से आई, तुम भी ठीक वैसी ही वना दो।

पति जवाव देता है—प्रियतमे, मैं तुम्हें मोतीचूर की मिठाई खिला कर और अंगूर का शरवत पिला कर ठीक वैसी वना दूँगा। उसी प्रकार की वना दूँगा। पर तुम्हारी शादी में मेरे जितने रुपये लगे हैं, सव रख दो।

उसकी प्रियतमा कहती है—ओ प्रीतम, मैं वैसी कभी नहीं वनूँगी। कभी नहीं वनूँगी। मैं यहाँ जैसी अपने पिता के घर से आई फिर वैसी कभी नहीं वन सकूँगी।

(११)

एक ओरि विके राम दही-चूरा चीनिया
त एक ओरि हे राम
विके सोने क सिकरिया
त एक ओरि हे राम
अपना महलिया से निकलल सुन्दरिया
त करु सोनरा गाम
करु सिकरी के मोलवा
त करु सोनरा गाम
तोरा मे न होतओ सुन्दरि
सिकरी के मोलवा
त भेज दिअउन हे सुन्दरि
अपन ससुर जी के
हमरो ससुर जी सोनरा
राजा के नोकरिया
त हुनि कि जनता हे सोनरा
सिकरी के मोलवा

तोरा से न होतओ सुन्दरि
सिकरी के मोलवा
त भेज दिअउन हे सुन्दरि
अपन देवरवा
हमरो देवरवा सोनरा
पढल पडितवा
त हुन कि जनता हे सोनरा
सिकरी के मोलवा
तोरा से न होतओ सुन्दरि
सिकरी के मोलवा
त भेज दिअउन हे सुन्दरि
अपन वलमु जी के
हमरो वलमु जी सोनरा
लरिका अबोधवा
त हुनि कि जनता हे सोनरा
सिकरी के मोलवा
करु सिकरी के मोलवा
त करु सोनरा राम
त रोअत हयत हे सोनरा
गोदि के बलकवा
काँचे तोर वयसवा सुन्दरि
काँचे तोर वलमुआ
त कहाँ पयलौ हे सुन्दरि
गोदि में बलकवा
हमरो ही बाबू भइया
वर निरबुधिया

त भुलि गेलन्हि हे सोनरा
लरिका के सुरतिया
त दइवे देलन्हि हे सोनरा
गोदि मे वलकवा

एक ओर दही-चूरा और चीनी विक रही है, और एक ओर सोने की सिकडी।

कोई सुन्दरी अपने महल से निकल कर सोने की दूकान पर जाती है—ओ सोनार, सिकडी की मोल-तोल करो।

हे सुन्दरि, तुझसे सिकड़ी की मोल-तोल नहीं होगी। तुम इस मामले में नादान हो। जाओ अपने श्वसुर को भेज दो।

रे सोनार, मेरे श्वसुर तो राजा के नौकर है। वह सिकडी की मोल-तोल क्या जानेंगे?

हे सुन्दरि, तुझसे सिकडी की मोल-तोल नहीं होगी। तुम इस मामले में गंवार हो। जाओ अपने देवर को भेज दो।

रे सोनार, मेरे देवर तो पडित है। वह सिकडी की क़ीमत नहीं जानते।

हे सुन्दरि, तुझसे सिकडी की मोल-तोल नहीं होगी। तुम इस मामले में गंवार हो। जाओ अपने वालम को भेज दो।

रे सोनार, मेरे वालम तो निपट अवोघ है। वह सिकडी की कीमत कैसे आंक सकेंगे?

रे सोनार, सिकडी की मोल-तोल झटपट खतम करो। मेरी गोद का नादान शिशु रोता होगा।

हे सुन्दरि, तुम्हारी वयस कच्ची है। तुम्हारे वालम की उम्र भी कच्ची है। फिर तुम्हारी गोद में वच्चा कहां से टपक पडा?

रे सोनार, मेरे वावू और भाई वडे निर्वुद्धि है। उनने दूल्हा के रूप पर लट्टू होकर वगैर उसकी उम्र का खयाल किये हो—मेरा व्याह कर दिया। और यह वच्चा तो ईश्वर की विशेप कृपा का फल है।

(१२)

कहमा लगएलौं मे जुही-चमेली
कहमा लगएलौं अनार हे
नारियर के गछिया
दुअरे लगएलौं मे जुही-चमेली
अगने लगएलौं अनार हे
नारियर के गछिया
कय फूल फूलै जुही-चमेली
कय फूल फूलै अनार हे
नारियर के गछिया
दस फूल फूलै जुही-चमेली
दुइ फूल फूलै अनार हे
नारियर के गछिया
केहि सखि सुघलन जुही-चमेली
केहि सखि चिखलन्हि अनार हे
नारियर के गछिया
देवरा छहेला सुघे जुही-चमेली
सँइया रगीला अनार हे
नारियर के गछिया

हे सखी, तुमने कहाँ जूही-चमेली लगायी, कहाँ अनार और कहाँ नारियल लगाये?

हे सखी, दरवाजे पर मैंने जूही-चमेली लगाई, और आँगन में अनार तथा नारियल लगाये।

हे सखी, जूही-चमेली में कितने फूल खिले? और अनार तथा नारियल में कितने फल आये?

हे सखी, जूही-चमेली में दश फूल खिले, और अनार तथा नारियल में दो फल आये।

हे सखी, किसने तुम्हारी जूही-चमेली की खुशबू ली, और किसने अनार तथा नारियल चखा?

हे सखी, मेरे मौजी देवर ने जूही-चमेली की खुशबू ली, और मेरे रंगीले साजन ने अनार तथा नारियल चखा।

(१३)

दुइ चारि सखि मिल साँवरि गोरिया
कुसुम लोढ़ै न
चललि खेतवा के अरिया
कुसुम लोढ़ै न
मगवा में ईंगुर सोभै
ताहि पर चोटिया
त पोरिया-पोरिया न
सोभै अंगूठी मुँदरिया
त पोरिया-पोरिया न
हाथ में लेल फूल के चंगेरिया
त रहिया चलइत न
मारै तिरछि नजरिया
त रहिया चलइत न
कुंजन करै झकझोरिया
रसिक सग न

दो-चार सखियाँ मिल कर जिनमें कोई साँवरी है, कोई गोरी—फूल के खेत में फूल लोढ़ने निकलीं।

उनके माथे पर ईंगुर-बिन्दी शोभा देती है। उसके ऊपर काली चोटी बल खा रही है। उनकी पतली नाजुक उंगलियों में अंगूठी शोभा देती है। उनके हाथ में फूल की डलिया है, और वे राह चलती हुई अपनी आँखों से तीर

बरसा रही हैं, और कुंजो के झुरमुट में अपने प्रेमियो के साथ अठखेलियाँ करती हैं।

(१४)

नेरा वेलो की जाति वहार
मलिनिया वाग में
केहि लगावै वेली-चमेली
केहि लगावै अनार—मलिनिया वाग मे
देवरा लगावै वेली-चमेली
सँइया लगावै अनार
कइसन लागै वेली-चमेली
कइसन लागै अनार
महमह लागै वेली-चमेली
वड मीठ लागै अनार—मलिनिया वाग में

हे मालिन, तुम्हारी बाडी में बेलो की जाति के फूलो की बहार है।

हे मालिन, तुम्हारी बाडी में कौन वेली-चमेली लगाता है? कौन अनार?

मेरा देवर मेरी बाडी में बेली-चमेली लगाता है, और प्रियतम अनार।

बेली-चमेली कैसी होती है? अनार कैसा लगता है?

बेली-चमेली खुशबूदार होती है। अनार मीठा लगता है।

हे मालिन, तुम्हारी बाडी में बेलों की जाति के फूलो की बहार है।

(१५)

हमरो बलमु जी के लामि-लामि केशिया
घुँघुर शोभय न
माथे कालि रे जुलुफवा
घुघुर शोभय न
हमरो बलमु जी के कालि-कालि अँखिया
गजव करय न

मारय तिरछी नजरिया
गजव करय न
हमरो वलमु जी के सांवरी सुरतिया
तिलक डारय न
लाले माथे रे चननिया
तिलक शोभय न

हमारे साजन के लम्बे घुंघराले वाल हैं जो उनकी कान्ति को चार चांद लगाते हैं।

उनके माथे पर काले-काले अलकें हैं जो वडे भले लगते हैं।

हमारे साजन की काली-काली आँखें हैं जो सितम ढाती हैं। उनकी घायल करनेवाली तिरछी आँखें सितम ढाती हैं।

हमारे चन्दन का लेप किये हुए साजन सांवले वर्ण के हैं। उनके माथे पर लाल चन्दन भला लगता है।

(१६)

कोन फूल फूलै आधी-आधी रतिया
कोन फूल फूलै भिनुसार मधुवन में
वेली फूल फूलै आधी-आधी रतिया
चम्पा फूल फूलै भिनुसार मधुवन में
घर पहुअग्वा लोहरवा भइया हित वसु
लालि पलग विनि देहु मधुवन में
फुलवा में लोढि-लोढि सेजिया डसैली
राजा वेटा खेलइन शिकार मधुवन मे
हटि सुतु हटि वइमु सासुजी के वेटवा
घामे चोलिया हयत मलिन मधुवन मे
होय दिअउ होय दिअउ सासुजी के वेटिया
धोवी घर देवइ धोआय मधुवन में

धोविया के वेटा पिआ हे वरा रगरसिया
चोलिया मसोरि रस लेत मवुवन में

आधी रात को मधुवन में कौन फूल खिलता है ? और प्रातःकाल कौन फूल खिलता है ?

आधी रात को मधुवन में वेली खिलती है। और प्रातःकाल चम्पा खिलता है।

हे मेरे घर के पिछवाडे वसे हुए लोहार, तुम मेरा हितू हो। इस मधुवन में तुम मेरे लिए एक लाल पलग वना दो।

जव पलग वन कर तैयार हुआ तो फूल चुन-चुन कर मैंने उसे सजाया। राजा का वेटा—मेरा साजन मधुवन में शिकार खेलने आया है।

हे मेरे साजन, तुम मुझसे हट कर सोओ। हट कर वैठो। तुम्हारे शरीर के पसीने से मेरी चोली मैली हो गयी।

हे मेरी सास जी की वेटी, चोली मैली होने दो। इस मधुवन में धोवी रहता है। वह तुम्हारी चोली साफ कर देगा।

हे साजन, धोवी का वेटा वडा रगीला है। वह इस मधुवन में मेरी चोली मसल कर रस चूस लेगा।

(१७)

नइहरा मे सुनइत रहलि पिआ छइ लरिकवा
त दिनमा चारि न
पिया के नइहर मे वोलयवौं
त दिनमा चारि न
वेचवइ मे गोल वरदा किनवइ धेनु गइया
त दुधवा पिलाय न
पिया के करवौं जवनमा
त दुधवा पिलाय न
पोसिय पालि पिया के कयलौं जवनमा
त भोग क दिनमा न

पिया भागल जाय परदेशवा
त भोग क दिनमा न
बारह वरिस पर पिया मोरा अयलन्हि
लव जमुनिया पेड तर न
पिया धुनिया रमओलन्हि
लव जमुनिया पेड तर न

नैहर में सुनती हूँ कि मेरे प्रियतम नादान हैं। उनकी उम्र बहुत कच्ची है।

इच्छा होती है कि उन्हें दो-चार दिनों के भीतर बुला लूं।

उन्हें दूध पिलाने के लिए लाल बैल बेच कर एक गाय खरीदूंगी, और दूध पिला कर उन्हें जवान बनाऊँगी।

जब मैंने उन्हें दूध पिला कर जवान बनाया, तब वह ऐन मौके पर प्रवासी हो गये।

बारह वर्षो के बाद वह लौटे और नये जामुन के गाछ के नीचे उनने धूनी रमायी।

(१८)

जेवना जेमइहो बलमु
हम गोदयवों गोदना
गोरि-गोरि बँहिया सबुज रंग चुडिया
प्यारे झलकय मोर कलइया
गोदयवों गोदना
पनिया पिअइहो बलमु गोदयवों गोदना

हे साजन, मुझे गोदना गुदा दो। मैं तुम्हें मीठे पकवान खिलाऊँगी।

हे प्रियतम, मेरी गोरी-गोरी बाँह है। उस पर सब्ज रंग की चूड़ी एक अजीब रंग ला रही है।

हे साजन, मुझे गोदना गुदा दो। मैं तुम्हें जल पिलाऊँगी।

खेलव हरि झूमरी
जव वरिअतिया अएलइ गोंयरवा
मैना ननदो के उठल वेदन
हे खेलव हरि झूमरी
जव वरिअतिया दुअरिया पर अएलइ
हँसइन कहरिया हँसइन वजनिया
चार गोर कोना ले जाउ
चुपे रहु वजनिया चुपे रहु कहरिया
चार गोर भले विधि जयतइ
हे खेलव हरि झूमरी
कनइन मइया हे कनइन वहिनिया
कहमा से लयले वेटा होरिला
चुपे रहु मइया हे चुपे रहु वहिनि
एक रात गेलि ससुररिया

सास के आँगन में पान का पेड़ है।

पान की तरह पतली मैना ननद के पैर भारी हो गये।

हे मचिया पर वैठी हुई सास, मैना ननद के ससुराल जाने की तिथि नियत कर दो। उसके पैर भारी हो गये।

हे मेरी छोटी पतोहू, मैं तुम्हारे भाई को खाऊँ, वाप को खाऊँ। मेरी वेटी मैना अभी कुँआरी है। जाने कैसे उसके पैर भारी हो गये?

मैना की भावज ने अपने श्वसुर से चुंगली खाई—

हे दरवाजे पर वैठे हुए मेरे ससुर, मैना ननद के पैर भारी हो गए।

जव वरात गाँव के हल्के में आई तव मैना ननद प्रसव-पीड़ा से कराहने लगी।

जव वरात दरवाजे पर आई तव वजनिये हँसने लगे। कहरियें खिल्ली उड़ाने लगे।

दो पैर से चार पैर हो गये। ओ राम, चार पैर को डोली में बिठा कर हम कैसे चलेंगे?

हे बजनिये, चुप रहो। हे कहरिये, चुप रहो। चार पैर डोली में बैठ कर बडी सरल रीति से जायेंगे।

माँ रो रही है। बहन आँसू बहा रही है। हे बेटा, तुम्हारी बहू के पेट में यह बच्चा कहाँ से कूद पड़ा?

हे माँ, चुप रहो। हे बहन, आँसू मत बहाओ। विवाह की बात पक्की हो जाने पर मैं एक दिन ससुराल गया था, और तभी मेरी बहू के पैर भारी हो गये थे।

(२२)

कओन रग मूँगिया कओन रग मोतिया
कओन रगे
सिया दुलहिन के दूल्हा कओन रँगे
लाल रग मूँगिया सबूज रग मोतिया
सबूज रगे न
सिया दुलहिन के दूल्हा साँवरे रँगे
टूटि जयतइ मूँगिया फूटिए जयतइ मोतिया
बिछुडि जयतइ
सिया दुलहिन के दूल्हा बिछुडि जयतइ
बिछि लेबइ मूँगिया बटोरि लेबइ मोतिया
मनाए लेबइ
सिया दुलहिन के दूल्हा मनाए लेबइ
कहाँ शोभे मूँगिया कहाँ शोभे मोतिया
कहाँ शोभे
सिया दुलहिन के दूल्हा कहाँ शोभे
गले शोभे मूँगिया मुकुट शोभे मोतिया

पलग शोभे
सिया दुलहिन के दूल्हा पलग शोभे

हे सखी, किस रग का मूंगा है? किस रंग का मोती? और दुलहिन सीता का दूल्हा किस रंग का है?

हे सखी, लाल रग का मूंगा है। सब्ज रंग का मोती। और दुलहिन सीता का दूल्हा सांवले रग का है।

हे सखी, मूंगा टूट जायेंगे, मोती फूट जायेंगे, और सीता दुलहिन का दूल्हा बिछुड जायेंगे।

हे सखी, मूंगा बीन लूंगी, मोती बटोर लूंगी और सीता दुलहिन के दूल्हे को मना लूंगी।

हे सखी, कहां मूंगा शोभित होता है? कहां मोती? और दुलहिन सीता का दूल्हा कहां शोभा पाता है?

हे सखी, गले में मूंगा शोभित होता है। मुकुट में मोती। और दुलहिन सीता का दूल्हा पलग पर शोभा पाता है।

(२३)

बारह बरिस के हमरो उमिरवा
बबा कएलन हे
भइया कएलन हे
सखि मोरा गवनमा भइया कएलन हे
केहि जएतइ हाजीपुर केहि जयतइ पटना
से केहि जयतइ हे
शहरवाले रमुनवा
से केहि जएतइ हे
बबा जयता हाजीपुर भइया जयता पटना
से सइयाँ जयता हे
शहरवाले रमुनमा
से सइयाँ जयता हे

केहि जयता गरिया स केहि जयता जोरिया
मे केहि जयता हे
फिटिन फाटन सवारी
से केहि जयता हे

ववा जयता गरिया से भइया जयता जोरिया
से सइयें जयता हे
फिटिन फाटन सवारी
से सइयें जयता हे

केहि लयता वाजुवन्द केहि लयता चुरिया
से केहि लयता हे
रग वेंदुल टिकुलिया
से केहि लयता हे
नव जाली फुदेनमा
से केहि लयता हे

ववा लयता वाजुवन्द भइया लयता चुरिया
से सइयाँ लयता हे
रग वेदुल टिकुलिया
से सइया लयता हे
नव जाली फुदेनमा
से सइयाँ लयता हे

कहाँ शोभे वाजुवन्द कहा शोभे चुरिया
मे कहाँ शोभे हे
रग वेदुल टिकुलिया
से कहाँ शोभे हे
नव जाली फुदेनमा
से कहाँ शोभे हे

बाँह शोभे बाजुबन्द पहुँचि शोभे चुरिया
लिलार शोभे हे
रग बेंदुल टिकुलिया
लिलार शोभे हे
नव जाली फुदेनमा
त बाले शोभे हे

बारह वर्ष की मेरी उम्र है। हे सखी, इतनी थोड़ी उम्र में ही मेरे बाबा और भाई ने मेरा द्विरागमन कर दिया।

कौन हाजीपुर जायगा? कौन पटना? और कौन रंगून जायगा?

बाबा हाजीपुर जायेंगे। भाई पटना, और मेरे बालम रंगून जायेंगे।

कौन बैलगाडी से जायेंगे? कौन जोडी से? और कौन फिटन से जायेंगे?

बाबा बैलगाडी से जायेंगे। भाई जोड़ी से, और मेरे बालम फिटन से जायेंगे।

कौन बाजूबन्द लायेंगे? कौन चूडी? और कौन बिंदुली, रंग-रंग की टिकली तथा जालीदार फुंदने लायेंगे?

बाबा बाजूबन्द लायेंगे। भाई चूडी, और मेरे बालम बिंदुली, रंग-रंग की टिकली तथा जालीदार फुंदने लायेंगे।

कहाँ बाजूबन्द शोभित होता है? कहाँ चूडी? और कहाँ बिंदुली, रग-रग की टिकली तथा जालीदार फुंदने शोभा पाते है?

बाँह में बाजूबन्द शोभा पाता है। कलाई में चूडी, सिर में बिंदुली, रग-रग की टिकली और चोटी में जालीदार फुंदने शोभित होते है।

(२४)

उत्तर दक्खिन सें अयलइ नटिनिया गे जान
जान वइसि गेलइ चनना दिरिछिया गे जान
झिहिरि झिहिरि वहय शीतल बतसिया गे जान
जान घर सें वहार भेली नदरी पतोहआ गे जान

निहुरि-निहुरि झारे लामी केशिया गे जान
जान पड़ि गेल नटिनि मुख दिठिया गे जान
मचिया वइसल सासु वरइतिन गे जान
जान दिअ सास कोसल कउरिया गे जान
हर-फार जोति अयला प्रभु वइसल गे जान
जान वइसि गेल देहरि झमाय गे जान
सवके तिरिअवा अमा अगना गे जान
जान हमर तिरिया कतय चलि गेली गे जान
तोहर तिरिया गोदना विरोगल गे जान
जान चलि गेल नटवा सिरिकिया गे जान
पीमु अम्मा झिलमिल सतुआ गे जान
जान हम जायव धनिक उदेशवा गे जान
एक कोस गेलो दोसर कोस गे जान
जान तेसरे में नटवा सिरिकिया गे जान
कतय गेली किय भेली नटिनि गे जान
जान सुंदरी जोगे गोदना गोदह गे जान
गोदना गोदउनि भइया किय देव गे जान
जान गोदना गोदउनि छोटि सरहज गे जान

उत्तर-दक्खिन से एक नटिन आई, और चंदन के गाछ के नीचे बैठ गई। झिहिर-झिहिर हवा वहने लगी। इतने में घर से निकल कर एक सुंदरी बाहर आयी, और निहुर कर अपने लम्बे केश झाड़ने लगी। सहसा उसकी नजर नटिनी पर पड़ी।

हे मचिया पर बैठी हुई मनस्विनी सास, गोदना गुदाने के लिए कुछ पैसे दो।

सास ने कहा—हे सुंदरी, मैं तुम्हारे भाई और बाप को खाऊँ। खजाने मैंने कहां पाये ?

हल जोत कर सुंदरी का थका हुआ पति घर आया और देहली पर झमा कर बैठ गया।

हे माँ, सब की वहू आँगन में है। मेरी वहू कहाँ चली गयी? माँ ने कहा—हे बेटा, तुम्हारी वहू गोदना गुदाने नट की सिरकी में गयी है। बेटे ने कहा—हे माँ, वारीक सत्तू पीस कर दो। मैं अपनी वहू की खोज में परदेश जाऊँगा।

वह एक कोस गया। दो कोस गया, और तीसरे कोस में नट की सिरकी में जा पहुँचा। हे नटिन, कहाँ गयी? क्या हुई? मेरी वहू के पसंद लायक गोदना गोद दो।

नटिन ने कहा—हे भाई, तुम गोदना गुद देने के पुरस्कार में क्या दोगे?

सुंदरी के पति ने कहा—री नटिन, मैं पुरस्कार में तुम्हें अपनी छोटी सलहज दे दूँगा।

तिरहुति

'झूमर' और 'सोहर' को यदि हम ग्राम-साहित्य-निर्झरिणी का मधुर कलकल नाद कहें, तो मिथिला के 'तिरहुति' नामक गीत को फागुन का अभिसार कहना पड़ेगा। स्वाभाविकता, सरलता, प्रेमपरता का सामञ्जस्य और उच्च भावो का स्पष्टीकरण—ये 'तिरहुति' की विशेपताएँ हैं। जो साधारणतः नहीं दीख पड़ता, अदर्शनीय और अन्य के अनुमान में भी आने वाला नही है उसीको व्यक्त करना 'तिरहुति' के कुशल कलाकारो का काम है। इसकी नव विकसित सलज्ज-कातर यौवन-शोभा के आगे सारंगी के सगीत और छलकती हुई शीराजी सुवर्ण-मदिरा के मादक उफान भी फीके पड जाते हैं। इसकी रचना-पद्धति मुक्तक काव्य की तरह भावों की उन्मुक्त पृष्ठभूमि पर मर्यादित है। जिस तरह महाकवि सूर ने अपने वेदना-व्यञ्जक गीतो में विरहाकुल व्रजागनाओं की मानसिक परिस्थिति का अंकन कर अपनी सफल कला का परिचय दिया है, उसी तरह 'तिरहुति' के सफल कला-कोविदो ने भावो की सीम-वदन-रजतवदना नाजनियों के मानसिक चढाव-उतराव का चित्रण कर ब्रह्माण्ड में प्रतिक्षण गूंजनेवाले प्राकृतिक विचारो को ही व्यक्त किया है। इसमें विश्व-पिण्डो से सृजित तुच्छ तिनके भी इस तरह नैसर्गिक मनोभावो की रचना करते है कि वे कैमरे के लेन्स-द्वारा भी व्यक्त नहीं हो सकते।

मृगनाभि में अन्तर्हित कस्तूरी के सुगन्ध की तरह सुवासित इस मनोरम गीत-शैली के कुछ नमूने देखिये—

(१)

मोहि तेजि पिय मोर गेलाह विदेश
कवन विधि बिनत सजि वारि वयस

नयन सरोवर काजर नीर
ढरकि खमल मखि धनिक शरीर
सेज भेल परिमल फूल लेल वास
कओन देश पिय मोर पडल उपास

मेरे सजन मेरा परित्याग कर प्रवासी हो गये। हे सखी, मेरी यह जवानी कैसे कटेगी ?

हाय! मेरे ये नयन सरोवर हो गये हैं, और काजल जल (आंसू) बन गया है।

हे सखी, ये आंसू (काजल) प्रियतम के विरह में (मेरे नयन-सरोवर से) ढर-ढर गिर रहे हैं। (यहां तक कि) मेरी सेज खुशबू बन कर उड गई है, और फूलों में जा रमी है।

हाय! मेरे प्रियतम किस देश में भूखे रम रहे हैं ?

गीत का उपर्युक्त स्वरूप ग्रामीण है। यही गीत 'विद्यापति' के नाम से किञ्चित परिवर्त्तन के साथ निम्न-रूप में प्रचलित है—

मोहि तेजि पिय गेलाह विदेश
कोने परि खेपव वारि वयस
नैन सरोवर काजर नीर
ढरकि खसल पहुँ धनिक शरीर
मेज भेल परिमल फूल लेल वासे
कोन देश पिय पडल उपासे
भनहि 'विद्यापति' सुनु ब्रजनारि
धडरज धय रहु मिलत मुरारि

(२)

प्रथम एकादश दय पहुँ गेल
से हो रे वितल कतेक दिन भेल

ऋतु अवसान वयस मोर गेल
तैं ओ नहि पहुँ मोर दरशन देल
चाँद किरन तन सहलो ने जाय
चानन शीतल मोहि ने मोहाय
आव ने धरम सखि वाँचत मोर
दिन-दिन मदन विपम सर जोर

महीने की प्रथम एकादशी तिथि को आने का वायदा कर मेरे प्रियतम परदेश चले गए; लेकिन वह निर्धारित तिथि गुज़र गई और उसे कितने दिन बीत गये! (वसन्त) ऋतु का अन्त हो गया, और मेरी युवावस्था भी बीत गई। हाय! तो भी मेरे प्रियतम ने दर्शन नहीं दिये।

मेरे इस (नाजुक) शरीर से अब चन्द्रमा की शीतल किरणें बर्दाश्त नहीं होती और चन्दन की शीतलता भी नहीं भाती।

हे सखि, (सच कहती हूँ) अब मेरा धर्म नहीं बचेगा, (क्योंकि) कामदेव प्रतिक्षण अपने तीखे तीरों से मुझे जख्मी कर रहा है।

उपर्युक्त गीत-शैलियों से स्पष्ट है कि 'तिरहुति' छै-छै और आठ-आठ पक्तियों का तुकान्तक गीत है, जिसमे दो-दो पक्तियों के एक-एक चरण हैं और प्रत्येक चरण की पहली तथा दूसरी पक्तियों की अन्तिम तुक एक-सी है। लेकिन समय की रफ्तार के साथ-साथ इन पुरानी गीत-शैलियों की रूप-रेखा में भी युगान्तरकारी परिवर्त्तन हुआ। पहले जहाँ दो-दो पंक्तियो के एक-एक चरण होते थे, वहाँ धीरे-धीरे चार-चार पक्तियों के एक-एक चरण गीतिवद्ध होने लगे, और प्रत्येक चरण की पहली तथा दूसरी पक्तियो की तुक मिलाई जाने के अतिरिक्त दूसरी और चौथी पक्तियो की तुक भी मिलाई जाने लगी। इतना ही नहीं, 'तिरहुति' के चरणो के विकसित होने के साथ-साथ इसके आकार-प्रकार और डील-डौल का दायरा भी विस्तृत हुआ। निम्नलिखित गीत 'तिरहुति' की इस परिवर्त्तित और परिवर्द्धित शैली का एक सुरुचिपूर्ण नमूना है—

(३)

तिरहुति दण्डक छंद

पहिनि चुदरि चारु चन्दन
चकित चहुँ दिशि नयन खञ्जन
देखल द्वार कपाट लागल
हरि न जागल रे
कत कला कय कत जगाओल
कतहुँ किछु नहि शब्द पाओल
एहन कुरुप नीद मातल
जनि रसातल रे
मध्य एकसरि गेरि यामिनि
पलटि आयलि निरसि कामिनि
एहनि अवसरि जे न जागलि
थिक अभागल रे
भनथि कवि 'हरिनाथ' मन दय
मारति हाथ पछताति रहय-रहय
पाछा किदाँ नीद टूटल
पलक छूटल रे

एक नायिका चुँदरी पहन कर और शीतल चन्दन का लेप कर अपने खञ्जन सदृश नेत्रों को चारो ओर नचाती हुई (अपने प्रियतम के शयन-मन्दिर में) चली। उसने देखा कि उसके प्रियतम सोये हैं और शयन मन्दिर का प्रवेश-द्वार बन्द है।

उसने अनेक तदबीरें कीं और अपने प्रियतम को जगाने का प्रयत्न किया। लेकिन उसे अपने प्रियतम के जागने की आहट तक न मिली। कवि कहता है कि उस नायिका का बदकिस्मत प्रियतम नींद के नशे में इस प्रकार ग़र्क है कि जैसे वह भूलोक में नहीं, रसातल में हो।

अर्द्ध रात्रि बीत गई। नायिका निराश होकर लौट गई। हाय! इस अवसर पर जो नहीं जगा, वह अभागा ही है।

कवि 'हरिनाथ' कहते हैं कि जब हाथ से अवसर निकल जाने पर आँखें खुलेंगी ही, तो फिर हाथ मल-मल कर पछताने के सिवा और क्या होगा?

धीरे-धीरे 'तिरहुति' का भावुक-हृदय वसन्तकालीन गुलाब की भाँति और भी प्रस्फुटित हुआ। लाक्षणिकता के गुरुतम बन्धन शिथिल पड़ गए। हृदय की आकुल वेदना मधुर गीत बन कर उमड़ आई, कवि की भाव-व्यञ्जना को नवोन्मेषिनी बुद्धि मिली और अस्पष्टता के अवगुण्ठन में छुपा हुआ अन्तहीन शाश्वत सौन्दर्य्य शरच्चन्द्र की भाँति खिल उठा। उदाहरण-स्वरूप 'तिरहुति' की इस नव विकसित शैली के कुछ नमूने देखिए—

(४)

कमल नयन मनमोहन रे
कहि गेलाह अनेके
कतेक दिवस हम खेपब रे
सुनि वचनक टेके
जहँ-जहँ हरिक सिंहासन रे
आसन नेहि ठामे
तहाँ कते ब्रजनागरि रे
जय-जय हरिनामे
आँगन मोर लेखे त्रिभुवन रे
भेल दिवस अन्हारे
सेज लोटय कारि नागिन रे
सोना सह दुख-भारे
मलिन वसन तन भूषण रे
सिर फूजल केसे
नागरि पूछथि पथिक सँ रे
सह हरिक उदेसे

के पाती लै जायत रे
जहाँ बसे नन्दलाले
लोचन हमर विकल भेल रे
छाती देल शाले
'साहेबराम' रमाओल रे
सपना ससारे
फेरि नहि एहि जग जनमव रे
मानुष अवतारे

कमलनयन मनमोहन अनेक प्रकार की सान्त्वना दे कर चले गए।

उनके वचन पर निर्भर रह कर मैं अब और कितने दिन उनके पथ पर आँखें बिछाऊँ। जहाँ-जहाँ हरि का सिंहासन है, वहाँ-वहाँ मेरा आसन भी है। और वहाँ ही अनेक व्रजागनाएँ हरि का नाम ले-लेकर वास करती है।

मेरे लिए मेरा आँगन निर्जन वन है, और श्रीकृष्ण की अनुपस्थिति में मेरे लिए दिन का प्रकाश भी अन्धकार-सा प्रतीत होता है।

उनके विरह में मेरे बिखरे हुए कुन्तल-कलाप काली नागिन की तरह बल खा रहे है।

हाय! मैं इस दुख का भार किस प्रकार वहन करूँ? मेरे शरीर के वसन और भूषण मलिन हो चले और मेरे शिर के बाल भी अस्त-व्यस्त हो गए।

उस ओर से आये हुए पथिकों से सुन्दरी जिज्ञासा करती है कि कहो मेरे प्राणाधार श्रीकृष्ण कैसे है?

हाय! जहाँ नन्द-नन्दन रहते हैं, वहाँ उनके पास मेरा सन्देश कौन ले जाय? उन्हें देखने के लिए मेरी आँखें तरस रही हैं, और उनकी याद कलेजे में शूल पैदा करती हैं।

'साहेवराम' कवि कहते है कि यह ससार स्वप्नमय है। इस ससार में नरतन धारण कर फिर नहीं जन्म लूँगा।

(५)

सून भवन हरि गेलाह विदेशे
कापर खेपव वारि वयेसे
सर भेल चचल फूल भेल भार
नित दिन मन एतय रहय उदास
कहि गेला हरि आएव फेर
घुरि नहि तकलन्हि एकहुँ वेर
हुनकहु वचनक नहि विसवास
हमरहु जानि सखि कैल निरास
'वासुदेव' भन भनिता लगाय
हरि हरि कहिक दिवस गमाय

वियोगिनी नायिका कहती है—हाय! मेरा घर सूना है। मेरे सजन परदेश चले गये। मैं जवानी के ये दिन कैसे काटूं?

मेरे सिर की वेणी चंचल हो रही है। फूल भार प्रतीत होता है, और मेरा यह मन सदा उदास रहता है।

मेरे सजन ने वायदा किया था कि मैं परदेश से पुन. वापिस आ जाऊँगा; लेकिन आज तक उन्होंने मुड कर देखा भी नहीं।

हे सखी, अब उनके (झूठे) वचन का कौन विश्वास करे? शायद अबला जान कर उन्होंने मुझे भुला दिया। 'वासुदेव' कवि कहते हैं—हे नायिके, धीरज धरो और 'हरि-हरि' स्मरण करके दिन बिताओ।

(६)

चललि शयन-गृहि सुन्दरि रे
आनन्द-उर वृन्दा
शिर सँ ससरल घोघट रे
जनि ऊगल चन्दा
चलइत नूपुर किंकिनि रे
पिक कल अलसाने

दुर सँ हस शब्द करु रे
घर पिय जिव गाने
डरहु ने जानि चकवा-शिशु रे
उर कुच युग छाजे
पवन परम उर-आँचर रे
जनि अपटल वाजे
नाभि विवर सँ निकसलि रे
रोमावलि साँपे
मे मौतिनि वध कारन रे
आँचर रहु झाँपे

कोई (वृन्दा) नाम की सुन्दरी आनन्द-विह्वल हो अपने प्रियतम के शयन-मन्दिर में चली। उसके शिर का घूँघट खिसक गया और (बादलों से मुक्त) चन्द्रमा की तरह उसका मुख खिल उठा।

उसके चलने से नूपुर और किंकिणी के जो मधुर शब्द निकल रहे थे, वे (दूर से) ऐसे लगते थे, मानो हस बोल रहे हों।

उसकी मधुरता ने शयन-मन्दिर में सोये हुए उसके प्रियतम को मन्त्र-मुग्ध कर दिया, और कोयल की काकली भी बन्द हो गई।

कवि कहता है—अरे भाई, उस नायिका के हृदय-प्रदेश पर जो युगल उरोज सुशोभित हैं, उन्हें कहीं तुम भ्रम से चकवा-शिशु न समझ लेना। पवन उद्विग्न हो कर नायिका के आँचल को स्पर्श कर रहा है, मानो बाज नायिका के (चकवा-शिशु रूपी) उरोज पर आक्रमण कर रहा हो। और नायिका के नाभि-विवर से जो रोमावलि फूट निकली है, वह काली नागिन है, जो नायिका की सौतिन को डस लेने का कारण है। कवि कहता है—हे नायिके, तुम अपने नाभि-विवर को आँचल से ढके रहो (जिससे रोमावलि-रूपी नागिन किसी को डँसने न पाये)।

(७)

आयल कारी-कारी रे घन गरिजय वादल
थर-थर कांपय-कांपय रे सखि उर अव हारी
विसरल-विसरल सुधि सव रे मोहि तेजल मुरारी
लहरल-लहरल मोहि अव रे विरहा अगियारी
पहुँ मोर मखि कित छाजय रे मोहि करि के भिखारी
बांचत-बांचत प्राण नहि रे दुख भेल अव भारी

आसमान में काली-काली मेघावलियां उमड़ आईं, और वादल गरजने
गे। हे सखी, मेरा कलेजा थर-थर कांप रहा है, और मैं जीवन से निराश
। रही हूँ। हाय! मेरे निर्दय प्रियतम ने मेरा परित्याग कर दिया, और
री सुधि विसरा दी।

मेरे शरीर में विरह की आग जोरो में धधक रही है। हाय! मेरे
नयतम मुझे निस्सहायावस्था में छोड कर किस देश में छा रहे हैं? हे सखी,
ह दुख मेरे लिए असह्य है। हाय! अव मेरे प्राण नहीं रहेंगे।

(८)

पिया अति वालक मैं तरुणी
कोन तप चुकलहुं भेलहुं जनी
पिय लेल गोदी कय चललि वजार
हटिआक लोग पुछय के ई तोहार
देओर ने मोरा ने छोट भाय
पूर्व लिखल छल स्वामी हमार
कि वाट रे वटोहिया तोहि मोर भाय
हमरो समाच मइया दिह पहुँचाय
कहिहह ववा के किनय धेनु गाय
दुधवा पिआय पोसता लडिका जमाय

मेरे प्रियतम बालक है, और मै तरुणी हूँ। हाय ! मैने पूर्व में कौन ऐसा पाप किया, जिससे मुझे जवानी का यह अभिशाप मिला। एक दिन मैं अपने प्रियतम को गोद में ले कर बाज़ार गई। नादान बालक को गोद में देख कर बाज़ार के लोगों ने पूछा कि 'यह तुम्हारा कौन है ?' मैंने कहा—'यह न मेरे देवर है, और न छोटा भाई। यह मेरे पूर्व जन्म के स्वामी है।'

हे राह चलते हुए पथिक, तुम मेरे भाई हो। मेरा एक सन्देश लिये जाओ। तुम मेरे पिता से कहना कि वह एक दुधारू गाय खरीदें। और अपने नादान दामाद को पाल-पोसकर जवान बना दें।

(ε)

सादर शयन कदम-तरि हो पथ हेरथि राधा
कखन देखब हरि नयन-भरि हो मेटत सब बाधा
चानन बन भेल झाँझरि हो झाँझरि भेल नारी
एक हम झाँझरि हरि बिनु हो पीतम भेल त्यागी
सासु ननद घर ससुर ही हो भैसुर एहि ठामे
एक त गेल मनमोहन हो उसरन भेल ठामे
सुनितउँ हुनक गमनमंहि हो करितउँ परिचारे
यादव हमरो दय गेल हो भादव सन राते
'नन्दलाल' कवि गाओल हो धीरज धरू नारी
आइ आवत हरि गोकुल हो कुब्जा गढ त्यागी

कदम्ब की छाँह में कोमल शय्या पर राधा श्रीकृष्ण की प्रतीक्षा कर रही हैं। हाय ! मैं कब आँखें भर कर प्रिय श्रीकृष्ण को देखूँगी, और मेरे सारे दु:ख दूर हो जायेंगे।

चन्दन का वन सूख गया, और स्त्रियाँ भी ग़मगीन हो गईं। एक मैं भी हूँ जो श्रीकृष्ण के बिना सूख गई हूँ, और मेरे प्रियतम विरागी हो गये हैं।

घर में सास, ससुर, ननद और भँसुर सब मौजूद है। पर एक श्रीकृष्ण के अभाव में यह घर उदास मालूम होता है। यदि मैं उनकी यात्रा की बात

सुनती, तो उनकी टोह भी लेती। हाय! श्रीकृष्ण की अनुपस्थिति में मेरे सम्मुख भादों की-सी काली रात छायी है।

'नन्दलाल' कवि कहते हैं—हे नायिके, तुम धीरज धरो। कुब्जा का साथ छोड कर आज श्रीकृष्ण गोकुल अवश्य आयेंगे।

(१०)

कमलनयन मनमोहन हो वसु यमुना के तीरे
वंशी बजा मन हरलक हो चित्त रहै न धीरै
खन मोहन वृन्दावन हो खन वंशी बजावै
खन-खन रहै अहिर-संग हो खन मुरली लय धावै
जौं हम जनितौं एहन-सन हो तजि जयता गोपाले
अपन भवन वरू तजितहुँ हो सेवितहुँ नन्दलाले

कमलनयन मनमोहन यमुना के तट पर बसे हुए है। उन्होंने वंशी बजा कर मेरा मन मोह लिया है, और मैं अधीर हो रही हूँ।

कभी तो मोहन वृन्दावन में विहार करते है, कभी वंशी बजाते है, कभी गोपों के साथ बाल-क्रीडा करते है, और कभी वंशी ले कर दौड पडते है।

यदि मैं जानती कि वे ऐसे है और वे मेरा परित्याग कर देंगे तो मैं भले ही अपना घर छोड देती, किन्तु नन्द-नन्दन की सेवा अवश्य करती।

(११)

जखन चलल हरि मधुपुर हो सब सुरति बिसारी
कोना रहब गोकुल बिच हो बिन पुरुषक नारी
वन ज्यों डोलै वत मन हो जल बिच डोलै नेमार
हम बनि डोलौं मोहन बिनु हो जेहन पुरइनि पात
शून्य भवन लगै मन्दिर हो पलगो ने सोहाय
केहन करम विधि लिखलन्हि हो जाके ब्रजनार

जब प्यारे श्रीकृष्ण सब का विस्मरण कर मधुपुर चले गये तो हम बिना पुरुष की स्त्रियां गोकुल के बीच कैसे रहेंगी?

जिस तरह वायु के झोंकों से वन कांपता है, और जल के बीच सेवार कांपता है, उसी तरह मोहन के बिना हम स्त्रियाँ कमल के पत्ते के समान प्रकम्पित हो रही हैं। आज मोहन के बिना हमारा घर-आँगन सूना लगता है, और पलंग भी आनन्दमय नहीं मालूम होता।

ब्रज की नारियाँ विलाप कर रही हैं—हाय! विधाता ने हम लोगों का भाग्य कैसा खोटा बनाया?

(१२)

सादर शयन कदम तरि हो पथ हेरउँ मुरारी
हरि बिनु झाँझरि भेलहुँ हो सामर भेल भारी
फूजल केश के वान्हत हो के देत सम्हारी
नयन ही काजर दहायल हो जीवन भेल भारी
जाहू ऊधो मधुपुर हो हुनकहि परचारी
चन्द्रकला नहि जीवत हो वध लागत भारी

कदम्ब के नीचे कोमल शय्या पर आसीन हो श्रीकृष्ण का इन्तजार कर रही हूँ। हरि के बिना मैं खिन्न हो चली हूँ, और मेरा यौवन भार-सा प्रतीत होता है।

हाय! मेरे बिखरे हुए केश कौन सँवारेगा? मेरी आँखों का काजल भी बह गया, और मेरा जीवन जजाल हो रहा है।

हे ऊधो, आप श्रीकृष्ण की टोह में मधुपुर जायें। यदि वे नहीं आयेंगे तो मेरे चन्द्रमुख की कला जीवित नहीं रहेगी, और इसकी हत्या का पाप उन्हें ही भुगतना होगा।

(१३)

सुन्दरि चललिह महुँ घर ना
हँसि-हँसि सखि सब कर घर ना
जाइतहुँ लागु परम डर ना
जेना शशि काँप राहु डर ना

हार टुटिय छिडिआय गेल ना
भूषण वसन मलिन भेल ना
रोय-रोय कजरा दहाय गेल ना
अदकहि सिन्दुर मेटाय गेल ना
'भानुनाथ' कवि धीर धरु ना
दुख सहल सुख पाओल ना

कोई नायिका अपने प्रियतम के शयन-मन्दिर में चली। उसकी हम-जोलियाँ हँस-हँस कर (विनोदवश) उसका हाथ पकड़ रही हैं। जिस तरह राहु के डर से चन्द्रमा काँपता है, उसी तरह वह भयाक्रान्त नायिका अपने प्रियतम के पास जाने में काँपती है।

भय से उसके वस्त्राभरण मलिन हो गये हैं और उसके गले का हार टूट कर पृथिवी पर बिखर गया है। रोते-रोते उसकी आँखों का काजल और डर से उसकी सिन्दूर-बिन्दी बह गई है।

कवि 'भानुनाथ' कहते हैं—हे सुन्दरी, तुम धीरज धरो। दुःख के बाद ही सुख मिलता है।

(१४)

साजि चललि ब्रज वनिता रे कर घट सब धारे
यमुना-तट पथ निहारथि रे घट कटि पर डारे
मांझ भेटल वनवारी रे रोकल हहकारे
मांगथि दान यौवन-रस रे हठ ठानल बाटे
गोपिन देखि सकोचति रे मनहि-मन विचारे
'जीवनाथ' कवि गाओल रे दय दान तोहि सब जा रे

ब्रजांगनाएँ हाथों में गागर लिये सज-धज कर यमुना की ओर चलीं। जल से भरे हुए अपने-अपने अमृत-कलशों को कमर पर लिये वे यमुना-किनारे किसी का इन्तजार कर रही हैं। लौटते समय रास्ते में ही उन्हें श्रीकृष्ण मिल गये और उनकी राह रोक ली।

उन (कमर पर गागर लिये पनिहारिन) गोपियों से श्रीकृष्ण उनकी जीवनसचित यौवन-सुधा का दान मांग रहे हैं, और गोपियों के 'ना' करने पर ज़िद-पर-ज़िद कर रहे हैं। यह देख कर गोपियां मन-ही-मन चिन्तातुर और शर्मिन्दा हो रही हैं।

कवि 'जीवनाथ' कहते हैं—हे गोपियो, तुम श्रीकृष्ण को अपनी प्राणदा यौवन-सुधा का दान दो, और प्रसन्नतापूर्वक अपने-अपने घर जाओ।

(१५)

पटना जाए बेसाहब परिधन पहिराएब धनि हाथे
भूषण गुहल धिआ धरि आँचर पहिराएब धरि माथे
काशी सौं कगन धिआ आनल दछिन चीर मदरासे
हार मँगाएब नूपुर मणिमय कुमरि पुरत तुव आसे
चुप रहु चुप रहु हेम-पुतरि धिआ रहु गे घर अलसाए
दश दिन बितत बनवगै कामिनि प्रेमक सुजल नहाए
विमल चन्द्रमुख फूल फुलाएत लगनक बहत बतासे
मृदुल फूल-दल इत-उत डोलत पुलकि-पुलकि धिआ गाते

मैं पटना जाकर परिधान खरीदूंगा, और उसे अपनी पुत्री को समर्पित करूंगा, और किनारी तथा सलमे-सितारे की जड़ी हुई साड़ी से उसे सजाऊँगा।

हे पुत्री, काशी से कंकण लाया हूँ, और मदरास से छींट की साड़ी। मैं मणिमय नूपुर तथा हार मँगाऊँगा, और तुम्हारी आशा पूरी होगी।

हे स्वर्ण-प्रतिमा की-सी प्यारी पुत्री, चुप रह! चुप रह! प्रसन्न-चित्त से घर में रह। चन्द दिनों के बाद ही प्रेम के निर्मल जल में धुल-पोंछ कर तू नवोढा कामिनी बन जायेगी। लग्न-रूपी वायु के लगते ही तुम्हारा चन्द्रमा की तरह यह मुख फूल की तरह खिल जायेगा। और हे पुत्री, यौवन के आगमन से तुम्हारा प्रफुल्लित मुख-रूपी सुमन तुम्हारे शरीर-रूपी वृन्त पर पुलक-पुलक कर अठखेलियाँ करेगा।

(१६)

सुन्दर हे तो सुबुधि सेयानि
मरी पियासें पियावह पानि
के तो थिकाह कोन गाम केर
बिनु परिचय तो जोडह सिनेह
थिकहुँ पथिक सुनु सुबुधि सेयानि
धनिक विरह मों भरमि ममार
सुनि सुन्दरि देल पीढ़ी आनि
बैसु पथिक जन पिवि लिअ पानि
आवह वैसह पिव लैह पानि
जे तो खोजवह से देव आनि
एतहि रहह कतहु जनु जाह
जे तकवह से भेटतओ वेसाह
ससुर भैंसुर मोर गेलाह विदेश
स्वामी गेल छथि हुनिक उदेश
गामक पहरु से मोर हीत
निरखन पडोसिन सुतथि निर्चित
सासु मोर आन्हरि नयन नहिं सूझ
बालक ननदि वचन नहिं बूझ
भनहि 'रमापति' अपरुब नेह
जेहन विरह हो तेहन सिनेह

कोई पनिहारिन कुएँ पर जल भर रही है। रास्ते का प्यासा एक पथिक आता है, और उससे जल माँगता है—हे सयानी और बुद्धिमती सुन्दरी, मैं प्यास से मर रहा हूँ। मुझे जल पिलाओ। पनिहारिन ने पूछा—हे अनजान, तुम कौन हो? तुम्हारी जन्मभूमि कहाँ है? तुम बिना परिचय के बातों-बातों में ही मुझसे क्यों नेह जोड रहे हो?

पथिक ने उत्तर दिया—हे बुद्धिमती तरुणी, मै पथिक हूँ और प्रियतमा के विरह में दर-दर भटक रहा हूँ।

यह सुन कर उस सुन्दरी ने पीढी लाकर उसे बैठने को दी, और बोली—हे पथिक, बैठो। और यह स्निग्ध जल पी कर तृप्त हो लो। तुम्हें जिस चीज की दरकार हो, मै ला कर दूंगी। तुम यहाँ ही रहो। अन्यत्र कहीं नहीं जाओ। तुम जो ढूंढ़ोगे, खरीद कर ला दूंगी। मेरे ससुर और भैंसुर प्रवासी है, और मेरे प्रियतम भी उन्हीं की टोह में परदेश गये हैं। ग्राम का पहरेदार मेरा मित्र है। मेरी पडोसिन, जो कगालिन है, रात में बेफिक्र हो कर सोती है। मेरी सास अन्धी है, और उसकी आँखो के नूर ग़ायब है। मेरी ननद बालिका है, और अभी बोलना भी नहीं जानती।

कवि 'रमापति' कहते है—उस सुन्दरी नायिका का स्नेह कितना उज्ज्वल है। पथिक का जैसा विरह था, वैसो ही उसको स्नेहपात्रिका भी मिल गई।

(१७)

उठु-उठु सुन्दरी जाइछी विदेश
सपनहु रूप नहि मिलत उदेश
से सुनि सुन्दरि उठलि चेहाए
पहुँक वचन सुनि बैसलि झमाय
उठइत उठलि बैसलि मन मारि
विरहक मातलि खसलि हिय हारि
भनहि 'रमापति' सुनु व्रजनारि
धइरज धय रहु मिलत मुरारि

हे सुन्दरी, उठो। मै परदेश जा रहा हूँ। अब तुम्हें स्वप्न में भी मेरा दर्शन नहीं होगा। यह सुन कर नायिका विस्मित हो उठ बैठी, और अपने प्रियतम की भेद-भरी बातें सुन कर चिन्ता-मग्न हो गई। वह उठने को तो उठी, लेकिन भावी विपत्ति की आशका से फिर खिन्न हो कर बैठ गई। विरह की मतवाली वह नायिका मूर्च्छित हो कर पृथिवी पर गिर पडी। कवि 'रमापति'

कहते हैं—हे व्रजागने, तुम धीरज धरो। तुम्हें भगवान श्रीकृष्ण अवश्य मिलेंगे।

(१८)

सुनु-सुनु कोयल एहि ठां आउ
मधुमय षट्‌रस भोजन खाउ
करु गय काज हमर एहि राति
विनति करुअ तोहर कत भाँति
पाँखि मढाएब मोतिक रेख
अहँक बनाएब सुन्दर भेख
लय लिय लय लिय लिखलहुँ पाति
वितय चहय पिक आधी राति
काजर मसि नख में लिख देल
हृदयक कागद फारिय देल
पवन पाँखि लय लहु-लहु जाउ
मेघ चढल अहँ झटि दै आउ
कहब बुझाय सुनब पहुँ बात
कयि लय कैलहुँ कामिनि कान
ओ धनि मरत विरह विष खाय
तिन में पंसठि राति बिताय
सतत नयन सँ नीरक छोर
चलु-चलु मरइछ लिय गै थोर
जँ नहि जाएब आजुक राति
कामिनि देतिह जीवन साति

री कोयल, सुनो—यहां आओ। (प्रेम से) मधु में पगा हुआ भोजन खाओ। और, आज रात को मेरा एक काम कर आओ। मैं तुम्हारी कितनी आरजू-मिन्नत करूँ?

1856

मैं सोने से तुम्हारे पंख मढाऊँगी। जिससे सुन्दरियाँ—(तुम्हारे सौन्दर्य्य पर लट्टू होकर) तुमसे प्रेम करेंगी। मोतियों से अधर मढा कर तुम्हारा वेश सुन्दर बनाऊँगी—री कोयल!

यह लो मेरे प्रवासी साजन का पत्र, जो मैंने लिखा है। आधी रात बीता चाहती है,—हृदय का काग़ज़ फाड कर और आँखों के काजल की स्याही में नख की क़लम डुबो कर मैंने खत लिखा है। हवा के पंख पर चढ कर धीरे-धीरे उड! री कोयल! मेघ बरसा ही चाहता है, तू जल्द जा,—री कोयल!

मेरे प्रियतम से मेरा सन्देश समझा कर कहना, और कान दे कर उनकी बातें सुनना, पूछना—'तुमने क्यों अपनी प्रियतमा की सुधि भुला दी? ३६५ लम्बी-लम्बी रातें तुम्हारी इन्तज़ारी में काट कर तुम्हारी प्रियतमा विरह का ज़हर खा कर प्राण त्याग देगी। उसकी आँखो से अविरल अश्रुपात हो रहे हैं, (अजी ओ बेरहम!) चल, तुम्हारी प्रियतमा तडप रही है, उसको गोद में बिठा कर सान्त्वना दे। यदि आज की रात तुमने प्रस्थान नहीं किया तो तुम्हारी प्रिया नहीं रहेगी।'

(१६)

कि कहु सखि हम विरह विशेषे
अपनहु तनु धनि पाव कलेशे
अपनुक आनन आरसि हेरी
चानन भरम कोप कत वेरी
भरमहु निअ कर उर पर आनी
परसै तरस सरोरुह जानी
चिकुर-निकर निअ नयन निहारी
जलधर जाल जानि हिय हारी

प्रियतम प्रवासी है। नायिका अपने ही शरीर को देख कर—विरह में भ्रान्त होकर भयभीत हो रही है। दर्पण में अपना ही चेहरा देख कर नायिका उसे चन्द्र समझती और भय से प्रकम्पित हो रही है। वक्षस्थल पर भ्रम से अपने ही हाथ रख कर विरहिणी उसे कमल समझती और ललचा कर

बार-बार स्पर्श करती है। अपने ही केशपाश को देख कर काले बादल के भ्रम से उसका हृदय बैठ रहा है।

इस गीत का रचनाकाल सवा छै सौ वर्ष पुराना है। गीत मैथिली नाट्य-कला के उद्भावक कविवर 'उमापति' का है। उमापति मिथिला-नरेश हरिहरदेव के सभा-पण्डित थे। हरिहरदेव का राज्य-काल चौदहवीं सदी का प्रथम चतुर्थांश अर्थात् सन् १३०३ से १३२३ तक माना जाता है। उस समय मुहम्मद तुग़लक दिल्ली का बादशाह था।

यह स्थापना विख्यात मैथिली नाटक 'पारिजातहरण' की प्रस्तावना के आधार पर है।

(२०)

जखन चलल गोपीपति रे
गोकुल भेल सूनें
विलपनि नारि वधू व्रज रे
कयलन्हि हरि खूनें
घुरुमि-घुरुमि घन घहरय रे
हहरय मोर छाती
चमकत चपल चहुँ दिशि रे
कत लिखवों पाँती
चानन हृदय दगध कए रे
दुर्वह वनमाला
उछलि-उछलि मन्मय मोहि रे
मारय उर भाला
अनिल अनल मन लागत रे
जिव करे अभिघाते
कोकिल कुहुकि-कुहुकि कत रे
मारय मिठ घाते

कर सो ससरि-ससरि खसु रे
वलावलि झूमी
हरि हरि कहथि खसति महि रे
बाला घुमि घुमी
भन 'वंशीधर' विरह तजु रे
विरहिनि ब्रजनारी
मन जनु करिय व्याकुल रे
तोहि भेटत मुरारी

जब श्रीकृष्ण मधुपुर चले गये तो गोकुल सूना हो गया। व्रजांगनाएँ विलाप करने लगीं—हाय! श्रीकृष्ण ने हम लोगों की हत्या कर डाली।

बादल घुरुम-घुरुम कर—वृत्ताकार चक्कर काट कर घहर रहे हैं। छाती हहर रही है। बिजली चारो ओर चमक-चमक कर कौंध उठती है। शीतल चन्दन का लेप हृदय को जला रहा है, और वनमाला दुर्वह भार की तरह लगती है। मदन उछल-उछल कर कलेजे में बर्छी चुभोता है। शीतल वायु डहकती हुई अग्नि की तरह प्राणदाहक प्रतीत होती है। कोयल अपनी मीठी कूक से हृदय में शूल पैदा करती है। कलाई से चूड़ियाँ (वला + अवलि) ससर-ससर कर खिसक रही है।

इस प्रकार वह विरहाकुल तरुणी बार-बार श्रीकृष्ण के नाम का स्मरण कर मूर्च्छित हो-हो कर पृथिवी पर गिरती है।

कवि 'वंशीधर' कहते हैं—हे विरहिणी व्रजागने, इतना अधीर मत होओ। तुम्हें भगवान श्रीकृष्ण अवश्य मिलेंगे।

(२१)

जखन चलल हरि मधुपुर रे
व्रज भेल उदासे
विन यदुपति नहि जीअव रे
कर धूनव माथे

दृग चित वदन मलिन भेल रे
शिर फूजल केशे
नागरि नयन बरसि गेल रे
जनि जल असरेसे
प्रेम परस पवि छुटि गेल रे
पहुँ भय गेल चोरी
आव जिवन नहि जीअब रे
विष पीअब घोरी
'धनपति' मन धैरज धरु रे
तोहि भेंटत सोहागे
माधव मधुपुर आओत रे
पुनि जागत भागे

जव श्रीकृष्ण मधुपुर जाने लगे तव सारा ब्रज शोक-सागर में डूवने लगा। ब्रजांगनाएँ विलाप करने लगीं—हाय! श्रीकृष्ण की गैरहाजिरी में हम सव कैसे जियेंगी। सिर धुन-धुन कर पछतायेंगी।

ब्रजांगनाओं का चित्त उदास हो गया। उनके वदन कुम्हला गये। शिर के वाल खुल कर इधर-उधर विखर गये। उनकी आंखों से आंसू की झड़ी लग गई, जैसे अश्वलेषा नक्षत्र में वादल वरस रहे हों।

हाथ से प्रेम का पारस प्रस्तर निकल गया, और प्रियतम श्रीकृष्ण चोरी हो गये। हे सखी, अव यह जीवन क्यों धारण करूँ? जहर घोल कर पी लूंगी।

कवि 'धनपति' कहते हैं—हे गोपांगने, धीरज धरो। तुम्हारा सौभाग्य अटल रहेगा। श्रीकृष्ण अवश्य मधुपुर आयेंगे, और तुम्हारे भाग्य का पुनः उदय होगा।

(२२)

साजि चललि सब सुन्दरि रे
मटुकी सिर भारी

घय मटुकी हरि रोकल रे
जनि करिय वटमारी
अलप वयस तन कोमल रे
रीति करय न जानै
धाए पडलि हरि चरणहि रे
हठ तेजह मुरारी
निति दिन एहि विधि खेपह हे
तोहे बड बुधिआरी
आज अधर रस दय लेह हे
पथ चलह झटकारी
आंखिय खुखिय राधा वैसलि रे
वैसलि हिय हारी
नदलाल निर्दय भेल रे
हिरदय भेल भारी
भनहि 'कृष्ण' कवि गोचर करु रे
सुनु गुनमति नारी
आज दिवस हरि सग रहु रे
अवसर जनु छांडी

ब्रजागनाएँ शिर पर भारी गागर लिए सज-धज कर निकलीं। श्रीकृष्ण ने गागर पकड कर रास्ता रोक लिया।

हे कृष्ण, राहजनी मत करो। मेरी उम्र थोडी है, और शरीर कोमल। मै रीति का मर्म नहीं जानती। इस प्रकार वे सुन्दरियां श्रीकृष्ण के चरण पकड कर तरह-तरह से अनुनय-विनय करने लगीं। हे कृष्ण, तुम अपना यह हठ छोड दो।

श्रीकृष्ण ने कहा—हे ब्रजागने, तुम नित्य इसी तरह टालमटोल करती हो। सचमुच तुम बडी चतुर हो। आज अपने अधर-रस का दान दो, और तब प्रसन्न होकर अपना रास्ता लो।

राधा इस आकस्मिक विपत्ति से मुक्त होने के लिए इधर-उधर झांक कर और खांस कर अन्त में नाउम्मीद हो कर बैठ गई।

हे सखी, श्रीकृष्ण कितने कठोर हैं। उनकी इस नाजायज हरकत से दुख होता है।

कवि 'कृष्ण' कहते हैं—हे गुणवन्ती, सुनो। तुम आज श्रीकृष्ण के साथ प्रेमपूर्वक दिन बिताओ, और इस अवसर पर लाभ उठाने से मत चूको।

(२३)

कतय रहल मोर माधव ना
तनि बिनु कत दुख साधव ना
हरि हरि करु ब्रजनागरि ना
चिकुर फुजल लट झाडल ना
शिर सँ खसलि कारी नागिन ना
चिहुँकि उठति नव कामिनि ना
फुलल कमल उर जागत ना
ताहि पर जौवन भारी ना
'बुद्धिलाल' कवि गाओल ना
रसिक पुरुष रस बूझत ना

मेरे प्रियतम श्रीकृष्ण कहाँ रह गये ? उनकी गैरहाजिरी में मैं अब और कितने दिन तपस्या की धूनी रमाऊँ ?

ब्रजांगनाएँ 'कृष्ण ! कृष्ण !' की रट लगा कर विरहाकुल हो रही हैं।

उनके सिर की वेणी खुल कर अस्त-व्यस्त हो गई है, लट बिखर रही हैं, जैसे सिर से काली नागिन लटक कर डोल रही हो।

कभी वह नवोढा तरुणी रह-रह कर चौंक उठती है, और कभी उसके युगल उरोज खिल उठते हैं। तिस पर उसकी जवानी और भी सितम ढाती है।

कवि 'बुद्धिलाल' कहते हैं कि रसिकजन ही इस रस का रहस्य समझेंगे।

(२४)

माधव कि कहव कुदिवस मोरा
अपन कर्मफल हम उपभोगल जाहि दोप नहि तोरा
जाहि नगर चानन नहि चीन्हे अडर आदर के रोपै
बिन गुण बुझलें तनिक निरादर तापर उचित ने कोपै
पढल पुरुप यदि नयन गमाओल तें नहि करिय अभेला
जौं करमी फुल कौन सराहल तें कि कमल गुन भेला
सुजन पुरुष निरगुन जग निन्दल जड के गौरव बूझै
'नन्दीपति' इहो मन दय बूझिय आन्हर कें कि दरपन सूझै

हे कृष्ण, मैं अपने बुरे दिन के हालात क्या कहूँ ?

मैं तो अपने किये का फल भुगत रही हूँ। अपने कर्त्तव्याकर्त्तव्य के लिये तुम्हें क्यूं दोष दूं ?

जहाँ चन्दन के गुण-दोष की परख नहीं होती, वहाँ एरण्ड की ही क़द्र होगी। किसी के गुण की उचित परख न कर सकने के कारण ही कोई किसी का निरादर करता है। अत' वह क्रोध का नहीं, दया का पात्र है।

यदि विज्ञ पुरुष ज्ञान के प्रकाश से वचित होकर कुछ-का-कुछ कर बैठें तो वह अवहेलना के योग्य नहीं। करमी के फूल की कोई कितनी ही तारीफ क्यूं न करे, किन्तु वह कमल के फूल की समता नहीं कर पाता।

यह निर्गुण ससार विज्ञ जनों की उपेक्षा कर मूर्खों की इज्जत करता है। कवि 'नन्दीपति' कहते हैं—लेकिन यह निश्चित है कि अन्धे के हाथ में दर्पण रख देने के बावजूद वह देख नहीं सकता।

(२५)

माधव सब विधि थिक मोर दोपे
वयस अलप थिक तनु अति कोमल
तें नहि दरश परोसे
कोंच कली जौं अहाँ हरि तोडव

तौं पुनि हएव उदासे
हयत कली पुनि रंग नुरंगित
दिन - दिन हयत प्रकाशे
निकलि सुवास आस तोहि पूरत
वैसि पिवह रस पासे
किछु दिन और धीर वर मधुकर
जखन हएत नुविकासे
'चन्द्रनाथ' भन अरज कर नागर
न करिए एहन गेआसे
दिन-दिन तोहि प्रेम हम लायव
पुरत सकल विधि कासे

हे कृष्ण, यदि देखा जाय तो सब प्रकार से मैं ही कसूरवार हूँ।

मेरी उम्र थोड़ी है और शरीर नाजुक, जो स्पर्श करने के भी काबिल नहीं है।

हे प्रियतम, यदि तुम कच्ची कली तोड़ कर इस्तेमाल में लाना चाहोगे तो तुम्हें निराश होना पड़ेगा। हाथ कुछ नहीं लगेगा। जब कली पूर्णरूप से प्रस्फुटित हो जायगी तो उसके सौन्दर्य्य में स्वतः निखार आ जायगा। उसकी गन्ध चारों ओर फैल कर फूट बिखरेगी। और तुम्हारी आशा पूरी होगी। उस दशा में तुम उसका मधुर रस पान कर सकोगे। अतः हे मधुकर, तुम कुछ दिन धीरज धरो। कली को विकसित हो लेने दो।

कवि 'चन्द्रनाथ' कहते हैं कि नायिका का प्रियतम अर्ज कर रहा है—हे तरुणी, तुम्हारा यह खयाल गलत है कि कली के विकसित होने पर ही मधुकर उसके रस का पान करेगा। मैं तुमसे प्रतिदिन प्रेम करूँगा, और मेरी मनोकामना पूरी होगी।

(२६)

प्रथम समागम भेल रे
हर्षहि नैनि चिनि गेल रे

नव तन नव अनुराग रे
बिन परिचय रस जाग रे
से सव सग पिय तजि गेल रे
यौवन उपगत भेल रे
आव ने जिअव विनु कत रे
आब कि जीवन भेल अन्त रे
'नन्दीपति' कवि भान रे
सुपुरुप ने करय निदान रे

अर्थ स्पष्ट है।

(२७)

समय वसन्त पिया परदेश
असह सहव कत विरह कलेश
सुमिरि-सुमिरि पहुँ नहि रह धीर
मदन दहन तन दगध शरीर
शीतल पकज चम्पाक माल
हृदय दहय जनि विषधर ज्वाल
श्रवण दहय तन कोकिलक गान
चान किरिन दह अनल समान
'हर्पनाथ' कवि मन दै गाव
रसिक पुरुष जन बुझ इहो भाव

वसन्त ऋतु है। प्रियतम प्रवास में हैं। मैं विरह की यह असह्य वेदना कब तक सहूँ?

जब प्रियतम की याद आती है तब धीरज जाता रहता है। काम की लपट से शरीर भस्मीभूत हो रहा है। शीतल कमल और चम्पा के हार—ये दोनों विषैले सर्प के फूत्कार की ज्वाला की तरह हृदय को जलाते हैं। कोयल का संगीत कानों में दाह उत्पन्न करता है, और चन्द्रमा की शीतल किरणें अंगार की भाँति जलाती हैं।

कवि 'हर्षनाथ' कहते हैं—रसिक पुरुष ही रस का रहस्य समझेंगे।

(२८)

नागर अटकि रहल परदेश
तरुण वयस कत खेपब कलेश
मैल वसन तन भस्म लेपि लेल
तन दूरवि अभरन तजि देल
खन-खन झांखथि रहथि मन मारि
कोन दोष तजि गेल मदन मुरारि
भन 'व्रवुजन' कवि सुनिय व्रजनारि
धैरज धय रहु मिलत मुरारि

मेरे प्रियतम परदेश में ही अटक गये। मैं इस भरी जवानी में अब और कितने दिन दुख का भार वहन करूं?

इस प्रकार विरहाकुल हो कर उसने अपने सुन्दर आभरण का परित्याग कर मैला वस्त्र पहन लिया। और शरीर में भभूत रमा ली।

चिन्तातुर हो कर वह अनेक प्रकार के सकल्प-विकल्प करने लगी। उसका चित्त उदास हो गया। हाय! श्रीकृष्ण ने मेरे किस अवगुण के कारण मेरा परित्याग कर दिया।

कवि 'व्रवुजन' कहते हैं—हे व्रजागने, सुनो। धीरज धरो। तुम्हें भगवान श्रीकृष्ण अवश्य मिलेंगे।

(२९)

आज हमर विह वाम हे सखि
मोहि तेजि पहु चलल गाम
पहुं भेल हृदय कठोर हे सखि
घुरि ने तकय मुख मोर
जाहि वन सिकियो ने डोल हे सखि
ताहि वन पिय हँसि बोल

भनहि 'विद्यापति' मान हे सखि
पुरुषक नहि विश्वास

हे सखी, आज विधाता वाम हो गये। प्रियतम मेरा परित्याग कर अपने गाँव जा रहा है।

हे सखी, प्रियतम कितने निठुर है कि पीछे घूर कर एक वार देखते तक नहीं।

हे सखी, जिस वन में तृण तक नहीं हिलते, उस निबिड स्थान में मेरा प्रियतम हँस कर बोल रहा है।

कवि 'विद्यापति' कहते है—'हे सखी, पुरुष के प्रेम का विश्वास नहीं'।

वटगमनी

'वटगमनी' का अर्थ है—पथ पर गमन करनेवाली। यदि आप मिथिला के गांवों में किसी मशहूर त्योहार या मेले के उत्सवों पर जाय, और देहात की ऊबड़-खाबड़ सँकरी पगडंडी पर आंखों में काजल आंजे, सिर पर लहराते हुए बालों की चोटी गूंथे, हाथों में कांच की चूड़ियां पहने, घेरदार साड़ी का आँचल कमर में खोंसे और एक खास नाज़ोअन्दाज़ से गांव की युवतियों को कंधे-से-कंधा मिला कर अपने दर्द-भरे लहजों में नशीले नग़मों को गाते हुए सुनें या वीरान दरिया-किनारे से अपने घरों को लौटती हुई पनहारियों को माथे पर गागर रक्खे और अँगड़ाई का नक़शा बन-बन कर गीतों के ख़ज़ाने खोलते हुए देखें, तो समझ लीजिये कि सावन की तरह रस बरसाने वाला वह गीत 'वटगमनी' की पौद का है। 'वटगमनी' के रसीले भौंरों का रस पीने के लिए रसिक श्रोताओं की टोली वैसे ही टूटती है, जैसे शक्कर की गंध पा कर चींटी।

बरसात के मौसम में बागों में झूले पर बैठ कर भी 'वटगमनी' गायी जाती है। क्या खूब होता है उस समय का दृश्य, जब आम के ऊँचे पेड़ों की हरीरी शाखों में झूलों के अड्डे होते हैं, आसमान में ऊदे-ऊदे बादल आंख-मिचौनी खेलते हैं, बरसाती हवा की लहरों से अमराई के नौ-उम्र पौदे हिलते हैं, और देहात की कुमारी नवयुवतियां झूलों पर पेंगें ले-लेकर तितरियों की तरह लहराती हैं।

'वटगमनी' देहात की उस सरल-हृदया कन्या की तरह है, जो हरे बाजरे के खेत में बग़ल में टोकरी दावे गोबर के कंडे बिछाती है। अर्थात् इनका कलाम खालिस देहाती है। इसका मज़मून मँजा हुआ है जो उर्दू शायरी के 'मामला-बंदी' के ढंग पर चलता है। इसकी रचयिता काव्य की वारांगियों से

बेख़बर है, ऐसा नहीं। वह मानव-प्रकृति के अंग-प्रत्यंगों का जानकार है। उसकी परख महीन, और आँखें ख़ुर्दबीन-सी तेज़ हैं। वह जानता है कि कवि अथवा चित्रकार को अपनी कूँची बारीकी से इस्तेमाल करनी चाहिए। वरना थोड़ा भी रंग हल्का या गाढ़ा हुआ कि तस्वीर बिगड़ी। उसका मस्तिष्क पचनशील है। इसलिए वह ओस से धुली हुई पत्तियों में भी उतना ही सौन्दर्य्य पाता है, जितना कि प्रकृति के सूखे ठूंठ में। कवि शेक्सपियर के शब्दों में—प्रेमी की तरह वह सब पदार्थों को उन्मत्त की तरह देखता है। वह मिश्र देश के हबशियों में भी हेलेन की सुंदरता के देखने का आदी है।

'बटगमनी' के उपमान, उपमेय नपे-तुले हैं। ईरानी शायरों की तरह उसका रचयिता हरिणी-सी बड़ी-बड़ी आँखों की उपमा नरगिस से देने की ग़लती नहीं करता। उसकी शायरी में 'अपनेपन' का रंग है। जिस मुल्क की हवा में वह साँस लेता है, तशबीहात—उपमाएँ भी वह वहीं से चुनता है। अपने घर के नीम, कीकर के दरख़्त को छोड़ कर वह नाशपाती पर लट्टू नहीं होता। यही उसकी कला है।

'बटगमनी' के भावों की बंदिश मैथिली है, और तर्ज़ रोमान्टिक साँचे में ढला है। उसकी कल्पना वैशाख-संध्या-सी शीतल, और भाषा मिश्री की डली की तरह मीठी है। उसके कहने का ढंग साधारण होते हुए भी उसमें एक बाँकपन है, जो अहले-दर्द के दिलों में दर्द पैदा करता है। कोई-कोई 'बटगमनी' को 'सजनी' भी कहते हैं। इसलिए कि गीत के प्रत्येक चरण के प्रथम और तृतीय वाक्य-खंड के अंत में 'सजनि' शब्द बार-बार आते हैं। 'बटगमनी' के दो भेद हैं (१) संयोग—सुखांत; (२) वियोग—दुखांत।

उदाहरण-स्वरूप इस शैली के कुछ गीतों का रसास्वादन कीजिये।

(१)

जनमल लौंग दुपत भेल सजनि गे
फर फूल लुबधल जाय
साजी भरि-भरि लोढल सजनि गे
सेजही दय छिरिआय

फुलक गमक पहुँ जागल सजनि गे
छाडि चलल परदेश
बारह बरिस पर आयल सजनि गे
ककवा लय सन्देश
ताही में लट झारल सजनि गे
रचि-रचि कयल शृङ्गार

हे सखी, लौंग के बीज अंकुरित हुए, और उसमें दो पत्ते उग आये।

काल पाकर वह फल-फूल से लद गया।

तब मैंने डाली भर-भर कर उसके फूल इकट्ठे किये और फिर उन्हें प्रियतम की सेज पर बिखेर दिया।

उन फूलों की गंध से मेरे प्रियतम की नींद टूट गई, और वह मुझे छोड़कर परदेश चले गये।

हे सखी, वह पुनः बारह वर्ष पर वापिस आये, और मेरे लिए अपने साथ कंघी उपहार में लाए।

मैंने उसीसे अपने उलझे हुए बालों को सँवारा, और रच-रच कर शृंगार किया।

यह गीत इस प्रकार भी गाया जाता है—

लौङ्क गाछ दोपत भेल सजनि गे
फल-फूल लुबुधल डारि
खोइछा भरि तोरल फाँफर भरि सजनि गे
सेज भरि देल छिरिआय
फुलक गमक पहुँ जागल सजनि गे
उठि पहुँ जाइथ विदेश
ओतए सँ पहुँ लौटल सजनि गे
की सब लाओत सनेस
दर्पण ककवा सिनिया सजनि गे
सिनुरा कामि विशेषे

ओहि ककहा केस थकरव सजनि गे
रचि-रचि करव सिंगारे
लय दर्पण मुंह देखव सजनि गे
मिसिया सिनुरा धारे

ये या इस प्रकार के कुछ गीत विद्यापति के नाम से प्रसिद्ध हैं। इनमें कुछ तो 'विद्यापति-पदावलि' में स्थान पा चुके हैं। पर मिथिला के गांवों में इस प्रकार के गीत जुदा-जुदा लिबासों में मिलते हैं। उनका अपना एक अलग रंग हैं। गीत की अन्तिम पंक्तियों में 'विद्यापति' के नाम के स्थान पर अन्यान्य मैथिल ग्रामीण कवियों के नाम जुड़े हुए हैं। आश्चर्य तो यह है कि मिथिला में विद्यापति-जैसे दर्जनों (प्राय: सौ-डेढ़-सौ) लोक-कवि; जैसे—दामोदर, दुखभंजन, हर्षनाथ, जीवनाथ, कुंवर, प्रीतिनाथ, गोविन्द मिश्र, मधुसूदन मिश्र, रमापति, नन्दीपति, मेघदूत, मँगनीराम, गंगादास, उमापति, चन्द्रनाथ, श्रीनिवास, रत्नपाणि, साहेबराम, फतुरलाल, कर्ण जयानन्द आदि पाये जाते है, और उनके रचे हुए गीत विद्यापति के अच्छे-से-अच्छे गीतों का मुक़ाबिला करते हैं।

(२)

जखन गगन घन वरसल सजनि गे
सुनि हहरत जिव मोर
प्राननाथ दुर देश गेल सजनि गे
चित भेल चन्द्र-चकोर
हमहुँ एकाकिनि कामिनि सजनि गे
दामिनि दमकि चहुँ ओर
दामिनि कतेक दुखोलक सजनि गे
अव ने वचत जिव मोर
झींगुर झझकत चहुँ दिशि सजनि गे
कोयल कुहुकत मोर

ने सुनि जिय घबरायल सजनि गे
यौवन कयलक थोर

हे सखी, जिस समय आकाश से बादल बरसते हैं, उस समय मेरा कलेजा काँप उठता है।

हे सखी, मेरे प्राणनाथ दूर देश में जा विराजे हैं, और मेरा चित्त चन्द्र के चकोर-सा अधीर हो रहा है।

मैं एकाकिनी अबला हूँ, और यह दामिनी दशो दिशाओं में रह-रह कर दमक उठती है।

हे सखी, दामिनी ने मेरा दिल कितना दुखाया। अब मेरा जीना कठिन जान पड़ता है।

हे सखी, चारों ओर झींगुर और मयूर शोर मचा रहे हैं, और कोयल कुहु-कुहु की आवाज़ दे रही है जिसको सुन-सुन कर मेरा मन विचलित हो रहा है।

हाय! मेरी जवानी ने मेरी बड़ी दुर्गति की!

गीत का यह ग्रामीण रूप है। गाँवों में औरतों की ज़ुबान पर यह इसी वेश-भूषा में विराजमान है। लेकिन 'विद्यापति' के नाम के साथ पिरोयी जा कर यह इस प्रकार गाया जाता है—

कखन गगन घन गरजल सजनि गे
सुनि हहरल जिव मोर
प्राननाथ परदेश गेल सजनि गे
चित भेल चान-चकोर
एकलि भवन हम कामिनि सजनि गे
दामिनि लेल जिव मोर
दामिनि दमसि डेराओल सजनि गे
आब ने बँचत जिव मोर

भगोला भजन करु सजनि गे
रहल कथा न विशेप
भम्हरा लीखि पठाओल सजनि गे
रहल कुसुम - घन - घेर
भनहि 'विद्यापति' गाओल सजनि गे
मन जुनि करिय उदासे
सव सँ वड धैरज थिक सजनि गे
भमर आओत तोहि पासे

उपर्युक्त दोनों गीतों की रेखांकित पंक्तियों पर गौर कीजिये।

(३)

एकसरि कोन पर खेपव सजनि गे
युग सम यामिनि याम
कत नव हृदय निरोधिय सजनि गे
कतहु ने होय विश्राम
जतेक अछल गुन गौरव सजनि गे
तनि बिनु सब दुरि गेल
की कहु अपन करम फल सजनि गे
पहुँ नहि दरशन देल
काहि कहुअ दुख के वुझ सजनि गे
सपनहुँ विसरल हास
कतेक जतन करि शशि बिनु सजनि गे
कुमुदिन न हयत प्रकास
'भानुनाथ' कवि मन गुनि सजनि गे
करु हृदय अभिराम
रस-लोलुप पहुँ अओताह सजनि गे
पुरत सकल मन काम

हे सखी, मैं यह ज़िन्दगी अकेली किस तरह विताऊँ? रात्रि का एक प्रहर मेरे लिए युग-बराबर बीत रहा है।

इस नव उम्र दिल को जितना ही वश में करने की कोशिश करती हूँ उतना ही यह विवश हो रहा है। जीवन के जो शक्तिदायक गुण-गौरव थे वे प्रेमातिरेक में क़ाफ़ूर हो गए।

हे सखी, मैं अपने खोटे भाग्य का क्या वर्णन करूँ? मेरे पत्थर-दिल सनम ने जाने क्यों दर्शन नहीं दिया?

मैं अपनी जीवनी किससे कहूँ? मेरी ज़िन्दगी की मुसीबतें किसको यकीन आयेंगी?

मेरी वह आनन्द की दुनिया स्वप्नवत् हो गई है।

हे सखी, चाहे लाख यत्न किया जाय, लेकिन क्या चन्द्रमा के बिना कुमुदिनी का भावुक हृदय खिल सकता है?

कवि 'भानुनाथ' कहते हैं—हे नायिके, अपने दर्द-भरे दिल में चैन लाओ। तुम्हारे रस-लोभी साजन अवश्य आयेंगे और तुम्हारी मनोकामना पूरी होगी।

कहीं-कहीं गीत के अंत में निम्नलिखित पंक्तियाँ भी मिलती हैं—

जैओ अनेक मपथ करि सजनि गे
ककर पुरुष वर माग
भीजों वरस लख सागर सजनि गे
कुमुदिनि होए परवान

(४)

ऋतु वसन्त तिथि पचमि सजनि गे
फुलि गेल सभ वन फूल
कोकिल करयि व सजनि गे
आनन्द-वन में झूल
पान सुमन-रस कर अलि सजनि गे
विरहिनि दुख केर मूल

सकल सुमन केर सौरभ सजनि गे
लै बह पवन सथूल
हमर कत कत लोभित सजनि गे
देल मोहि सुधि बिसराय
जो ऋतुराज सत्य सुनु सजनि गे
प्राननाथ देता लाय
जैता बसन्त अओता पुनि सजनि गे
गत यौवन नहि आय
कर्म अभाग्य लिखल अछि सजनि गे
के दुख हमर मिटाय

हे सखी, आज बसंत ऋतु की पंचमी तिथि है। वन-बागों में रंग-बिरंगे फूल चिटख गये हैं।

कोयल अलमस्त हो कर आनन्दवन में कूक रही है। और हे सखी, भौरा खिले हुए फूलों का रस पी रहा है, जो विरहिणियों के दुख का मूल कारण है।

पवन तरह-तरह के फूलों का सौरभ बटोर कर उन्हें इधर-उधर बखेर रहा है। हाय, इस समय मेरे प्रियतम किस देश में छा रहे है कि उनने मेरी सुधि बिसरा दी।

हे सखी, सुनो! यदि यह ऋतुराज सत्य है, तो मेरे प्राणनाथ को बुला कर अवश्य अपने नाम को सार्थक करेगा।

वसंत जायगा, और फिर लौटेगा, लेकिन मेरी यह जवानी फिर नहीं लौटेगी!

हे सखी, विधाता ने मेरी तक़दीर खोटी बना दी। हाय! अब मेरे इस दुख का उपचार कौन करेगा?

(५)

पीतम पीत लगाओल सजनि गे
बसल जाय कोन देश

वटगमनी

हमरो देखाय देहु तोहि सजनि गे
जायत्र हुनक उदेश
जोगिनि वेन वनायत्र सजनि गे
जटा वनायव केश
कर कमडल झोरी लय सजनि गे
करव अटन परदेश
कवि 'दुखभजन' कह सुनु सजनि गे
धीर धरु दुर हयत क्लेश

हे सखी, मेरे प्रियतम प्रीति लगा कर किस देश में छा गये? मुझे उनका पता वतला दो। मैं उनकी टोह लूँगी।

हे सखी, मैं योगिन का वेश धर कर अपने वालो को जटा वनाऊँगी, और हाथ में कमडल और झोली लेकर परदेश-यात्रा करूँगी।

कवि 'दुखभजन' कहता है—हे नायिके, तुम धीरज धरो। तुम्हारा दुख अवश्य दूर होगा।

(६)

अकेलि भवन नहि जायव सजनि गे
हमर वयस थिक थोर
काँपय हृदय एखन सुनु सजनि गे
छाडि दिअ कर अत्र मोर
शिखर तरुण चढव जौं सजनि गे
गहत्र पहुँक पद जोर
तखन प्रयोजन नहुँ के न सजनि गे
अपनहि जायव ताहि कोर
'मेघदूत' कवि गाओल सजनि गे
ए हेतु जनि करु शोर

हे सखी, मैं अपने प्रियतम के शयन-कक्ष में अकेली नहीं जाऊँगी। अभी मेरी उम्र थोडी है, और मेरा कलेजा कांप रहा है। इसलिए मेरा हाथ छोड दो।

हे सखी, जब मैं जवानी के उच्च शिखर पर चढूंगी, तो मैं स्वयं प्रियतम के चरणों की सेवा करूंगी।

उस समय तुम्हारा कुछ भी प्रयोजन नहीं रहेगा। मैं खुद ही प्रियतम की गोद में जा बैठूंगी।

इसलिए 'मेघदूत' कवि कहता है कि हे सखी, अब तुम व्यर्थ का कोलाहल मत करो।

(७)

जेठ मास अमावस सजनि गे
सब धनि मगल गाउ
भूषण-वसन यतन कए सजनि गे
रचि-रचि अग लगाउ
काजर रेख सिंदुर भल सजनि गे
पहिरथु सुबुधि सयानि
हरसित चललि अछयवट सजनि गे
गवइत मगल खानि
घर घर नारि हँकारल सजनि गे
आदर सँ सँग गेलि
आइ थिक बरसाइत सजनि गे
तँ आकुल सब भेलि
घुमडि-घुमडि जल ढारल सजनि गे
बाँटत अछत सुपारि
'फतुरलाल' देता आशिस सजनि गे
जीवथु दूलहा-दुलारि

ते लगते हुं। क्या करूं, क्या नहीं? समझ में

तक तो ज़िंदगी में जुदाई की घड़ियां नहीं आईं।
न के प्राण एक थे। किंतु, जाने क्यों प्रवास में जाने
। उनकी सुबुद्धि का अधिक क्या परिचय दूं?
ये काले दिन जाने कब तक रहेंगे? इसकी भविष्य-
हूँ, विधाता सहज ही मेरे विपरीत हो गये। हाय!
ौन मदद करेगा?
ते हैं—हे सुन्दरी, तू मन म्लान मत कर। हे कमल-
मधुकर (प्रियतम) तेरे मधु का (अवश्य) पान

(६)

दनि नव कामिनि सजनि गे
नि अति अन्हियारि
सग चललि केलि गृहि सजनि गे
कज दीप वारि
झकोर जोर वहु सजनि गे
धरू अचल झाँपि
उरज अति उन्नत सजनि गे
राशि उठु काँपि
अप करत झुकत फेर सजनि गे
धुनै शिर माथ
लै दैव जन्म देल सजनि गे
ानन' विन हाथ

ुखी तरुणी अपनी सखियों को साथ लेकर शयन-
त्यंत अंधेरी थी। इसलिए उसने अपने कर-कमल
ख लिया।

'वटसाविश्री' सधवा स्त्रियो की पूजा का पर्व है। यह जेठ महीने की अमावस्या तिथि को मनाया जाता है। इसमें स्त्रियाँ अपना चिर-सुहाग प्राप्त करने के लिए वटवृक्ष की पूजा करती हैं। पौराणिक आख्यान है कि इसी दिन वटवृक्ष के नीचे सत्यवान की मृत्यु हुई थी, और सती सावित्री ने अपने पातिव्रत्य के प्रभाव से उसके लिए पुनर्जन्म प्राप्त किया था। यह पर्व मिथिला में विशेष-रूप से प्रचलित है। इस पर्व के अवसर पर जो गीत गाये जाते है, वे 'वटसावित्री' के नाम से प्रसिद्ध है।

(८)

चहुँ दिशि हरि पथ हेरि सजनि गे
नयन वहै जलधार
भवनो ने भावय दिवस निशि सजनि गे
करवो मे कोन परकार
एते दिन नयन प्रेम छल सजनि गे
दुहुँक प्रान छल एक
पिय परदेश गेल निरदै भेल सजनि गे
की कहव तनिक विवेक
कुदिवस रहत कतेक दिन सजनि गे
के मोहि कहत वुझाय
विह विपरीत भेल सहजहिं सजनि गे
के मोर हैत सहाय
'कर्ण जयानन्द' गाओल सजनि गे
मन जनु करिय मलीन
धइरज धरिय कमलमुखि सजनि गे
भमर करत मधुपान

हे सखी, प्रियतम के पथ पर आँखें बिछाए चकित होकर चारो दिशाओ में हेर रही हूँ। आँखो से सावन-भादो की झडी लग रही है। भवन नहीं

भाता। दिन-रात पहाड़-से लगते हैं। क्या करूँ, क्या नहीं? समझ में नहीं आता!

हे सखी, इतने दिनों तक तो जिंदगी में जुदाई की घड़ियाँ नहीं आईं। मेरे और उनके—प्रियतम के प्राण एक थे। किंतु, जाने क्यों प्रवास में जाने पर उनने रंग बदल दिया। उनकी सुबुद्धि का अधिक क्या परिचय दूँ?

हे सखी, मुसीबत के ये काले दिन जाने कब तक रहेंगे? इसकी भविष्य-वाणी कौन करे? देखती हूँ, विधाता सहज ही मेरे विपरीत हो गये। हाय! इस अवसर पर मेरी कौन मदद करेगा?

कवि 'जयानन्द' कहते हैं—हे सुन्दरी, तू मन म्लान मत कर। हे कमल-मुखी, धीरज धर। तेरा मधुकर (प्रियतम) तेरे मधु का (अवश्य) पान करेगा।

(६)

चन्द्रवदनि नव कामिनि सजनि गे
यामिनि अति अन्हियारि
सखि सग चललि केलि गृहि सजनि गे
कर-पकज दीप वारि
पवन झकोर जोर बहु सजनि गे
तें धरू अन्चल झाँपि
देखि उरज अति उन्नत सजनि गे
दीप राशि उठु काँपि
धप धप करत झुकत फेर सजनि गे
माल धुनै शिर माथ
कथि लै दैव जन्म देल सजनि गे
'चतुरानन' विन हाथ

हे सखी, वह चन्द्रमुखी तरुणी अपनी सखियों को साथ लेकर शयन-मंदिर में चली। रात अत्यंत अंधेरी थी। इसलिए उसने अपने कर-कमल में दीपक जला कर रख लिया।

हे सखी, पवन का झोंका रह-रह कर दीए की वत्ती को झकझोर डालता था। फलस्वरूप उसने दीये को अपने अचल की ओट में लुका लिया।

वहाँ तरुणी के उन्नत उभरे हुए उरोज को देख कर दीप-शिखा चचल हो उठी। उसकी लौ कभी धप-धप कर चमक उठती, कभी झपने लगती, और कभी शिर धुन-धुन कर पछताती।

कवि 'चतुरानन' कहते हैं—हे परमात्मा, काश तुमने उस (निरुपाय) दीपक को दो हाथ दिये होते।

(१०)

एकसरि कौने परि हरिहर सजनि गे
धयल विरह मँझवार
कतहु ने देखियन्हि यदुपति सजनि गे
जनि विन जगत अन्हार
ककर जगत हम की कैल सजनि गे
के कैल ई उपचार
फुल सँ तन अवसन भेल सजनि गे
परल विरह दुख भार
तन हम तिनौ न आँतर सजनि गे
दुनु हुक प्रान छल एक
परदेश गेल परवम भेल सजनि गे
की कहव तनिक विवेक
सुकवि कहथि परमावधि सजनि गे
उचित न होय वखान
क्यो पुनि रस वुझि वश होय सजनि गे
क्यो पुरइन जस पानि

हे सखी, श्रीकृष्ण ने जीवन की किस मृदुता के आधार पर (जीवित रहने के लिए) मुझे अकेली विरह की मँझधार में छोड दिया?

हे सखी, चारो ओर दृष्टि फिरा कर देखती हूँ। उन्हें कहीं नहीं देखती।

मेरे एकाकीपन में हिस्सा बँटानेवाला कोई नहीं रहा। (सच पूछो तो) उनकी अनुपस्थिति में यह दुनिया अँधेरी लगती है।

हे सखी, मैंने किसका क्या बिगाड़ा? किस (ममता-हीन) डायन ने विरह के नुस्खे का यह कड़वा प्रयोग किया है?

हे सखी, मेरा यह फूल-सा कोमल शरीर सूख चला, और शिर पर विरह के दुख का (दुर्वह) पहाड़ टूट पड़ा।

हे सखी, हम दोनो एक दूसरे से पल-मात्र भी नहीं बिछुड़ते थे। दोनों के प्राण एक थे।

लेकिन प्रवास में जाने पर वह परवस हो गए। मैं उनकी सुबुद्धि का अधिक क्या परिचय दूं?

'सुकविदास' कहते हैं—हे सखी, मतलब न सधने के कारण (सहसा अंतिम बिंदु, 'क्लाइमैक्स' पर पहुँच कर) किसी की इल्मियत या इन्सानियत में संदेह करना उचित नहीं दीखता।

(स्वाभाविकता का तकाज़ा है कि) कोई रस का रहस्य समझ कर उसके वशीभूत हो जाता है, और कोई जल में कमल के पत्ते की तरह निर्लेप रहता है।

(११)

नव यौवन नव नागरि सजनि गे
नव तन नव अनुराग
पहुँ देखि मोर मन बाढल सजनि गे
जेहन जल चन्द्राव
बाढल विरह पयोनिधि सजनि गे
कहलन्हि जीवक आधि
कत दिन हेरब हुनक पथ सजनि गे
आब बैसलहुँ हिय हारि
हम पडलहुँ दुख-सागर सजनि गे
नागर हमर कठोर

जानि नहि पडल एहन सन सजनि गे
दग्ध करत जिअ मोर
धर्म 'जयानाथ' गाओल सजनि गे
क्यो जनु करै कुरीति
धैरज धरहु कलावति सजनि गे
आज करत बहुरीति

अर्थ स्पष्ट है।

(१२)

पहुँ के दरस मुख छूटत सजनि गे
जखन जायब हम गामे
तखन मदन जिव लहरत सजनि गे
की देखि करब गेयाने
विसरि देव नहि विसरत सजनि गे
हुनि मुख पकज ध्याने
विरह विकल मन तलफत सजनि गे
दिन-दिन झूर झमाने
जौं हम जनितहुँ एहन सन सजनि गे
हैत आन सौं आने
कथिलै नेह लगाओल सजनि गे
आब नहि बाँचत प्राने
भन 'यदुनाथ' सुनहु सखि सजनि गे
मज्जनि हुनकरि नामे
हमर कहल बुझि राखब सजनि गे
विधि पुरावत कामे

हे सखी, जब मैं नैहर जाऊँगी तब प्रियतम के दर्शन दुर्लभ हो जायेंगे। मदन के प्रकोप से अहर्निश प्राण जला करेंगे।

हाय! क्या देख कर मैं धीरज बाँधूंगी?

हे सखी, मैं अपने को उन्हें भुलाने न दूंगी, और न उनके मुख-कमल का ध्यान मेरे स्मृति-पटल से क्षण-भर के लिए हटेगा।

हे सखी, मेरा मन विरह से व्याकुल होकर तड़पा करेगा, और यह शरीर खिन्न होकर हाड-पिंजर रह जायगा।

हे सखी, यदि मैं जानती कि प्रेम के फल इतने कड़वे हैं—स्वाति का जल अग्नि का कण बन जायगा तो नेह क्यूं लगाती?

अब प्राण नहीं रहेंगे

कवि 'यदुनाथ' कहते हैं—

हे सखी, नायिका का प्रियतम नेक है। मेरे कथन पर विचार कर लेना। उसकी मनोकामना पूरी होगी।

(१३)

जखन सुधाकर विहुँसल सजनि गे
हिया दगध करू मोर
शरद निशाकर ऊगल सजनि गे
वाढल विरह तन जोर
ककहा केसर भूषन सजनि गे
लायल पहुँ मोर आज
कपट सुतल पहुँ पाओल सजनि गे
तेजल सकल मन लाज
मधुर वचन हँसि पुछिलहुँ सजनि गे
किये पहुँ रहलहुँ रूसि
तखन पिया हँसि वाजल सजनि गे
दीप वराओल फूंकि
'सहसराम' भन मन दय सजनि गे
पूरल मकल मन काम
पहुँ सग सुन्दरि मुद भरि सजनि गे
शोभित चारू याम

हे सखी, जब नीलाकाश का यह चन्द्रमा हँसता है, तब हृदय पीड़ा की आग में जलने लगता है।

उधर गगन में शरदेन्दु खिला नहीं कि इधर शरीर में विरह की तरंग तरंगित हो उठी।

आज मेरे प्रियतम प्रवास से लौट कर आये। और मेरे लिए उपहार में कंघे, केसर और भाँति-भाँति के आभरण लाये।

हे सखी, प्रियतम दबे पाँव आकर और शर्म को दूर कर सेज पर छल की नींद सो गये।

मैं ने हँस कर मीठे स्वर में पूछा—'क्या तुम रुठ तो नहीं गये?"

तब उनने फूँक मार कर दीप बुझा दिया, और प्रसन्न होकर प्रेम-वार्त्ता की।

कवि 'सहस्रराम' कहते हैं—हे सखी, तरुणी की मनोकामना पूरी हुई। उसने प्रियतम के साथ आनन्द-विभोर होकर रात विताई।

(१४)

अभिनव मोर वयस अति सजनि गे
पहुँ नहिं मानल ताहि
फल अनेक घातक भेल सजनि गे
से हम की कहब काहि
चोलिक बन्द खोलि देल सजनि गे
कुच युग नख क्षत भेल
बेरि-बेरि वदन-वदन दुख सजनि गे
निरदय पहुँ मोर भेल
तोड़लन्हि ग्रीवक हार मोर सजनि गे
कैलन्हि अति बल जोरि
से सब हम कत भाषब सजनि गे
पहुँ भेल कठिन कठोर

फूजल चीर चिकुर लट सजनि गे
अङ्कम गहि फेर लेल
नहि छल जीवक भरोस मोर सजनि गे
ता अरुणोदय भेल
भन 'बबुजन' सुनु नागरि सजनि गे
इ थिक सुखक निदान
दिन-दिन ताहि अधिक होय सजनि गे
गुनवन्त रति रस जान

अर्थ स्पष्ट करने की जरूरत नहीं।

(१५)

अवधि मास छल माधव सजनि गे
निज कर गेलाह बुझाय
से दिन अब नियरायल सजनि गे
धैरज धैलो नहि जाय
अति आकुलि भेलि पहुँ बिनु सजनि गे
उर अछि अति सुकुमारि
उकाँछ नयन पथ हेरय सजनि गे
अजहुँ ने आयल मुरारि
खन-खन मन दहो दिशि सजनि गे
विरह उठय तन जागि
से दुख काहि बुझायब सजनि गे
बइसब ककरा लागि
हरि गुन सुमिरि विकल भेल सजनि गे
कोन बुझत दुख मोर
जो 'सनाथ' कवि गाओल सजनि गे
आओत नन्द किशोर

नायिका प्रोषितभर्तृका है। पति ने जिस दिन लौट आने का वचन दिया था, वह दिन टल रहा है। अत नायिका अपनी सखी से कह रही है—

हे सखी, वसंत ऋतु का महीना था, जब कि मेरे प्रियतम ने लौट आने का वचन दिया। वह दिन अब निकट आ गया है, और मेरे प्राण छटपटा रहे हैं।

हाय! प्रियतम के वियोग में मै अधीर हो रही हूँ। क्योंकि मेरा कलेजा अत्यत कोमल है। हे सखी, मेरी आँखें आतुर होकर प्रियतम को ढूंढ रही हैं। लेकिन मेरे प्रियतम आज भी नहीं आये।

मेरा चंचल मन सजन की टोह में प्रतिक्षण बावला बन दशों दिशाओं में भटक रहा है, और शरीर में विरह की अग्नि धधक रही है। हे सखी, मैं यह दु ख किससे कहूँ? मै किसकी गोद में लेटूं?

हे सखी, प्रियतम के गुण का स्मरण कर मै विकल हो रही हूँ। हाय! मेरी इस विरह वेदना का कौन अनुभव करे?

कवि 'सनाथ' कहते हैं—हे विरहिणी, तुम धीरज धरो, तुम्हारे श्रीकृष्ण आज अवश्य आयेंगे।

(१६)

कतेक यतन भरमाओल सजनि गे
दय-दय सपथ हजार
सपथहुँ छल जौं जनितहुँ सजनि गे
नहि करितहुँ अँकवार
आवि जगत भरि भावि न सजनि गे
क्यो जनु करै प्रतीति
मुख सो अधिक बुझावथि सजनि गे
पुरुषक कपटी प्रीति
बाजथि बहुत भाति सो सजनि गे
वचन राखथि नहि थीर

तनुक हिया मोरा दगधल सजनि गे
ज्यों तृण अनल समीर
गुन अवगुन सभ बुझलैन्हि सजनिगे
बुझलैन्हि पुरुषक रीति
अन्तहि यह निरधाओल सजनि गे
पुरुषक कपटी प्रीति

हे सखी, छलिया प्रियतम ने कितने यत्न से, हजारों शपथ दे-दे कर मुझे प्रेम की सँकरी गली में भरमाया।

अगर मैं जानती कि शपथ में भी मकर-फरेब है, तो मैं उन्हें इतना गले न लगाती।

हाय! दुरंगी दुनिया की इस करतूत पर अब कोई कैसे विश्वास करे? मेरे प्रियतम ऊपर से डींग हाँकते हैं, लेकिन उनकी प्रीति भीतर से खोखली है।

तुर्रा यह कि वह अपनी सचाई का अनेक प्रकार की सूक्तियों का हवाला दे-देकर ढिंढोरा पीटते हैं लेकिन उनका वचन गाड़ी के पहिये की तरह अस्थिर है।

(सच कहती हूँ) उनकी इस संगदिली से मेरा कोमल कलेजा दग्ध हो गया है, जैसे तिनका अग्नि का स्पर्श पाते ही वायु के झोंकों के साथ धधक उठता है।

हे सखी, (मैं जो कहना चाहती हूँ, वह यह है कि) मैंने पुरुषों के साथ रह कर उनके गुण-अवगुण और रीति-नियम को अच्छी तरह परख लिया है, और अंत में इस नतीजे पर पहुँची हूँ कि उनकी प्रीति कपट से भरी होती है।

(१७)

जाइत देखल पथ नागरि सजनि गे
आगरि सुबुधि सेयानि
कनकलता सनि सुन्दरि सजनि गे
विहि निरमाओल आनि

हस्तिगमन सनि चलइत सजनि गे
देखइत राजदुलारि
जनिकर एहन सोहागिनि सजनि गे
पाओल पदारथ चारि
नील वसन कटि घेरल सजनि गे
शिर लेल कवरि मम्हारि
तापर भँवरा पिवय रस सजनि गे
वइसल पाँखि पसारि

कोई नायिका अपनी सहेली से कह रही है—

हे सखी, मैंने रास्ते में एक बुद्धिमती सहज-गुण विभूषित तरुणी को जाते हुए देखा है।

वह कनकलता-सी सुन्दरी है। मुझे लगा कि विधाता ने सौंदर्य्य की उस स्वर्गीय प्रतिमा को स्वयं अपने हाथों गढ़ा है।

उसकी चाल मतवाली हथिनी की तरह है, और वह देखने में राजकुमारी की तरह चित्ताकर्षक है।

हे सखी, जिस प्रियतम की वह दुलहिन है, उस बड़भागी ने धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष सांसारिक चारों पदार्थों को प्राप्त कर लिया है।

उसकी कटि नील रंग की साड़ी से अलकृत है, और उसके शिर पर चोटी खींच कर गूँथी हुई है, जिसको देखने से लगता है, मानो (काले अलक-रूपी) भौंरा उसके फूल-से खिले हुए चेहरे पर बैठ कर और अपने पंख फैला कर रस पी रहा हो।

(१८)

आजु सखि देखल वर अनमन-सन
किये रे मलिन मुख तोर
कोन वचन हुनि कान कहल छथि
किअ ने कहइ छिअ मोर

मे सत्र सुनि कै सखी मुगुध भेल
नयन सजल सन भेल
अधर सुखायल लट ओझरायल
घाम सिनुर बहि गेल

हे सखी, आज तुम्हें अन्यमनस्क-सा देखती हूँ। तुम्हारा यह चंद्रमुख म्लान क्यो है?

तुम्हारे प्रियतम ने तुम्हें कौन ऐसी अप्रिय बात कही, जो तुम मुझसे नहीं कह रही हो?

अपनी हमजोलियो की ये सान्त्वना-जनक बातें सुन कर उसकी सखी मुग्ध हो गई, और उसकी आँखों में आँसू छलछला आए। उसके अधर सूख गए। बाल अस्त-व्यस्त हो गए, और विरह की आग से उसकी ईंगुर-बिंदी पसीज गई।

कहीं-कही निम्न-लिखित पाठान्तर मिलता है—

आजु देखिय सखि बड अन-मन मनि
वदन मलिन मुख तोरा
मन्द वचन तोहि के ने कहल अछि
से ने कहिय किछु मोरा
आजुक रडनि मखि कठिन वितल अछि
कान्हि रभस करु मन्दा
गुन अवगुन पहुँ एको ने बुझलन्हि
राहु गरासल चन्दा
सूर्य्य उदित भेल मन हरसित भेल
परवस खेपल राती
सगरि रैनि मोर नयन झँझायल
काठ भेल दुहुँ छाती
भनहि 'विद्यापति' सुनु ब्रज यौवति
ने करिए एहन गेआने

एक दिन एहन सबहि कों होइछैन्हि
सुजन हर्ष कय माने

(१६)

कतेक दिवस पर प्रीतम सजनि गे
आएल छथि पहुँ मोर
मन दय नेह लगाएव सजनि गे
रचि-रचि अंग लगाएव
पहुँ थिक चतुर सयानहि सजनि गे
हम धनि अंक लगाएव
ई दिन जों हम काटव सजनि गे
तखन करव वर गाने
गावि सुनैवनि हुनकहुँ सजनि गे
पहुँ करता वर माने

हे सखी, आज कितने दिन बाद मेरे प्रियतम आये हैं।

आज मैं अपना हृदय खोलकर उनसे प्रेम करूँगी, और बड़ी श्रद्धा से उनसे मिलूँगी।

हे सखी, मेरे सजन प्रेम-कला में प्रवीण है। मैं उन्हें हृदय से लगाऊँगी।

हे सखी, यदि मेरे ये सुख के दिन निर्विघ्न बीते तो मैं मंगल-गान गाऊँगी, और उन्हें भी गाकर सुनाऊँगी, जिससे वह मेरा उचित सम्मान करेंगे।

(२०)

आजु सपन हम देखल सजनि गे
पहुँ आयल थिक मोर
देखि कै नयन जुरायल सजनि गे
पुलकित अछि तन मोर
काशी पाँति पठाएव सजनि गे
पहुँ कै लिखव वुझावि

मोहर माल ने लाएव सजनि गे
दरशन प्रिय दिअ आवि
भँवरा रस मोर पीवै सजनि गे
वऽमल पख पसार
आवि वचाविय रस यहो सजनि गे
हम वइसल छिअ हारि
चानन वदि हम सेवल सजनि गे
भय गेल सीमर गाछि
आव कतेक मनाएव सजनि गे
पहुँ भेल कुब्जा क दास

हे सखी, आज मैंने एक स्वप्न देखा कि मेरे प्राणनाथ आए हैं। उन्हें देख कर मेरी आँखें कृतकृत्य हो गईं, और शरीर पुलकित हो उठा।

हे सखी, मैं काशी पत्र लिखूंगी, जिसमें मैं अपने प्रियतम को समझा कर लिखूंगी कि वह मेरे लिए मणि का हार नहीं लाए, और यहाँ आकर मुझे अपने दर्शन दें।

हे सखी, मैं उन्हें लिखूगी कि भौंरा पख पसार कर मेरे जोबन का रस पी रहा है। अतः आप यहाँ आकर इस रस की रक्षा करें। क्योंकि मैं इस मधुकर से हार खा गई।

हे सखी, मैंने चन्दन समझ कर जिसका सिंचन किया, वह दुर्भाग्यवश सेमल का वृक्ष सावित हुआ।

हे सखी, मैं अब उनसे और कितनी आरजू-मिन्नत करूँ? क्योंकि वह तो कुब्जा के हो रहे हैं।

(२१)

एते दिन भँवरा हमर छल सजनि गे
आव गेल मोरग देश
मधुपुर पिअहु लोभायल सजनि गे
मोरा किछु कहियो ने गेल

आगन लगए विषम-सन सजनि गे
घर भेल विषम अन्हार
फूजल केश अभेस भेल सजनि गे
गेरुला मोरो ने सोहाय
आजु पिया नहि आवत सजनि गे
मरब जहर विष खाय

हे सखी, इतने दिनों तक तो प्यारा भ्रमर मेरा था। लेकिन अब वह मोरंग देश चला गया।

हे सखी, मेरा वह प्रियतम मधुपुर में रमा हुआ है। हाय! मुझे वह कुछ कह भी नहीं गया।

हे सखी, मेरा आँगन नीरस प्रतीत होता है, और घर भयावना तथा तिमिराच्छन्न लगता है।

हे सखी, मेरे बाल यत्र-तत्र बिखर गये हैं; जो अशुभ लगते हैं। और मुझे अब वेणी भी प्रिय नहीं लगती।

हे सखी, यदि आज मेरे प्रियतम नहीं आये, तो मैं गरल-पान कर मर जाऊँगी।

(२२)

आब धरम नहि बाँचत सजनि गे
केहि करत प्रतिपालै
पहुँ परदेश भै बइसल सजनि गे
जोवन भेल जीव कालै
केहि मोरा एहि जग हित हयत सजनि गे
पहुँ देत आनि बजाय
हमरा सौ छोट जे हो छल सजनि गे
तिनकहुँ खेलैं गोपालैं
भन 'यदुनाथ' सुनुहु मोर सजनि गे
दीनानाथ छइन नामे

तोहरो कहल प्रभु राखल सजनि गे
विधि पुरावत कामे

हे सखी, अब धर्म रखना असंभव प्रतीत होता है। न मालूम अब मेरी कौन रक्षा करेगा?

हे सखी, मेरे प्रवासी प्राणनाथ परदेश में जाकर रम गए, और मेरी जवानी मेरे लिये जंजाल हो गई।

हे सखी, अब इस संसार में मेरी भलाई देखनेवाला ऐसा कौन है, जो मेरे प्राणनाथ को बुला कर ला दे?

गीत की अंतिम दो पंक्तियों के ऊपर कहीं-कहीं निम्न-पंक्तियाँ भी जुडी हुई मिलती हैं—

आव हम की भै रहव सजनि गे
थिकहुँ सिंहक नारि
सियारक संग भै रहव हम सजनि गे
सिंहिनि पढतिह गारि
पहिल प्रेम छल हम सो सजनि गे
जनि विसरल मोहि कन्त
हमरो मारि नेराओल सजनि गे
सौतिनि भेलि गुनवंत
जल विनु कमल सुखायल सजनि गे
छूटत नहि परान (मृनाल)
शंख रतन झमार भेल सजनि गे
आव जीवक कोन काज

(२३)

उचित पुछिय तोहि मालति सजनिगे
मन मलिन किय नोर
की देख भम्हरा तेजि परायल सजनि गे
कते अछि हृदय कठोर

चान तेजल कुमुदिनि सजनि गे
हरि तेजि मधुपुर गेल
सून भवन देखि जीव उपेक्षल सजनि गे
कि दगध दैवदुख देल
कमलनयन नहि आयल सजनि गे
कते दिन रहब हुनि आश
मणिमय हार भार भेल सजनि गे
मन जनु करिय उदास

हे मालती, तुम्हारा मुख म्लान क्यों है ? तुम्हारा भौंरा (प्रियतम) तुम्हें छोड कर प्रवासी क्यों हुआ ? हाय ! उसका हृदय कितना कठोर है।

चन्द्रमा ने कुमुदिनी का परित्याग कर दिया, और श्रीकृष्ण राधिका को छोड कर मधुपुर चले गये।

तुम्हारा शयन-गृह वीरान देखती हूँ, और तुम्हारा मन खिन्न। हाय ! विधाता ने तुम्हें कितना दु ख दिया।

तुम्हारे कमलनयन प्रियतम नहीं आये। हे सखी, तुम, अब और कितने दिन उनके पथ पर आँखें बिछाओगी ?

तुम्हारे मणिमय हार भार हो रहे हैं। फिर भी हे सखी, तुम चित्त को क्षुब्ध मत करो।

(२४)

आस लता हम लगाओल सजनि गे
नैनक नीर पटाय
से फल आब तरुणत भेल सजनि गे
आँचर तर ने समाय
काँच आम पिया तेजि गेल सजनि गे
तसु छै न अमने भान
दिन-दिन फल तरुनत भेल सजनि गे
पिआ मन करि ने गेआन

सभक पिया परदेश ग्मु सजनि गे
आयल सुमिरि सनेह
हमर कन्त निरदय भेल सजनि गे
मन नहि वाढय विवेक
'धैरजपति' धैरज धरु सजनि गे
मन नहि करिय उदास
ऋतुपति आय मिलत तोहि सजनि गे
पुरत सकल मन आस

हे सखी, नयन के नीर से सींच कर मैंने आशा-लता लगाई। उसमें अब तरुणाई का उभार आ गया। अचल के पर्दे में छुपाने से वह साफ छुपती तक नहीं।

हे सखी, कच्ची अमिया का परित्याग कर (निर्बुद्धि) प्रियतम प्रवासी हो गए। वह फल अनुदिन तरुणतम होता गया। लापरवाह प्रियतम को इसकी खबर तक नहीं।

प्रायः सभी सखियों के प्रियतम प्रवास में थे, किंतु वे सब स्नेह की डोर में बँध कर वापिस आ गए।

और एक मेरे प्रियतम हैं, जिनके (ममता-शून्य) हृदय में विवेक के लिए स्थान नहीं।

कवि 'धैरजपति' कहते है—हे सुन्दरी, धीरज धरो। दु:खी मत होओ। तुम्हारे प्रियतम ठीक वसत के अवसर पर आयेंगे, और तुम्हारी मनोकामना पूरी होगी।

(२५)

तरुण वयस मदमातलि सजनि गे
सरस मदन शर मारि
रचल रसिक सग मन दय सजनि गे
रति विपरीत विचारि

हे सखी, सरस वसत ऋतु। और चकमक चांदनी रात। ऐसे अवसर पर कोई सुन्दरी कामेच्छा से प्रेरित होकर केलि-गृह में गई।

सेज पर लेट कर उसने आंचल से मुंह ढक लिया, और कपट की नींद सो गई। लेकिन उसकी कलई खुल चुकी थी।

उसका प्रियतम हँस कर चटपट उठ बैठा। सकोच में सिमट कर सुदरी ने मुंह फेर लिया। उसके प्रियतम ने अपने हाथो से उसके शरीर के वस्त्र और अन्य सभी आभरण उतार फेंके, और उसके दोनो उरोजों का स्पर्श कर छक कर अधर रस का पान किया।

हे सखी, इतना ही नहीं उसने अपनी प्रिया को गोद में समेट कर सेज पर लिटा लिया, जैसे बादल और बिजली दोनो परस्पर प्रेम-क्रीडा करके हविस मिटा रहे हों।

और नख की खरोंचों से चिह्नित उस सुन्दरी के पयोधर को देख कर मालूम होता है, जैसे दो पर्वतो (उरोजों) के ऊपर अनेक छोटे-छोटे ताराओ के फूल चित्रित हों।

अतिम पद स्पष्ट है।

फाग

सगीतमय त्योहारो में होली का त्योहार भी कम महत्त्वपूर्ण नहीं। होली से तीन-चार हफ्ते पूर्व ही सगीत की वेगवती धारा प्रवाहित होने लगती है। चारों ओर उत्साह और चहल-पहल होती है। वन-उपवन खिल उठते है। नसो में विजली-सी दौड जाती है। टोले-मुहल्ले, वन-बाग, खेत-खलिहान सभी कुमरियो की भाति चहचहा उठते है। युवतियो की आँखें आनन्द में नाच उठती है। फूल चिटखते है। भौंरे गुन्जार करते है, और मधु चू-चू कर वरस पडता है। होलिका-दहन के दिन गाँव के सभी तबके के लोग मजहवी घरौंदों को लांघ कर इकट्ठे होते है। और टोले-मुहल्ले तथा गली-कूचे के कूडे-करकट बटोर कर 'होलिका-दहन' के लिए एक निर्धारित स्थान पर संचित करते है। घास-फूस, खेतों के झाड-झंखाड और लकडी के सूखे टुकडो के ढेर लगाने के वाद उनमें आग लगा दी जाती है। क्या खूब होता है, उस समय का दृश्य, जब सध्या-आगमन के कुसुम्भी रग के पर्दे-सी लाल-लाल लपटें क्षण भर में वग्दल के कलेजे को चीरती हुई दूर-दूर तक फैल जाती है, और आनन्द की मौजो से जनता का हृदय-सरोवर लहरा उठता है। उस समय गाँव-भर के गवैयो की संगीत-महफिलें जमती है, और वे ढोल, डफ, झाल तथा मृदग के स्वर में स्वर मिला कर एक विशेष गतिमय सुर में गाते चलते है। इन गवैयो की कई-कई टोलियाँ होती है, जो भिन्न-भिन्न गिरोहों में वॅट कर गाती है। एक-एक टोली आठ-आठ या दस-दस गवैयों का मजमुआ होती है। केन्द्र में माला की सुमरिनी की तरह एक प्रधान गवैया होता है, जिसके ताल-सुर और इशारे पर ही इर्द-गिर्द के गवैये गाते और ताल देते है।

'होलिका-दहन' के पश्चात् पौ फटते ही, जब प्रकाश की बिखरी हुई मुक्तायें अस्त-व्यस्त होकर पृथिवी पर लुढकने लगती है, ग्रामीण गवंये भिन्न-भिन्न टोलियों में बँट कर एक शानदार जुलूस के रूप में गाँव की गलियों का चक्कर लगाते है। कितना शानदार होता है उस समय का नज्जारा जब निराली आन-बान के साथ सगीत के मजनूं ग्रामीण गवैयो का जुलूस निकलता है। आगे-आगे ढोलक और मजीरे पर गत वजती चलती है। हरे-हरे बाँसों के सिरे पर लहराते रहते है रूपहले फरेरे। उनके पीछे होते है शरारती लडको के झुड, जो ठेलम-ठेला करते हुए बाँस की बनी पिच-कारियो से बगलगीर तमाशबीनों और राहियो पर फुहारों की बारिश करते है। उनके अगल-बगल और पीछे ठाट से निकलता है—धीर गम्भीर गति में चलता हुआ लम्बा-सा जुलूस जो 'सुन रे भइया मोर कबीर, भले जी भले!' के नारे लगा-लगा कर सितम ढाता है, और रास्ते में जाती हुई भीड पर मकानो के छज्जो से रग छिडकती है अपनी चितवनो को दाएँ-बाएं फेंकती हुई औरतें। और पुरुष भी उन्हें रग से शराबोर कर देते है। यह जुलूस गांव की प्रधान-प्रधान गलियों का चक्कर लगाकर किसी तालाव या नदी-किनारे पहुँचता है, जहाँ लोग स्नानादि से फारिग होकर अपने-अपने ठिकाने लौटते है।

होली के अवसर पर गाये जानेवाले गीतो की गति, उनकी भाषा का वन्ध और स्वरों का सन्धान अत्यन्त मीठा होता है। गवंये एक-एक टेक की दर्जनो वार आवृत्ति करते है। प्रेम की रगीन फुलकारियाँ और वैभववती वन-वीथियो के नैसर्गिक चित्रण, होली की सगीत-महफिलो में ताने-वाने का काम देते है। जनक के धनुष-यज्ञ और राम-सीता का स्वयम्वर-वर्णन भी इन गीतों में मर्मस्पर्शी ढग से किया जाता है। लोक-सगीत के पारखी कद्रदानो ने होली के इन गीतो की मोतिये के महकते हुए गजरे से उपमा दी है जिसके एक भी शब्द-सुमन बिखर जाने से एकता की शृखला छिन्न-भिन्न होने का भय रहता है—

(१)

नकवेसर काग ले भागा
सइयाँ अभागा ना जागा
नकवेसर कागा ले भागा
उडि-उडि काग कदम चढि बइसल
जोवना के रस ले भागा
आजु पलग पर रोदना

हे सखी, नकबेसर लेकर काग उड़ भागा, और मेरे अभागे प्रियतम की नींद भी न टूटी।

काग उड़ कर कदम की डाल पर बैठा। हाय! वह जोबन का रस चूस कर उड़ भागा।

हे सखी, आज की रात पलग पर मनहूसी रहेगी।

(२)

गोरी कहमा गोदओली गोदना
बँहिया गोदउली छतिया गोदउली
बाकी रहल दुनु जोवना
पिया के पलग पर रोदना
गोरी कहमा गोदओली गोदना

री गोरी, कहो तुमने किस-किस अग में गुदने गुदवाये?

बाँह गुदवायी। छाती गुदवायी। सिर्फ दोनो जोबन बाकी रह गये। (इसीलिए) प्रियतम के पलग पर यह रोना है।

री गोरी, कहो तुमने किस-किस अग में गुदने गुदवाये?

(३)

सारी रात पिया बँहिया मरोरलन्हि
चढनिया छुअल नहि जाय
सइयाँ वेदरदा मरमो ने जाने
वढनिया छुअल नहि जाय

हे सखी, (लगातार) रात के चारों पहर प्रियतम ने मेरी बाँह मरोड़ी। दर्द के मारे बढ़नी (झाड़ू) भी नहीं छू पाती।

हाय! बेदर्द बालम रस का मर्म नहीं जानता।

दर्द के मारे बढनी भी नहीं छुई जाती।

(४)

सावन-भादो में बलमुए हो
चुअइ छइ बगला
सावन भादो में
पाँच रुपइया पिया नोकरी से लायल
गहना गढाउ कि छवाउ बगला
सावन-भादो मे बलमुए हो
चुअइ छइ बगला

रे बालम, सावन-भादों में मेरा बगला चू रहा है।

तुमने नौकरी करके सिर्फ पाँच ही रुपये लाये हैं। गहने गढाऊँ या बगला छवाऊँ? (कुछ समझ में नहीं आता।)

रे बालम, सावन-भादों में मेरा बगला चू रहा है।

(५)

नथिया के गूंज टुटि गेल रे देवरा
मोर नइहरा मे अनारी सोनरवा
रात अन्हारी पिया डर लागे
पिया परदेश कडके मोरा छतिया

रे देवर, मेरी नथिया का गूँज टूट गया। नैहर का सोनार निपट गवार है।

रात अँधेरी है। प्रियतम परदेश में हैं। अकेली डर जाती हूँ। छाती रह-रह कर कडक उठती है।

रे देवर, मेरी नथिया का गूंज टूट गया।

(६)

बुढिया पएँरा बतो बुढिया पएँरा बतो
कौना घर में सुतल छउ जुअनकी

री बुढ़िया, रास्ता बतलाओ। तुम्हारी युवती पतोहू किस घर में सोई हुई है?

(७)

जब छउँरी सुनइछइ गवनमा क दिनमा
तेलवा लगाइ छउँरी पोमइछइ जउबनमा

जब छोकरियाँ अपने द्विरागमन का समाचार पाती हैं तब वे तेल लगा कर अपन जोबन को पालती हैं।

(८)

सब सें सुनर बर खोजिहे रे हजमा
हम अलबेली जउबन फुलगेनमा

रे हज्जाम, मेरे लिए ख़ूब ख़ूबसूरत दूल्हा तलाश करना। (क्योंकि) मैं स्वय अलबेली हूँ, और मेरे जोबन फूल के गेंद हैं।

(९)

हम त जाइछी रहरिया के खेत रे
हम त जाइछी रहरिया के खेत रे
ढउआ नेने अइहे रे मिलनुआ

मैं अरहर के खेत जा रही हूँ। रे प्रेमी, तुम वहाँ पैसे लेकर जल्द आना।

(१०)

आजु पलग पर धूम मचत
परदेशिया अयलन्हि हो रामा

आज की रात पलंग पर धूम मचेगी—ओ राम, मेरा परदेशी बालम घर वापिस लौटा है।

(११)

मोहन वशीवाला हो खडे पनघटव।
मोहन × × वशी वाला
पनिया भरन कोना जाउ जमुनमा
मोहन वशीवाला हो खडे पनघटवा

वंशीवाला मोहन पनघट पर खड़ा है। री सखी, जल भरने यमुना-किनारे में कैसे जाऊँ?

वशीवाला मोहन पनघट पर खड़ा है।

(१२)

ननदो अयलन्हि पाहुन अगना
आजु पलग पर रोदना
एहि ननदो के किछु पहिरन चहिअऽन
वाजु विजओठा चुचकसना
ननदो अयलन्हि पाहुन अगना

री ननद, तुम्हारे पाहुन आँगन में आ गये। आज की रात तुम्हें पलग पर रोना है।

मेरी ननद के पहनने के लिए कुछ चाहिये—बाजू, विजौठे और चोली।

री ननद, तुम्हारे पाहुन आँगन में आ गये।

(१३)

व्रज के वसइया कन्हैया गोआला
रग भरि मारय पिचकारी
एऽ पार मोहन लहगा लूटै सखि
ओऽ पार लूटथि सारी
मँझधार कान्हा जोवन लूटथि
रग भरि मारय पिचकारी
व्रज के वसऽया कन्हैया गोआला

व्रजवासी कन्हैया जाति का ग्वाला है। गोपाङ्गनाओ को रग भर-भर कर पिचकारी का निशाना बनाता है।

कन्हैया यमुना के इस पार लहगा लूटता है। उस पार साडी, और बीच धार में जोबन लूटता है।

व्रजवासी कन्हैया जाति का ग्वाला है। वह रग भर-भर कर गोपियो को पिचकारी का निशाना बनाता है।

(१८)

चले के बटिया चल गेलि कुबटिया
मे गड गेल न
लवगिया के काँट मे गड गेल न
केहि मोरा कँटवा निकालथिन ननदोमिया
मे केहि मोरा न
मे हरतइ दरदिया
मे केहि मोरा न
देवरा मोरा कँटवा निकालतइ ननदोनिया
मे पिया मोरा न
मे हरतइ दरदिया मे पिया मोरा न

जाना चाहिये था बाट पकड कर। किंतु, मै बाट छोड कर कुबाट चली गई। अत तलुवे में लौंग के कांटे चुभ गये।

कौन तलुवे के कांटे निकालेगा? कौन मेरी पीडा हरेगा?

मेरा देवर तलुवे के कांटे निकालेगा, और मेरा प्रियतम मेरी पीडा हरेगा।

(१५)

बेरि-बेरि बरजु मे पिया बनिजरवा
ऊँखवा जनि गेमह रे गोयरवा
जरवा गँवएले पिया खेत खरिहनमा
गरमी गँवएले कोल्हुअरवा
गोर लागु पँइया पड गोला रे बरदवा
न पगहा तोडि आवह अगनमा

तोरा लागि धयलि वरदा खरि रे बगउरवा
त पिया लागि पाललि रे जोबनमा
कोल्हुआ तोर टुटउ मोहनमा तोहर न
रसवा बहि जाय रे गोयरवा

रे व्यवसायी बालम, मैंने तुझे बार-बार मना किया कि तू गाँव के गोंयरे—हल्के में ईख मत रोप ?

रे निर्दयी, तुमने जाडे का मौसम खेत-खलिहान में बिता दिया। गर्मी कोल्हुआर (कोल्हू चलने का स्थान) में बिता दी।

रे गोला बैल, मैं तुम्हारे पैरों पडती हूँ। हज़ार-हज़ार बार आरज़ू करती हूँ। तुम खूंटे का पगहा—बन्धन तोड कर आँगन में चले आओ। (जिससे कोल्हू का चलना बन्द हो जाय, और मेरा मौजी प्रियतम यहाँ आकर दर्शन दे।)

रे बैल, मैंने तुम्हारे लिए सरसो की खरी और बिनौला रख छोडे हैं, और प्रियतम के लिए जोबन को पाल-पोस कर बडा किया हैं।

रे निर्दयी प्रियतम, तुम्हारा कोल्हू टूट जाय, उसकी मशीन बन्द हो जाय, और ईंख का रस इधर-उधर बह कर बरबाद हो जाय।

(१६)

जनकपुर रगमहल होरी
खेलथि दगरथलाल
लय पिचकारी राम लखन दोउ
भरि मुख मारत गुलाव
रगमहल विच जनकपुर
होरी खेलथि दशरथलाल

जनकपुर रगमहल में राम-लक्ष्मण—दोनों बन्धु होली खेल रहे हैं। गुलाव जल से पिचकारी भर-भर कर वाराङ्गनाओं को शरावोर कर देते हैं।

जनकपुर रगमहल में राम-लक्ष्मण—दोनो भाई होली खेल रहे हैं।

चैतावर

दतख़-बेल (Aristolochia) की पंखडी में जिस तरह फनगे कैद हो जाते हैं, और लाख प्रयास करने के बावजूद दलचक्र की नलिका से शीघ्र मुक्त नहीं होते उसी तरह 'चैतावर' गीत-शैली की रसीली स्वर-लहरी श्रोताओं के मन को पहरों तक डिगने नहीं देती। चैत के महीने में ये एक कठ से दूसरे कठ में रूई से रोयेंवाले सेमल-पुख-पत्र की भाँति दल-के-दल उड़ते फिरते हैं। वसंत ऋतु की मस्ती, और रंगीन भावनाओ का अनोखा सौन्दर्य इस गीत-शैली की अभिव्यक्ति में ताने-बाने का काम करते है। इनके छोटे-छोटे परिचित शब्दो में गजब का माधुर्य्य भरा है।

इस शैली के कुछ लोकप्रिय नमूने का मुलाहिजा कीजिये—

(१)

चैत बीति जयतइ हो रामा
तब पिया की करे अयतइ
अमुआ मोजर गेल
फरि गेल टिकोरवा
डारे-पाते भेल मतवलवा हो रामा
चैत बीति जयतइ हो रामा
तब पिया की करे अयतइ

ओ राम, जब चैत बीत जायगा, तो मेरे प्रियतम क्या करने आयेंगे? आम में बौर लग गये। बौर में टिकोले निकल आये, और टहनी-टहनी रस में मतवाली होकर झूमने लगी।

ओ राम, जब चैत बीत जायगा, तो मेरे प्रियतम क्या करने आयेंगे?

(२)

कोयली बोलल हमरी अटरिया
सूतल पिया मोर जागल रामा
आन दिन वोले कोइली साँझ भिनुसरवा
आज कोना वोले आधीरतिया
सूतल वालम मोरा जागल कोयलिया

हमारी अटारी पर कोयल कूक रही है। ओ राम, उसने मेरे सोये हुए वालम को जगा दिया।

रे कोयल, और दिन तो तुम सुवह-शाम कूका करती थी, लेकिन आज इस आधी रात के समय क्यूं कूक रही हो ?

रे कोयल, तुमने मेरे सोये हुए वालम को जगा दिया।

(३)

वाईं आँख मोरा फरके हे ननदी
पिया आजु अयताह
कतनो सवारी माथे क वेनी
वार-वार सखि खसके हे ननदी
पिया आजु अयताह
खुलि-खुलि जाय वन्द अँगिया के
सिर क सारी सरके हे ननदी
पिया आजु अयताह

मेरी वाईं आँख फडक रही है, री ननद ! आज मेरे प्रियतम आयेंगे।

मै कितना ही सिर की गूंथी हुई चोटी सँवारती हूँ, री ननद ! लेकिन वह वार-वार खिसक जाती है। आज मेरे प्रियतम आयेंगे।

मेरी अंगिया के वन्द रह-रहकर खुल जाते है, और सिर की साडी सरक जाती है, री ननद ! आज मेरे प्रियतम आयेंगे।

(४)

नइ भेजे पतिया
आयल चैत उतपतिया हे रामा
नइ भेजे पतिया
विरही कोयलिया शब्द सुनावे
कल न पड़य अब रनिया हे रामा
नइ भेजे पतिया
बेली-चमेली फूले बगिया मे
जोवना फुलल मोरा अँगिया हे रामा
नइ भेजे पतिया

उत्पाती (शरारती) चैत आया, लेकिन मेरे (प्रवासी) प्रियतम ने ख़त नहीं भेजे।

विरही कोयल कूक रही है। हे सखी, जिसे सुन कर मुझे रात में नींद नहीं आती।

मेरे प्रियतम ने ख़त नहीं भेजे !

बाग़ में बेला और चमेली चिटख गई, और हे सखी, मेरे शरीर में जोवन भी खिल गया !

हाय ! मेरे प्रियतम ने ख़त नहीं भेजे।

(५)

भोला बाबा हे डमरू बजावे रामा
कि भोला बाबा हे
भूत पिचास सग सब खेले
ताडव नाच दिखावे हे रामा
सग अर्धंग मातु पारवती
गले मुडमाल लगावे रामा
शीश चन्द्र, श्रीगग विराजे
साँप, विच्छू लटकावे रामा

भोला बाबा डमरू बजाते हैं—ओ राम, साथ में भूत और पिशाच क्रीडा कर रहे हैं, और वह स्वय ताडव नृत्य करते हैं।

बगल में अर्धांङ्गिनी माँ पार्वती हैं। गले में मुडमाल सुशोभित है। ललाट पर चन्द्रमा है। जूडे में गगाजी विराजमान हैं, और उनमें सर्प तथा बिच्छू लटकते हैं;

(६)

मुरली बजावे रामा कि मुरली वाला हे
मुरली वजावे रास रचावे
रहि-रहि जिया घवरावे रामा
मुरलि फुंकि-फुंकि सखियन बोलावे
रग रस नाच नचावे रामा

मुरलीवाले श्रीकृष्ण मुरली बजा रहे हैं।

हे सखी, वह कभी मुरली बजाते हैं। कभी रास-क्रीडा करते हैं जिसे देख कर मेरा जी रह-रह कर घबडा उठता है।

मुरली फूंक-फूंक कर सखियो को बुला रहे हैं, और प्रेमपूर्वक रास-नृत्य करते हैं।

(७)

राधे सगवा हे
नाचत कन्धैया रामा
काधे क मुख मुरली विराजे
राधे क चुंदरिया रामा
काधे क शिर मुकुट विराजे
राधे क सिर वेनिया रामा
काधे क पीताम्वर शोभइन्हि
राधे क ओढनियाँ रामा

राधा के साथ श्रीकृष्ण नृत्य कर रहे हैं—ओ राम!

श्रीकृष्ण के होंठो के बीच मुरली है, और राधा की कमर में चुंदरी।

श्रीकृष्ण के शिर पर मुकुट है, राधा के शिर पर चोटी।
श्रीकृष्ण के शरीर में पीताम्बर है, और राधा के शरीर में ओढनी।

(८)

रतिया के देखलौं सपनवाँ रामा
कि प्रभु मोरा आयल
मोहि विरहिन कैं वान सम लागय
पपिहा क निठुर वयनमा रामा
खान-पान मोहि किछु ने भावय
न भावय सुख क सयनमा रामा
आप जाय कुब्जा रस वस भेल
छन नहि मोहि चयनमा रामा

रात को स्वप्न में देखा कि मेरे प्रियतम आये हैं।
मुझ विरहिणी को पपीहा की निठुर बोलीतीर की तरह लगती है।
खाना-पीना कुछ नहीं भाता। प्रेम की सेज भी नहीं भाती—ओ राम!
श्रीकृष्ण स्वय तो कुब्जा के प्रेम-पाश में बँध गये, और यहाँ मुझे क्षण-भर भी चैन नहीं मिलता।

(९)

नित प्रति बसिया बजावे हे रामा
कि मोहन रसिया
मधु-मधु तान मधुर सुरवा में
सुनि-सुनि जिया तरसावे हे रामा
पीताम्बर की कछनी काछे
गले वैजन्ती सोहावे हे रामा
बशी बजावे धेनु चरावे
गोपियन वन में बोलावे हे रामा

रसिक श्रीकृष्ण नित्य वशी बजाते हैं—ओ राम!
मधुर सुर में उनकी सगीतमय मीठी तान सुनकर जी तरसने लगता है।

उनकी कमर में पीताम्बर की कछनी है, और गले में वैजयन्ती का हार सुशोभित है।

हे सखी, वह वशी बजाते हैं। गाय चराते हैं, और मनोरंजन के लिए गोपागनाओं को वन में बुला ले जाते हैं।

(१०)

आधी-आधी रतिया हो रामा
बोलइ छइ पहरुआ
अब ने जायब तोहिं पास
बैगन तोड़े गेलौं ओहि बैगनवरिया
गड़ि गेल छतिया में कॉटा हो रामा
के मोरा छतिया क कँटवा निकालत
के मोरा दरद हरि लेत
देओरा मोरा छतिया क कँटवा निकालत
सैंइया दरद हरि लेत हो रामा

आधी-आधी रात को पहरू बोला करता है—ओ प्रियतम ! अब तुम्हारे पास नहीं आऊँगी।

बैंगन तोड़ने के लिए मै बैगनबाड़ी में गई। वहा छाती में कॉटा गड गया—ओ प्रियतम !

कौन मेरी छाती के कांटा निकालेगा ? और कौन मेरी छाती की पीड़ा हरेगा ?

देवर मेरी छाती के कांटा निकालेगा, और मेरा प्रियतम मेरी छाती की पीड़ा हरेगा।

आधी-आधी रात को पहरू ठनका करता है—ओ प्रियतम ! अब तुम्हारे पास नहीं आऊँगी।

(११)

चलु सखिया हे मलिया के बगवा रामा
कि चलु सखिया हे

डाला भरि लोढवौं चँगेरि भरि लोढवौं
कि भरवौं खोंइछवा रामा
कि चलु सखिया हे
फुलवा लोढि-लोढि हरवा गुँथएवौं
पिया क गरवा पेन्हएवौं
रात होत पिया घरवा में अयताह
सेजिया झारि गला लपटयताह रामा
कि चलु सखिया हे

हे सखी, माली के बगीचे में चलो ? मैं वहां डाला भर-भर कर फूल लोढूंगी, और खोंछ भर लूंगी।

फूल लोढ-लोढ कर हार गूंथूंगी, और प्रियतम के गले में पहनाऊँगी। रात होते ही मेरे प्रियतम घर आयेंगे। मैं सेज झाड कर उन्हें गले से लिपटाऊँगी।

हे सखी, माली के बगीचे में चलो।

(१२)

एहि रे ठँइया—एहि ठँइया
झुलनी हेरानी रामा
घरवा में खोजलों, दुअरा में खोजलों
खोजि अयलौं सँइया क सेजरिया
कि एहि रे ठँइया

हाय राम ! इसी जगह मेरी झूलनी भूल गई।

घर में उसकी खोज की। दरवाजे पर खोजा, और प्रियतम की सेज पर भी खोज-ढूंढ़ कर नाउम्मीद हो गई।

हाय राम ! इसी जगह मेरी झूलनी भूल गई।

(१३)

चइत मास जोवना फुलायल हो रामा
(कि) सइयाँ नहि आयल

सइयाँ नहि आयल चइत मास आयल
रहि-रहि जिया घबरायल हो रामा
बेली फुलायल चम्पा फुलायल
सब वन फुलवा फुलायल हो रामा
अमवा फुलायल, महुआ फुलायल
मलिया क बगिया हो रामा
(कि) सइया नहि आयल
विरही कोयलिया शब्द सुनावय
बिरहिनी अँखिया ने निदिया हो रामा
रहितथि पिअवा गरवा लगइतथि
आधि-आधि रतिया हो रामा
(कि) सइयाँ नहि आयल

चैत में जोबन-रूपी फूल खिल गये। किंतु, प्रियतम नहीं आये।

प्रियतम नहीं आये, और चैत आ गया। रह-रह कर जी घबडा उठता है—ओ राम!

वेली खिल गई। चम्पा खिल गया। वन-उपवन में रंग-विरंग के फूल खिल गये।

आम में बौर लग गये। माली के बाग में महुआ खिल गया। किन्तु, प्रियतम नहीं आये।

कोयल कूक रही है। उसकी काकली सुन कर मुझ विरहिणी की आंखों में नींद कहां?

प्रियतम होते तो इस आधी रात के समय गले लगा लेते।

हाय, चैत आ गया, और प्रियतम नहीं आये।

(१४)

वहत वयरिया हो रामा
(कि) धीमी - धीमी रे
झिर-झिर झिर-झिर पवन वहय
अँखिया झिप - झिप जाय
बिन पाहुन छतिया फटय
सेजिया मोहि न सोहाय
(कि) धीमी - धीमी रे

पवन झकोरा मधुर मधुर
कथिला वहि दुख दीऊ
जाऊ बुझाऊ पाहुना
धनिक विरह सुधि लीऊ
(कि) धीमी - धीमी रे
वहत वयरिया हो रामा।

धीमी-धीमी बयार वह रही है।

हवा झिहिर-झिहिर वह रही है। नींद की खुमारी से आँखों की पलकें बन्द हो जाती हैं। प्रियतम के विरह में छाती कड़क उठती है, और सेज नहीं भाती।

हवा मन्द-मन्द बह रही है।

री हवा, तू अपने मन्द-मन्द झकोरे से दुख देती है ? जा कर मेरे प्रियतम से कह दो कि वह अपनी प्रिया के विरह की खबर ले।

हवा धीमी-धीमी वह रही है।

मलार

'तिरहुति' और अन्य अनेक गीत-शैलियो के रहते हुए भी 'मलार' के बिना मिथिला के लोक-सगीत की दुनियाँ उजाड़ थी। ससार के प्राचीनतम ग्रन्थ ऋग्वेद में पर्जन्य के स्तुति-गान में एक जगह कहा गया है—'हे पर्जन्य, तुम्हारे प्रसाद से ही नाना विध ओषधियां विश्व-विचित्र-रूप हो उठी हैं। हमारे जीवन में भी तुम नित्य विचित्र कल्याण-दान करो। जब तक तुम नहीं आये थे, तब तक सारी पृथिवी मरी हुई, सूखी हुई, सपाट थी। तुम्हारे आते ही सब कुछ नाना रस, नाना भावो से भर उठे।' मिथिला की ग्रामीण कविता के क्षेत्र में 'मलार' का उद्भव वैदिक पर्जन्य के आगमन की भाँति ही सुन्दर, सुशीतल और कल्याणकारी है।

'मलार' का अन्तरग बिल्लौरी काँच की तरह रगीन है। इनमें हमें जीवन के प्यार, मिलन, आकर्षण, उसके मधुमय स्वप्न और सुनहले रग के आभास दृष्टिगोचर होते हैं। इसके तरानो में मानव-हृदय का प्रेम कवि की अनुभूति की आग में तप कर कुन्दन बन गया है, और विरह की जड हृदय के पाताल में इतनी दूर चली गई है कि सूर की राधा की निम्न उक्ति स्मरण हो आती है—

मेरो नैना विरह की बेलि बई
सींचत नीर नैन के सजनी
मूल पताल गई

लेकिन 'मलार' का आतरिक सौन्दर्य सुन्दर लय और भावाभिव्यजना के पूरे उतार-चढाव के साथ पढ़े जाने पर ही व्यक्त होता है। क़ागज़ पर छपी हुई इसकी काली पक्तियो के पढ लेने मात्र से ही इसके रूप-विधान और

रमणीयता का अन्दाज़ नहीं मिलता। स्व० कवीन्द्र श्रीरवीन्द्रनाथ के मित्र प्रसिद्ध रहस्यवादी कवि डब्ल्यू० बी० यीट्स ने लिखा है—

I have always known that there was something I disliked about singing, and I naturally dislike print and paper, but now at last I understand why, for I have found something better I have just heard a poem spoken with so delicate a sense of its rythm, withso perfect a respect for its meaning, that if I were a wise man and could persuade a few people to learn the art I would never open a book of verses again

Ideas of Good and Evil

अर्थात् गाने में कुछ ऐसी बात होती है, जो मुझे सदा से ही भद्दी लगती आई है, और कागज़ पर छपी हुई कोई कविता मुझे अच्छी नहीं लगती। इसका कारण यह है कि मैंने एक शख़्स को ऐसी सुन्दर लय और भावों के पूरे उतार-चढाव के साथ कविता-पाठ करते सुना कि यदि मेरे कथनानुसार लोग कविता पढने की कला जान लें, तो मैं कभी कोई काव्य-पुस्तक पढने के लिए नहीं खोलूं।

जिन लोगों ने मैथिल रमणियों के कल-कंठ से 'मलार' का गान सुना है, उन्हें भी यीट्स साहब की तरह किसी काव्य-पुस्तक को खोल कर पढने के लिए कष्ट गवारा न करना पडेगा। छन्द और लय की दृष्टि से भी लोक-साहित्य के इतिहास में 'मलार' का स्थान बेजोड रहेगा। छन्द और लय के साथ-साथ इसमें संगीत का पुट तो इसकी रमणीयता को चारचाँद लगा देता है।

"मलार" पावस ऋतु में स्त्री-पुरुष दोनो गाते हैं। लेकिन दोनों के गाने के ढग अलाहिदा-अलाहिदा है। औरतें इन्हे गाने के वक़्त किसी साज-बाज की मदद नहीं लेतीं। हिंडोले पर बैठ कर वे सम्मिलित स्वरो में गाती हैं। पुरुष साज-बाज की मदद से गाते हैं, और जब वे पंचम में पूरी आवाज़

के साथ राग अलापते हैं, तब कभी-कभी तबले और मृदंग (थाप की चोट से) कड़क कर टूक-टूक हो जाते हैं।

इस प्रांजल गीत-शैली के कुछ नमूने देखिये—

(१)

चहुँ दिशि घेरै घन करिया हे आलि,
झहरि-झहर बूंद खसए पलग पर
भिजत कुसुम रग सड़िया
चुवत भवन सौं लागै कठिन-मन
पिय बिनु शून्य अटरिया
पथ भेल पिच्छिर पिया भेल चचर
चाहिय कुसुम चुनरिया
'सुकविदास' प्रभु तोहरे दरस कै
हरि के चरन चित लइया

हे सखी, चारों ओर सघन काली घटा उमड़ आई। बूँदें झहर-झहर कर पलग पर गिर रही हैं, और मेरी सुन्दर कुसुम रग की चुदरी भींग रही है।

मेरी यह (छोटी-सी फूस की झोपडी) चू रही है, जो बडी दुखदायक प्रतीत होती है।

प्रीतम के बिना आज मेरा ससार सूना है। कीचड़ से राह-बाट पिच्छिल हो गए, और मेरे प्रियतम प्रवासी हैं।

हे सखी, मुझे कुसुम रग की चुदरी चाहिए।

कवि कहता है—हे नायिके, तुम अपने प्रवासी प्रियतम के दर्शन के लिए परमात्मा के चरण का चिन्तन करो।

(२)

आजु मोहन कै आँगन सखि हे
बडि-बडि बूंद गहागहि बरिसै
धरती क बूंद सुहावन

जेहो मुनरी छल आँगुरि कसि-कसि
सेहो भेल हाथ क कँगन
हम सों प्रीति तेजल मन मोहन
कुब्जा जीव कै वैरन

हे सखी आज मोहन के आँगन में बडी-बडी बूँदें गिर रही हैं। अहा! पृथिवी पर आसमान से गिरती हुई ये बूँदें कितनी सुहावनी लगती हैं।

हे सखी, मै (प्रियतम के विरह में इस क़दर सूख गई हूँ कि) जो अँगूठी (कभी) मेरी उगली में मुश्किल से आती थी, वह आज मेरी कलाई का कंकण हो गई है।

हे सखी, (कुब्जा के प्रेम-पाश में उलझ कर) मोहन ने मुझसे प्रीति छुड़ा ली। हाय! कुब्जा मेरे प्राण की वैरिन हो गई।

(३)

कारि-कारि बदरा उमडि गगन माँझे
लहरि बहे पुरवइया
मत बदरा बूँद-बूँद झहरह
धराए पलग पर भिजत—
कुसुम रंग सडिया
रे बदरा मति बरसु एहि देशवा
रे बदरा बरिसु ललन जी के देशवा
बदरा हुनके भिजाव सिर-टोपिया रे बदरा
एक त वैरिन भेल सासु रे ननदिया
दोसर वैरिन तुहुँ भेले रे बदरा
मति बरसु एहि देशवा
बदरा कहमे सुखएबो में लालि चुनरिया
कहमे सुखएबो नागिन केशिया रे बदरा
मति बरसु एहि देशवा

आकाश में काले-काले बादल उमड रहे हैं। पूर्वी हवा लहरा रही है।

रे बादल, बूंद-बूंद मत बरसो। पलग पर रक्खी हुई मेरी कुसुम रग की साडी भींग जायगी।

रे बादल, इस देश में मत बरसो। परदेश में बरसो, जहाँ मेरे प्रियतम रहते हैं। उनके सिर की टोपी भिगो दो।

रे बादल, एक तो मेरी सास और ननद बैरिन हैं। दूसरे तुम भी शत्रु हो रहे हो। कृपा कर इस देश में मत बरसो।

रे बादल, मै अपने नागिन-से बल खाते काले बाल और अपनी यह लाल चुँदरी कहाँ सुखाऊँगी? रे बादल, इस देश में मत बरसो। परदेश में बरसो, जहाँ मेरे प्रियतम रहते है।

(४)

परवश परल कँधैया रे दैया
आएल जेठ हेठ भेल वर्षा
मदन दहन तन सहिया रे दैया
नित दिन छन-छन हरि मन जायन
नयनों सुरति लगैया रे दैया
नीद पवन भेल पहुँ पर चित गेल
चित लेल मदन गोपाल। रे दैया
'मुकविदास' पहुँ सुछवि दरश कै
हरि क चरन चित लैया रे दैया

नायिका का पति परदेश चला गया है। इधर पावस ऋतु का आरम्भ हो गया है। विरहिणी के प्राण छटपटा रहे हैं। जिस समय पुरानी मधुर स्मृतियाँ सामने आती हैं, तो विरह की यन्त्रणा और निराशा की थपेडों से घबडा कर वह कहती है—हाय, मेरा कन्हैया किसी के नेह-जाल में उलझ गया। जेठ आया। वर्षा ऋतु निकट आ गई। कामदेव के वाणों से उत्पन्न ज्वाला शरीर को जला रही है, और मेरा अनुरागी मन प्रतिक्षण अपने निर्मोही मोहन की याद में तडप रहा है। उनके दर्शन को आँखें तरसती है। नींद हवा बनकर उड गई है, और प्रियतम किसी नाजिनी के कूचे में रम रहे हैं। हाय, प्रियतम ने मेरा

मन हर लिया। 'सुकविदास' कहते हैं–हे नायिके, यदि तुम अपने प्रियतम से मिलना चाहती हो, तो परमात्मा के चरण का चिन्तन करो।

(५)

बड रे चतुर घटवरवा हे आली
दुरि सौ बजौलन्हि नाव चढौलन्हि
खेवि लए गेलाह मँझधरवा
नाव हिलौलन्हि मोहि डेरओलन्हि
कैलन्हि अजब खयलवा
अँचरा धएलन्हि मोहि झिकझोरलन्हि
तोरलन्हि गजमोती हरवा
'सुकविदास' कह तोहरे दरस कै
युग-युग जीवै घटवरवा

हे सखी, वह नाविक बड़ा धूर्त है। (मैं अपने विचारों में डूबी, दोनो लोकों से बेखबर) डगर पर जा रही थी कि उसने मुझे आवाज देकर बुलाया अपनी नौका पर बिठा लिया, और (चचल डाँडो से) खेकर बीच धारा में ले गया। इस पर भी सितम यह कि उसने नौका डुला दी, जिससे मेरा दिल सर्द हो गया उसने मेरा आँचल पकड़ लिया। और (नियम, धरम, शरम, सब को धता बतला कर) मुझे पकड़ कर मेरा अग-प्रत्यंग झकझोर डाला और मेरा मोती का हार तोड़ कर इधर-उधर बखेर दिया। 'सुकविदास' कहते हैं कि उस भोली-भाली नायिका का दर्शन करने के लिए वह नाविक युग-युग जीए।

(६)

कहु ने सगुन केर बतिया हे आली
चारि मास बरषा ऋतु गत भेल
विरह दगध भेल छतिया
आओन आओन हरि मोहि कहि गेल
कहिनो ने लिखै मोहि पतिया

'सुकविदास' कह तोहरे दरश बिन
कोना खेपब दिन-रतिया।

हे सखी,सगुन विचार कर कहो कि मेरे प्रियतम कब आयेंगे ? वर्षा ऋतु के चारों महीने बीत गये, और विरह की आग से मेरी छाती दग्ध हो गई। मेरे प्रियतम ने वायदा किया था कि मैं आऊँगा। लेकिन उन्होंने एक कागज का टुकड़ा भी नहीं भेजा। नायिका प्रेमातिरेक से विचलित होकर (कवि के शब्दों में) कह रही है—हे प्रियतम, मैं तुम्हारे बिना इन रातों को कैसे काटूं?

(७)

बिसारि गेल पहुँ मोरा हे आली।
प्रेम पौध छल हुनिक लगाओल
विरह उठन तन जारा हे आली।
हमर वयस भेल सोलहक लगभग
बइसि रहल कित ओरा हे आली।
कहि गेल माघ बीति गेल फागुन
तैओ ने दरश देल चोरा हे आली।
मगनिराम' कवि मन नहि लागय
शूल बढल उर मोरा हे आली।

हे सखी, मेरे सजन मुझे भूल गये। उन्होंने प्रेम का जो पौधा लगाया था, वह अकाल ही मुरझाना चाहता है। शरीर में विरह की लपटें जोरों से धधक रही हैं। हे सखी, मेरी उम्र करीब सोलह वर्ष की है, और मेरे प्रियतम इश्क़ के कूचे से निकल कर प्रवासी हो रहे हैं। उन्होंने माघ में आने का वायदा किया था, लेकिन फागुन भी बीत गया और अभी तक उस चित्त-चोर ने दर्शन नहीं दिये। कवि 'मगनीराम' कहते हैं कि प्रियतम की गैर-हाजिरी में नायिका का दिल घुट रहा है, और उसके हृदय में शूल पैदा हो गई है।

(८)

लिखि आएल योगक पाँती हे मधुकर
जब सौं श्याम गेल मधुपुर मे
निशि दिन कडकए छाती हे मधुकर
निशि नहिं चैन भवन नहिं भावन
कखन देखब भरि आँखी हे मधुकर
सुन्दर श्याम युगल चरणागत
कुवरि हरल हरि माती हे मधुकर

हे मधुकर, योग की पाँती आई है।

जब से प्यारे कृष्ण मधुपुर चले गये तब से दिन-रात छाती कड़का करती है।

रात में चैन नहीं मिलता। भवन नहीं भाता। जाने कब उन्हें आँखें भर कर देखूँगी। शायद कुब्जा ने उनकी मति बौरा दी। हम प्यारे श्रीकृष्ण के दोनो चरणों की शरण जायँ।

हे मधुकर, योग की पाँती आई है।

(९)

श्याम निकट नै जाएब हे ऊधो
बरषा बादरि बुँद चुअइय
जमुना जाय ने नहाएब हे ऊधो
तोसिक नैन फनेल बनइल
मे नहि अंग लगाएब हे ऊधो
मधुपुर जाएब कमन मँगाएब
नख मैं पत्र लिखाएब हे ऊधो
हरि मधुपुर गेल कुवरिक बस भेल
हम सखि भसम लगाएब हे ऊधो
'सुकविदास' प्रभु तोहर दरश के
हरिक चरण चित लाएब हे ऊधो

हे ऊधो, मैं श्याम के निकट नहीं जाऊँगी। आँखो से पावसकालीन बादल की तरह आँसुओ की झड़ी लग गई है। अब यमुना में पैठ कर स्नान क्यूं करूँ? आँखो के सजल बादल नहलाने के लिए पर्याप्त है। तीसी के तेल और फुलेल बनते हैं। उन्हें भी अग में नहीं लगाऊँगी। मधुपुर जाऊँगी। कमल के पत्ते लाऊँगी। उस पर नख की क़लम से पाँती लिखूंगी। हे सखी, हरि मधुपुर चले गये। कुब्जा की स्नेह-डोर में उलझ गये। मैं भस्म रमा कर जोगन हो जाऊँगी।

'सुकविदास' कहते है—हे व्रजाङ्गने, श्याम के दर्शन के लिए उनके चरण में चित्त लगाओ।

(१०)

बरिसन चाह बदरवा हे ऊधो
खन बरिसय खन गरिजय
खन दामिन दमकय खन खन बहय बयरवा
झिंगुर दादुर शोर करइअ
विरह दग्ध भेल छतिया हे ऊधो
चारि मास हम आस लगाओल
घर नहि आयल पियरवा हे ऊधो
'सुकविदास' प्रभु तोहर दरश के
घुरि-फिरि करत निहोरवा हे ऊधो

हे ऊधो, बादल बरसना ही चाहता है। कभी बरसता है। कभी गरजता है। कभी बिजली कौंधती है, और कभी बयार लहर-लहर कर बहती है। झींगुर और मेढक शोर मचाते हैं, और मेरी छाती विरह की ज्वाला से लहर उठती है। चार महीने—आषाढ, सावन, भादो और आश्विन मैंने आशा लगा रक्खी, किन्तु मेरे प्यारे कृष्ण वापिस नहीं आये। इस प्रकार व्रजाङ्गनायें कृष्ण के दर्शन के लिए बारम्बार विकल हो रही है।

(११)

मोहन मुरली वजैया रे दैया
चैत वैशाख के धूप लगइअ
शीतल विअनि डोलैया रे दैया
जेठ अपाढक वुन्द पडइअ
भीजत सुरुख चुन्दरिया रे दैया
साओन भादों केर उमडल नदिया
तैयो ने खेवय कन्हैया रे दैया
आसिन कातिक केर पर्व्व लगइअ
सखि सभ गगा नहैया रे दैया
अगहन पूस केर जाड गिरइअ
के दिअ लाल तुरैया रे दैया
माघ फागुन केरि रग वनइअ
सखि सभ धूम मचैया रे दैया

कृष्ण ने बांसुरी फूंकी।

हे सखी, चैत, वैशाख की धूप तीखी होती है। जरा शीतल पखे तो डुलाओ।

हे सखी, जेठ, आषाढ में बूंदें गिरने लगती है। मेरी सुर्ख रग की चुदरी भीग जायगी।

हे सखी, सावन, भादों में नदी और तालाव उमड पडे किन्तु, मेरे केवट कृष्ण नाव खेने नहीं आये।

आश्विन, कार्त्तिक में पर्व लगता है। हमारी सभी सखियां गगा नहाती हैं।

अगहन, पौष में जाडा पडता है। हे सखी, लाल रजाई लाकर मुझे कौन दे ?

माघ, फागुन में होली की घूम है। सभी सखियां रग-क्रीड़ा कर रही हैं।

(१२)

ऊधो ककर नारि हम बाला।
हरि मधुपुर गेल परम कठिन भेल
दय गेल विरहक भाला।
बड अनुचित भेल सुपुरुष तेजि गेल
तेजि गेल मदन गोपाला।
नींद हरिन भल तहुँ पर चिन गेल
चिन लेल नन्दक लाला।
तरुण वयस भेल पिय परदेश गेल
ओतहि रहल नन्दलाला।
हरिसों विनति करु गोरी सें कवि कहु
तुअ बिनु कमल विहाला

हे ऊधो, मैं बाला किसकी नारी हूँ ?

कृष्ण मधुपुर चले गये। और मेरे दिल में विरह की बर्छी चुभो गये। यह मेरे लिए एक कठिन समस्या हो गई।

यह बडा अनुचित हुआ कि मेरे प्रियतम कृष्ण मेरा परित्याग कर प्रवासी हो गये। नींद काफूर हो गई। वह जाने किस नाज़िनी के कूचे में रम गये ? हाय ! उनने मेरा मन हर लिया।

हे ऊधो, मैं तरुणी हो चली। प्रियतम परदेश चले गये, और वहीं रम गये।

कवि कहता है—हे गोरी, तुम अपने मधुकर श्रीकृष्ण से आरज़ू-मिन्नत करो कि तुम्हारी गैर-हाज़िरी में तुम्हारा कमल खिन्न है।

(१३)

सखि रे बिसरल मोहि मुरारि।
प्रथम असाढ़ तेजल मनमोहन
कोना मेघक अन्हियारी

रिमझिम रिमझिम सावन वरिसय
सोचथि नार अटारी
मदन वूंद मेघ वरिसय भादव
सव गोपिगन जिव हारी

हे सखी, मेरे कृष्ण मुझे भूल गये। पावस ऋतु—आषाढ़ में ही श्रीकृष्ण ने मेरा परित्याग कर दिया। मैं यह अँधेरी रात कैसे काटूंगी? श्रावण में वूंदें रिमझिम रिमझिम वरस रहीं हैं। स्त्रियां अपनी-अपनी अटारी पर वियोगाकुल हो रही हैं। भादों में वादल काम की वूंदें वरसाने लगे। गोपियों की उम्मीदों पर पानी फिर गया।

(१४)

सखि रे तेजल कुजविहारी
आएल अषाढ विरह मदमातल
नहि देखिय गिरिधारी
आव केहि सग झूलव हिंडोला
सावोन तेजल मुरारी
भादव यामिनि यम सम वीतल
दिवस लागय अन्हियारी
आसन विनति करय कवि 'दुखरन'
गोपिअहि भेंटल मुरारी

हे सखी, मनमोहन ने मेरा परित्याग कर दिया। विरह की मस्ती लिए आषाढ आ गया। किन्तु, श्रीकृष्ण को कहीं नहीं देखती? अव किसके साथ हिंडोले में वैठ कर झूले झूलूंगी। श्रावण में श्रीकृष्ण ने मेरा साथ छोड़ दिया। भादों की भयावनी रात पहाड-सी लगती है। दिन में भी घुप मालूम देती है। कवि 'दुखरन' कहते हैं;—आश्विन में गोपियों को श्रीकृष्ण मिल गये।

(१५)

सखि रे वहुरि कान्ह नहि आए
तन मन विलखय सव गोपी जन केर

कुब्जा कान्ह लोभाए
मधुपुर जाय रहल मनमोहन
गोकुल नगर विहाए
गोकुल विकल पडय नरनारी
कुबरी हरि मन भाए
रास विलास समै हरि विसरल
गिरिधारी गुन गाए

हे सखी, श्रीकृष्ण वापिस नही आये। गोपिकाएँ शिर धुन-धुन कर विलख रही हैं। कुब्जा ने श्रीकृष्ण को वशीभूत कर लिया। मनमोहन मधुपुर में छा गये, और गोकुल का विस्मरण कर दिया। गोकुल के स्त्री-पुरुष सब व्याकुल हो रहे है, और कृष्ण कुब्जा के हो गये। उनने रास और क्रीडा-कौतुक सब भुला दिया। हे सखी, अब हम उनके गुण का ही कीर्त्तन करें।

(१६)

ऊधव पाँती मोहि न सुहाती
तेजि व्रजवाला गेल हरि मधुपुर
शरद समैया क राती
हम सौ वैर प्रीति कुब्जा सौं
श्याम भेल मघाती
जा धरि मदन गोपाल नहि आओत
विरह दगध हैत छाती
'सुजनदास' प्रभु तोहर दरश विनु
पाँती मोहि न सोहाती

हे ऊधो, मुझे पाँती नहीं भाती। व्रजाङ्गनाओ का परित्याग कर श्रीकृष्ण मधुपुर चले गये। शरद ऋतु की रात है। प्यारे श्रीकृष्ण ने हमसे वैर करके कुब्जा से नेह जोड लिया।

हाय! वह कितने निष्ठुर है?

यदि वह् वापिस नहीं आये तो मेरी छाती विरह् की आग में दग्ध हो उठेगी।

कवि 'सुजनदास' कहते हैं—हे श्याम, तुम्हारे दर्शन के विना मुझे पांती नहीं भाती।

(१७)

कहु ने सिया जी क बतिया हे लछुमन
भवन छोड़अलों वनहि पठअलों
विरह दगध भेल छतिया
सगरि राति हम बऽसि गमअलौ
नीद गेल हुनि अँखिया
भाय छथि भवन भाउज छथि वन-वन
केहन कठिन भेल छतिया हे लछुमन

हे लक्ष्मण, सीता के हालात कहो। वह निर्वासित होकर विजन वन में चली गई, और विरह की आग से छाती जल उठी। सारी रात हमने बैठ कर विताई है। नींद काफूर हो गई है। भाई यहां है। भावज वन में। कितना कठोर हृदय है उनका! हे लक्ष्मण, सीता के हालात कहो?

चांचर

'चांचर' शब्द का अर्थ है परती छोड़ी हुई जमीन। पावस ऋतु में खेत रोपते हुए कमकर अथवा श्रमिक दो दलों में बँट कर 'चांचर' गाते हैं। यह प्रश्नोत्तर के रूप में गायी जाती है। एक दल सम्मिलित अथवा अर्ध-मिश्रित स्वर में प्रश्न करता है। दूसरा उसका समीचीन उत्तर देता है। ऊपर से बारिश होती रहती है, और नीचे वे घुटने-भर जल में कमर झुकाये परती छोड़ी हुई जमीन को धान से आबाद करते जाते हैं। गाने का सिल-सिला बीच-बीच में इस जोशो-खरोश के साथ चलता है कि आकाश का पर्दा फटने लगता है।

'चांचर' शैली के शत-प्रति-शत गीत अपने रचयिताओं के नाम से शून्य हैं। यह श्रमिक, पददलित, दीन, शोषित और सर्वहारा प्राणियों का प्रिय गीत है। क्षुधा-ग्रस्त घिनौने वातावरण के बीच जिन्दगी की ताजगी और हरापन को बरक़रार रखना 'चांचर'—रचयिताओं की पैनी सूझ का अभिनन्दनीय सबूत है, और गरीबी के दामन में सन्तोष के चमकीले गोटे लगाना इनकी कला-परम्परा का केन्द्र-बिन्दु। थकान और ठोकर से ऊब कर हवा के डैनों के सहारे उडना इनके अपढ़ कलाकारों को गवारा नहीं होता। डरावनी गहराइयों को नापनेवाली उनकी कला व्यथित के अन्दर-बाहर के उस मुरदार घाव का इलाज ढूंढती है जिससे व्यक्तित्व चुटीला और लहूलुहान रहता है।

(१)

कोन मासे हरिअर ठूंठ पकरा
कोन मासे हरिअर वेनु गाय

कोन मासे हरिअर पातर तिरिया
कोन मासे गौन कैने जाय

चउत मासे हरिअर ठूंठ पकरा
भादो मासे हरिअर धेनु गाय
अगहन मासे हरिअर पातर तिरिया
फागुन मासे गौन कैने जाय

किस महीने में पाकर का ठूंठ गाछ हरा होता है ?
किस महीने में गाय हट्टी-कट्टी रहती है ?
किस महीने में पतली तरुणी मस्त हो जाती है ?
किस महीने में उसका द्विरागमन होता है ?
चैत में पाकर का ठूंठ गाछ हरा होता है।
भादो में गाय हट्टी-कट्टी रहती है।
अगहन में पतली तरुणी मस्त हो जाती है।
और फागुन में उसका द्विरागमन होता है।

(२)

कोन फूल फुलाइछइ कोठरिया
कोन फूल फुलाइछइ अकास
कोन फूल फुलाइछइ समुन्दर में
कोन फूल फुलाइछइ नेपाल

पान फूल फुलाइछइ कोठरिया
कमडलि फूल फुलाइछइ अकास
चूना फूल फुलाइछइ समुन्दर में
कय फूल फुलाइछइ नेपाल

कौन फूल कोठरी में खिलता है ? कौन फूल आसमान में खिलता है ? कौन फूल समुन्दर में खिलता है ? और कौन फूल नेपाल में खिलता है ?
पान का फूल कोठरी में खिलता है। सुपारी का फूल आसमान में

खिलता है, चूने का फूल समुन्दर में खिलता है, और कथ का फूल नेपाल में खिलता है।

(३)

कतय जे कृष्ण जी जनम लेल
कतय भेलइन छठिआर
कतय हुनि बसिया बजओलन्हि
ककरा सँ लेलन्हि महादान

मथुरा जे कृष्ण जी जनम लेल
गोकुला भेलइन छठिआर
वृन्दावन मे बसिया बजओलन्हि
राधा सँ लेलन्हि महादान

कहाँ श्रीकृष्ण ने जन्म लिया ?
कहाँ उनका छठिआर हुआ ?
कहाँ उन्होंने बाँसुरी बजायी ?
और किससे महादान लिया ?

मथुरा में श्रीकृष्ण ने जन्म लिया। गोकुल में उनका छठिआर हुआ। वृन्दावन में उन्होंने बाँसुरी बजायी ? और राधा से उन्होंने महादान लिया।

(४)

कतय सँ उड़लन्हि हनुमत वीर
कतय रोपलन्हि दुनु बाँह
ककरा जे हाथ क मुँदरिका
ककरा खोइछ पड़ि जाय

अयोध्या सँ उड़लन्हि हनुमत वीर
लंका रोपलन्हि दुनु बाँह
रामजी क हाथ के मुँदरिका
सीता क खोइछ पड़ि जाय

कहाँ से वीर हनुमान उड़े ? कहाँ दोनों बाँह रोप दी ? और किसके हाथ की अंगूठी किसकी खोंछ में जा गिरी ?

अयोध्या से वीर हनुमान उड़े, लंका में दोनों बाँह रोप दी और राम के हाथ की अँगूठी सीता की गोद में जा गिरी।

(५)

कारि-कारि भइसिया के वेचहु
किनहु धेनु जोरि गाय
दिन भर चरइहे कुश कतरा
साँझे दीहे खूँटवा चढाय

तोहरा सहित अनयन वेचवइ
किनवइ करेहा जोरि भइस
रात-भर चरयवइ कुश कतरा
भोरे देवइ खुँटवा चढाय

के तोरा कुटि पिसि देतऊ
के देतऊ रोटिया पकाय
के तोरा कोरा पइसि नुततऊ
के तोरा देतऊ जगाय

चेरिया त कुटि पिसि देतइ
माय देता रोटिया पकाय
लठिया त कोरा पइसि मुततइ
पडरू देता पसर जगाय

चेरिया त जयतऊ ससुररिया
अम्मा तेजतऊ परान
लठिया त टुटि फुटि जयतऊ
पडरू के लेतऊ चोराय

चेरिया के देवइ गोर बेरिया
अम्मा के अमृत पिलाय
बिट पइसि लाठी काटि लयवइ
पड़रू के सुतयवइ गोरथारि

पत्नी कहती है—रे प्रियतम, काली-काली भैंसों को बेंच कर गाय की एक अच्छी जोड़ी खरीद लो। उसे दिन-भर कुश-कतरा चराना, और साँझ होते-होते खूँटे पर चढ़ा देना।

पति ने कहा—हे गोरी, मैं तुम्हारे सहित अन्न-धन बेंच डालूँगा, और अच्छी नस्ल की गुजराती एक जोड़ी भैंस खरीदूँगा जिसके सींग ऐंठे हुए होंगे। उसे रात-भर कुश-कतरा चराऊँगा, और भोर होते-होते खूँटे पर चढ़ा दूँगा।

पत्नी कहती है—रे प्रियतम, कौन तुम्हें कूट-पीस कर देगी? कौन तेरे लिये रोटी पकायेगी? कौन तेरी गोदी में पैठ कर सोयेगी, और कौन पिछली पहर रात में तुम्हें पसर चराने के लिये जगा देगा?

पति ने कहा—हे गोरी, लौंडी मुझे कूट-पीस कर देगी। माँ मेरे लिए रोटी पकायेगी। जीवन-संगिनी लाठी मेरी गोद में पैठ कर सोयेगी, और पिछली पहर रात में पसर चराने के लिये मुझे पड़रा (भैंस का बच्चा) जगा देगा।

पत्नी कहती है—रे प्रियतम, लौंडी ससुराल चली जायेगी। तेरी माँ कुछ दिनों में गंगा लाभ करेगी। तेरी जीवन-संगिनी लाठी टूट-फूट जायेगी, और तुम्हारे पड़रे को चोर चुरा ले जायेगा।

पति ने कहा—हे गोरी, लौंडी के पैरों में बेड़ी डाल दूँगा। जिससे वह भाग न सके। माँ को अमृत पिला कर जिला दूँगा, बँसवारी में पैठ कर लाठी काट लाऊँगा, और पड़रे को पैताने सुलाऊँगा।

योग

इस शब्द का अर्थ योग-तत्त्व—मन को एकाग्र कर ब्रह्म में योग-द्वारा लीन कर लेना नहीं। इसका अर्थ है—प्रेम का तत्र-मत्र, स्त्रियोचित हाव-भाव।

माशूक की मेंहदी के लाल रग की तरह यह अपनी शोखी के कारण मशहूर है। सख्या में यद्यपि यह थोडा है, पर काव्य-पुरुष की गोद में पल कर यह बडा हुआ है। इसका वतन दरअसल तिरहुत है। सुमुखी तरुणियाँ इसकी थाप और लय पर कुर्बान जाती है। खास कर स्त्रियों में ही इसका चलन है। बेटी के विवाह के अवसर पर यह गाया जाता है। पूर्व-विद्यापति-काल में इसका जन्म हुआ। भाषा का जीर्ण चोला तितली के रग की भाँति बदलता गया। शब्द-शाखायें नवीन पत्ते, नवीन फूल से लदती गईं, मगर हृदय-जगत का अछूता चित्र बदस्तूर कायम रहा।

(१)

योग जुगुति हम जानल किनि आनल
नागर कैल अधीन सभक मन मानल
सत ओ अग जौं रूसताह फेरि बौंसताह
कहियो ने कुवचन कहनाह
चानन चरण पखारताह पैर धरताह
माय वहिन के तेजि हमर वय रहताह
चान सुरुज जकाँ उगताह उगि झपताह
जेहन मकराक डोरि जकाँ घुमि अओताह
भानुनाथ कवि गाओल योग लागल
गोरी उचित वर पाओल सभक मन मानल

किसी गर्वीली नायिका की उक्ति है—'मैं वशीकरण मन्त्र जानती हूँ। मैंने यह मन्त्र पुरस्कार देकर सिद्ध किया है। इसी मन्त्र के वल से मैंने अपने प्रियतम को वश में किया है।

मेरी इस मोहिनी विद्या के सभी कायल हैं। यदि मेरे प्रियतम कभी रूठेंगे, तो पुन मेरी वशीकरण-विद्या उन्हें वशीभूत कर लेगी। इस प्रकार मेरे प्रियतम मुझ पर कभी खफा नहीं होंगे।

उल्टे, वह चदन से मेरे चरण का प्रक्षालन करेंगे, और मेरी चरण-पूजा करेंगे।

जव मेरे मन्त्र का पूरा वेग होगा, उस समय वह अपनी माँ-वहन का भी 'परित्याग कर देंगे, और मेरे प्रेम-जाल में उलझ जायेंगे।

वे सूर्य और चन्द्रमा के समान प्रकाशित होंगे, और फिर छिप जायेंगे, लेकिन पुन' घूम-फिर कर मेरे ही चरणों में आयेंगे।

वे ठीक उसी प्रकार आयेंगे, जिस प्रकार मकडी के तार अपनी परिधि की परिक्रमा कर फिर अपने केन्द्र पर वापिस आ जाते हैं।

कवि कहता है—सचमुच नायिका की वशीकरण विद्या वडी वलवती है। नायिका को उसके अनुकूल प्रियतम मिले हैं, और उसकी मोहिनी विद्या के सभी कायल हैं।

(२)

हम योगिनि निरहुत के योग देवैन्ह लगाय
माता वहिन हम जोगिन (माइ) मैना यिकि जेठ वहिनि
ननिक-हुँमैं योग मीखल (माइ) चउदह भुवन हम हाँकल
इन्द्र हमर डर मानथि (माइ) विनु मेघ पानि वरिसावथि
हरिहर विहि सनकादिक के ने हमर डर मान जान त्रिभुवन
नयना हमर पढाओल (माइ) जगमोहिनि नाम
आरसि काजर पारल आँखि आँजल
ताहि आँजल दुइ आँखि पिआ अपनाओल

झमकि-झमकि हम नाचव पहुँ देखितन्हि
पागक पेंच उघारि हृदय विच रखितथि
भनहि विद्यापति गाओल फल पाओल
योग तोहर वड तेज सेज नय रहताह

हे सखी, मैं तिरहुत की जोगन हूँ। अपने प्रियतम को मोहन मन्त्र से मोह लूंगी।

मैं सातो बहन जोगन हूँ। मैना मेरी जेठ बहन है। उसीसे मैंने यह वशीकरण मंत्र सीखा है।

पृथिवी से ऊपर के सात भुवन और पृथिवी से नीचे के सात भुवन को मैंने अपने मन्त्र के वेग से हाँक डाला है।

मेरे डर से वज्रपाणि इन्द्र का (आकाश-भेदी) गौरव भग हो जाता है, और वह विना वादल के वरसा करते हैं।

ब्रह्मा, विष्णु और सनक-सनदन कौन मेरा लोहा नहीं मानता?

तीनो लोक मेरी वशीकरण विद्या का कायल है। जादू से पुर-असर मेरे नयन सितम ढाते है। भुवनमोहिनी मेरा नाम है।

दर्पण और काजल को मत्र से सिद्ध कर मैंने आँखों को आँजा। उन अँजी हुई आँखो से जादू डाल कर प्रियतम को वशीभूत कर लिया।

जब मैं चरण के पायल को झकृत कर नृत्य करूँगी, और प्रियतम देखेंगे तो पाग के पेंच उघार कर मुझे हृदय के बीच रख लेंगे।

कवि विद्यापति कहते हैं कि हे तरुणी, तुम्हारा अभीष्ट सिद्ध हो गया। तुम्हारी वशीकरण विद्या वडी तेज है। अब तुम्हारे प्रियतम तुम्हारी सेज को कभी न छोडेंगे।

(२)

हमरा क जँओ तेजव गुन हाँकव
योग देव ममधान अविन कय राखव
एको पलक जँओ तेजव गुन हाँकव
एहन योग मोर तेज सेज नहि छाडव

आरसि काजर पारब निशि डारब
ताहि लय आँजब आँखि योग परचारब
नयनहिं नयन रिझायब प्रेम लगायब
करब मोरा गरहार हृदय बिच राखब
भनहि विद्यापति गाओल योग लगाओल
दुलहा दुलहिनि समधान अचिन कय राखल

हे प्रियतम, यदि मेरा परित्याग करोगे तो तुम्हारे विरुद्ध वशीकरण मन्त्र का प्रयोग करूँगी, और तुम्हें गुलाम बना कर रखूँगी।

सच कहती हूँ कि पल-भर के लिए भी यदि तुम मुझसे बिछुडोगे, तो मैं अपने मन्त्र की आजमाईश करूँगी।

मेरा मन्त्र इतना तेज है कि तुम मेरी सेज कभी न छोडोगे।

रात में दर्पण और काजल को मन्त्र से प्रभावित कर आँखों को आँजूंगी, और अपने मन्त्र का प्रयोग करूँगी।

अपने नयन से तुम्हारे नयन को रिझा कर तुमसे प्रेम करूँगी। तुम मुझे अपने गले का हार बनाओगे, और अपने हृदय के कोने में छिपा कर रक्खोगे।

कवि विद्यापति कहते हैं कि दुलहिन ने दूल्हे पर सचमुच अपने मन्त्र का प्रयोग किया, और उसे अपना गुलाम बना लिया।

(४)

नयन क जाल खिराओल नयना योग वेसाहल
हेमत अरोधल पशुपति जेहो न बाजथि निकमति
नयना नोत बुलाइलि सकल योग पसारलि
देव पितर सभ पूजिय गउरि बसि हरि राखिअ
भनहि विद्यापति गाओल जोग अत नहि पाओल

नयना जोगन ने नयन के जाल फैला कर मोहिनी विद्या सीखी।

ऋषि हेमत बेटी उमा के लिए शिव को अरोध कर लाये। लेकिन दूल्हा बौराहा है, और अट-सट बोलता है।

नयना जोगन निमंत्रित कर बुलाई गई। उसने दूल्हे का बौराहापन दूर करने के लिए तंत्र-मंत्र का प्रयोग किया।

उमा के अरिजन-परिजन देव-पितरों से प्रार्थना करने लगे कि किसी भी तरह दूल्हा उमा के वशीभूत हो जाय।

कवि विद्यापति कहते हैं कि योग का कोई अंत नहीं पा सका।

(५)

दछिन पवन वहु लहु-वहु
पहुँ सौं मिलन होयत कवहु
आम मंजरि महु तूअल
तैओ ने पहु मोरा घूरल
दीप जरिय वाती जरल
तैओ ने पहु मोरा आयल
भनहि विद्यापति गाओल
योगनिक अंत नहिं पाओल

हे दक्षिण पवन, मंद-मंद बहो। प्रियतम से भेंट कब होगी ?

आम में बौर लग गये। महुआ चूने लगा। लेकिन हे सखी, मेरे प्रियतम नहीं आये।

दीपक की लौ मंद पड़ गई। बत्ती जल गई। लेकिन मेरे प्रियतम नहीं आये।

विद्यापति कहते हैं कि योग का अंत किसी ने नहीं पाया।

साँझ

जब गौयें अपन थान पर लौट आती है, निःशब्द नदी के किनारे सूर्य का प्रकाश धीरे-धीरे कम होने लगता है, कुजों में कलियां आँखें मूंद लेती है, संध्याकालीन रग-बिरगे तारे आसमान में हँसने लगते है और थकी-माँदी सध्या आकर अपना आसन जमाती है, तब दिन-भर के परिश्रम से क्लान्त कृषकगण अपनी चौपालों में बैठ कर तथा जिन मीठे-मीठे गीतो को गाकर चिंता-मुक्त होते है, उन्हीं का नाम है 'साँझ'। प्रेम-मिलन की स्नेह-स्निग्ध छाया में जो आत्मानद है, और रेगिस्तान में नखलिस्तान के अस्तित्व का जो गौरव है—वही लोक-साहित्य में 'साँझ' का।

निम्न-लिखित गीत इस लोकप्रिय शैली के सजीव नमूने है—

(१)

चिर अभरन राधा धयलन्हि उतारि।
पैसलि जमुन-दह आग उघारि।
चिर अभरन कृष्ण लै गेला चोराय
बैसला कदम डाढि मुरली बजाय
चिर अभरन राधा लिय समुझाय
अपन वचन राधा दिय ने सुनाय

राधा ने चीर-आभरण खोल कर यमुना-किनारे रख दिया, और नगी देह जल में पैठ गयी।

कृष्ण उसके चीर-आभरण चुरा ले गये, और कदम्ब की डाल पर बैठ कर वशी बजाने लगे।

हे राधे, अपने चीर-आभरण लो, और हँस कर अपनी मीठी बोली सुना दो।

(२)

पसरल हाट उसरि वरु गेल
नृपति बुझाय राम वन गेल
राम क राज भरत के भेल
साँझ केकइ रानी अपयश लेल

पसरी हुई हाट उसर गई। दशरथ को समझा-बुझा कर राम वन चले गये।

राम का राज्य भरत को मिला, और महारानी कैकेयी ने अपने सिर कलंक का टीका लगा लिया।

(३)

हम तोरा पुछु कोयलि वड अनुरागे
किय-किय देखल कोन ववाक राजे
नचुआ नचइत देख्लो पाँचो वाजन वाजे
कोन दाय देखलो कोइलि मगल गावे

री कोयल, कहो अमुक वावा के राज्य में तुमने क्या-क्या देखा?

कोयल ने कहा—मैंने नर्त्तकों को नृत्य करते देखा। पाँच प्रकार के वाजाओं को वजते और अमुक दादी को मगल गाते देखा।

(४)

साँझ लेसाय गेल फूल फुलाय गेल
भँवरा लेल वसेरा मलिनिया लोढि लिय
मालिनि लोढि-लोढि भरि लेल दोना
एक त मलिनिया मृग मद मातलि
दोसरे भरल फूल दोना
फूलहि लोढि-लोढि हार जे गाँथल
लय पहिराओल दुलरुआ

सध्या के दीप वुप-दुप कर जल उठे। फूल खिल गये। उन पर भौंरों ने वसेरा लिया। मालिन ने फूल लोढ-लोढ कर अपने दोने भर लिये।

हे मालिन, फूल लोढ़ लो।

एक तो मालिन मृगमद—तरुणाई की कस्तूरी से मतवाली है। दूसरे उसके हाथ में फूलों से भरा दोना – फूल-डाली है।

फूल लोढ-लोढ़ कर मालिन ने गसीले गजरे बनाये। और अपने प्यारे के गले में डाल दिया।

हे मालिन, फूल लोढ लो।

(५)

साझ भेल न घर आयल कन्हैया
घर रोवे बछरु बहार रोवे गैया
पलगा बैसल रोवे यशुमति मैया
न जानी कोन वन फिरत कन्हैया
वनाओल खीर से हो भेल वासी
न जानी कोन वन पड़ल उपासी
ओछाओल सेज से हो भेल वासी
न जानी कोन वन फिरत उपासी
कतय गेल किय भेल धेनु चरैया
न जानी कोन वन फिरत कन्हैया

सध्या हुई, लेकिन कन्हैया घर नहीं आया। घर में बछड़े रोते हैं, और बाहर गौयें रो रही है।

पलग पर बैठी हुई माँ यशोदा बिसूर रही है कि जाने मेरा कन्हैया किस निर्जन वन में भटक रहा है? भोजन के लिए जो खीर पकाई थी वह भी बासी हो गई।

पान के लगाये बीड़े बासी हो गये। न जाने किस वन में मेरा कन्हैया भूखा भटक रहा है?

ओछाई हुई सेज बासी हो गई। न जाने किस वन में मेरा कन्हैया उदासी वन कर भटक रहा है?

गाय का चरवाहा मेरा कन्हैया क्या हुआ? कहाँ खो गया? न मालूम किस विजन वन में मेरा कन्हैया भटक रहा है?

ग्वालरि

'ग्वालरि' गीत-शैली की परम्परागत भावना नूतन सस्कारो-द्वार
समय-समय पर अनुप्राणित होती रही है। इनमें सुघड रचना-कौशल
साथ-साथ श्री कृष्ण की बाल-क्रीडा की भावना का सुरुचिपूर्ण चित्रण मिलत
है। इनकी वाणी और शैली में मिथिला की लोक-भाषा अपने सहज रूप
विद्यमान है। इनकी अपनी निजी विशेषता है, और अपनी विशिष्ट सगीत
ध्वनि।

(१)

थिकहुँ गुँजरि चललि मधुपुर
बाट भेटल श्याम यो
रूप देखि मुसकायल मोहन
रभसि मागल दान यो

लितहुँ गोरस दितहुँ कान्हा
स्वरस नहि अछि मोर यो
जोर बरबस अधिक जनि करु
हयत दासिन तोर यो

गेलि गोकुल कहल यशुदहि
श्याम हटलो ने मान यो
आँचरि धरि-धरि चीर फाटयि
सुनहु यशुदा कान यो

थिकहु गुजरि झूठि ग्वारिनि
किअक गेलिह अगुताय यो

धूरि धूमर घुघर माठा
सुतल कृष्ण मुरारि यो

ई जुन जानह कृष्ण वालक
जगतक छथि वटमार यो
मुरलि टेरि-टेरि नारि वश करि
वनहिं राखथि लोभाय यो

सुकविदास विचारि मूरति
चिनहि धरु अवधारि यो
सदा जीवयु कृष्ण राधा
पुरथु मन अभिलाष यो

हे सखी, मैं मधुपुर में गोरस बेचने निकली। मेरा रूप देख कर मोहन ने हँस कर कटाक्ष किया, और यौवन का दान माँगा।

मैंने कहा—'हे कृष्ण, मैं गोरस तो तुम्हें दूँगी। पर मेरे यौवन के रस पर मेरा अपना अधिकार नहीं है। ज्यादती मत करो। मैं तुम्हारी दासी होकर रहूँगी।'

गोकुल गयी, और मैंने यशोदा से कन्हैया की इस ढिठाई की शिकायत की—'अपने लाडले सपूत की करतूत तो देखो। वह डराने-धमकाने के बावजूद अपनी शरारत से बाज नहीं आता। हम उसे लाख बरजती हैं, मगर हमारी एक नहीं चलती। वह हमारे अंचल पकड़ कर मुस्काता है, और चीर फाड़ डालता है।

पर यशोदा अपने पुत्र की भीत और सरल मुखकमल को देख उसे डाँटने की बात तक नहीं सोचती। वह कहती हैं—हे ग्वालिन, तुम झूठ बोल रही हो। मेरे भोले पुत्र की सरलता से तू तंग क्यों आ गयी? यदि ऐसा ही है, तो तुम अपनी आँखों से देख लो। उसके मठरी और घुंघरू धूल-धूसरित हैं, और वह सोया हुआ है।

गोपियों ने कहा—'यशोदा रानी, तुम्हारा लाडला कृष्ण बालक नहीं

है। जगत का प्रसिद्ध बटमार है। वह बाँसुरी की मधुर तान से व्रज-युवतियों के चित्त को चुरा लेता है, और उन पर मोहिनी डाल कर उन्हें निर्जन वन में रोक रखता है।'

सुकविवास कहते हैं कि हे व्रजाङ्गने, हृदय-पट पर श्रीकृष्ण की छवि अंकित कर लो। राधा-कृष्ण की युगल जोडी सदा फूले, और तुम्हारी अभिलाषा पूर्ण हो।

(२)

यमुना तीर बसगि वृन्दावन
सगहि गेलौं नहाय
के एहनि कयलन्हि अन्याय
वंशी लेलन्हि चोराय

बाँसक पोर तकर एक वंशी
वंशी लेलन्हि चोराय
कतय गेलौं किय भेलौं यशुदा
वंशी दिय ने छोडाय

हम नइ जानी हम नइ सुनलौं
वंशी गेलो हेराय
पुछिऔन्हि अपना हित प्रीति सँ
वंशी देथु छोडाय

यमुना के तट पर वृन्दावन बसा हुआ है। हे मा, अपने साथी बालकों के साथ मैं स्नान करने गया था। न मालूम कौन ऐसा है कि जिसने मेरी बाँसुरी चुरा ली।

बाँस की दोनों गाँठों के मध्यवर्ती भाग की बनी हुई बाँसुरी है। वह बाँसुरी जाने किसने चुरा ली ?

हे मा यशोदा, कहाँ गई ? क्या हुई ? मेरी बाँसुरी ला दो। मैं नहीं जानती। मैंने नहीं सुना। तुम्हारी बाँसुरी कहाँ खो गई ? अपने हित-प्रेमियों से पूछो। वे ही बाँसुरी ला देंगे।

(३)

आधि रतिया सेज त्यागल
छींक देल दधि टाग री।
छींक गुनितहुँ घरहि रहितहुँ
दैव हरलन्हि ज्ञान री।

आगाँ पाछाँ ताकु ग्वालिनि
केहि दउड़ल आव री
दउड़ल आवथि ढीठ कान्हा
हाथ शोभय वाँसुरी।
बाँह शोभइन्हि बाजबन्द
चरण मेहदी लाल री

आधी रात को ही सेज से उठ कर दही के कमोरों को छीकों पर टागा। री महर, यदि छीको पर रखे मीठे दही-दूध की चोरी का ख्याल रखती तो घर में ही रहती। किंतु, दैव ने हमारी मति कुंठित कर दी।

ग्वालिनें चौकन्नी होकर चारों ओर देख रही है कि कहीं ढीठ कृष्ण अंधेरे में दही-दूध छिपा कर रखने की टोह तो नहीं ले रहा है?

इतने में हाथ में बाँसुरी लिये श्रीकृष्ण दीख पड़े। उनकी बाँह में बाजूबंद है, और चरण में लाल मेंहदी खिल रही है।

(४)

खेलइत छलि माता जोहि कदमतर
ननियो ने कृष्ण डगाथु री।
कतय शोभइन्हि यन्त्रि माला
कतय शोभइन्हि बाँसुरी।
कतय शोभइन्हि लाल छड़िया
ननियो ने कान्ह डराथु री

गगा शोभइन्हि यन्ति माला
होंट शोभइन्हि बाँसुरी।
हाथ शोभइन्हि लाल छडिया
तनियो न कान्ह डराथु री।

घर पइसि कान्हा दधि मटुकिया
छीके चढि घिव खाथु रे।
घिव खाइत माता चोर पकड़ल
ननियो ने कान्ह डराथु री।

कदम्ब के गाछ के नीचे श्रीकृष्ण अपने साथी बालको के साथ खेल रहे हैं। वे तनिक भी नहीं डरते।

उनके किस अग में वैजयती हार सुशोभित है ? किस अग में बाँसुरी, और कहाँ लाल छडी शोभित है ? वे तनिक भी नहीं डरते।

उनके गले में वैजयती हार सुशोभित है। होंठों में बाँसुरी, और हाथ में लाल छडी सुशोभित है। वे तनिक भी नहीं डरते।

श्रीकृष्ण घर में पैठ कर दही-दूध चुरा-चुरा कर खाते है, और छीको पर रक्खे हुए घी। एक दिन मा यशोदा ने उन्हें घी खाते हुए पकड लिया। ढीठ श्रीकृष्ण तनिक भी नहीं डरते।

मधुश्रावणी

मिथिला के अन्य त्योहारों की तरह 'मधुश्रावणी' भी नव-विवाहिता स्त्रियों का एक त्योहार है। यह सावन शुक्ल तृतीया को मनाया जाता है। यद्यपि यह त्योहार सावन के ही समान सरस है फिर भी इसमें एक भयकर विधि इसलिए की जाती है कि विवाहिता दीर्घकालीन सधवा रहेगी या नहीं। नव विवाहिता एक जलती बत्ती से दागी जाती है। यदि फोडे खूब अच्छे आये, तो स्त्रियां उन्हें सधवापन का चिह्न समझती है।

स्त्री-पुरुषों की जुटनेवाली महफिलो में इस चिर-नवीन त्योहार के प्रति असीम श्रद्धा दीख पड़ती है। कालक्रम के अनुसार 'मधु-श्रावणी' गीत की रचना-शैली दो भागों में विभाजित है---(१) पूर्व मधु-श्रावणी-काल, और (२) उत्तर मधुश्रावणी-काल। पूर्व और उत्तरकालीन 'मधुश्रावणी' की मौलिक रूप-रेखा में ज़मीन आसमान का फर्क है।

'पूर्वमधुश्रावणी-काल' की प्रत्येक पुरातन गीत-शैली आदिमकालीन चकमक पत्थर के उस भोथडे औज़ार की तरह है, जो पर्वतों की निर्जन घाटियो में मार्ग निकालने और शिकार पर गुज़ारा करने के लिए बनाया जाता था, अथवा इस प्रकार कहना अधिक समीचीन होगा कि 'मधुश्रावणी' की प्रत्येक प्राचीन गीतशैली बौद्धकालीन इमारती कला के सदृश है, जिसके गुम्बज, दीवारों, बुर्जियां, खम्भे वग़ैरा पर किसी प्रकार की तडक-भडक या बारीक मीनाकारी का काम नहीं।

लेकिन 'उत्तर मधुश्रावणी-काल' की प्रत्येक चिर-नवीन गीत-शैली इस्पात के उस चमकते और चोखे औजार की तरह है जिससे चट्टानों की दीवारें काट-काट कर पहाड़ी चोटियों पर गुलाबी लताएँ और अंगूर की बेलें लगा दी गई हैं, अथवा प्रत्येक चिर-नवीन गीत-शैली उस मुग़लकालीन

इमारती-कला के सदृश है, जिसकी मेहराबदार छतो, दीवारो और खम्भों पर किम्खाब के बूटों की तरह की नक्काशी और सुप्रसिद्ध चित्रकारों की कल्पना से अंकित मूर्त्तियुक्त चित्रावलियाँ है।

दरअसल 'मधुश्रावणी' की पुरातन और नवीन गीत-शैलियाँ—दोनो एक ही माँ-बाप की जोडिया बेटियाँ है। दोनो एक ही सस्कृति के झूले में झूल कर पलीं, और बडी हुई है। मगर उनके बीच में एक बडा भारी फासला यह है कि एक अनपढ और जाहिल है, और दूसरी पढी और सभ्य। एक देहाती गँवारों की जवान में गुफ्तगू करती है, और दूसरी के तर्ज-बयान सुसंस्कृत और परिमार्जित है। एक के कानों में झुमके और कमर में घेरदार चुदरीवाला पहनावा है, और दूसरी की चाल-ढाल, सूरत और लिबास में अजनबीयत है। उदाहरणस्वरूप 'पूर्व मधुश्रावणी-काल' की कुछ गीत-शैलियों का मुलाहिजा कीजिये—

(१)

पर्वत ऊपर सुग्गा मडराय गेल
किनि दिय आहे बाबा लाल रग केचुआ
बेसाहि दिय आहे भाय मोरा चित्रसारी
निर्धन घर गे बेटी तोहरो जनम भेल
निर्धन घर गे बेटी तोहरो विवाह भेल
कतय पैब गे बेटी लाल रग केचुआ
कतय पैब गे बेटी हम चित्रसारी
से हो सुनि अमुक वर चलला बेसाहे
ओतहि सँ बेसाहि लैला लाल रग केचुआ
ओतहि सँ बेसाहि लैला ओहो चित्रसारी
पहिरि-ओहिरि कन्या ठाढि भेलि आगन हे
देखिय-देखिय बाबा लाल रग केचुआ
देखिय-देखिय भाय एहो चित्रसारी

हे नाग, मेरी बात पर कान दो। मेरी उम्र थोडी है। मेरे प्रियतम को जान बख्श दो।

(३)

सावन विसहर लेला अवतार
भादव विसहर भेला जुआन
आसिन विसहर खेलै झिझरी
कातिक विसहर गेला अलसाय
अगहन विसहर भेला अलोप
चलला अपन देश आशीष देइ
जीवथु हे कन्या सुहवे तोहर जेठ भाय
लाख वरस केर होवो अहिवात

श्रावण में नाग का जन्म हुआ। भादों में उसने जवानी की देहली में पैर रक्खा। आश्विन में वह रग-रास करने लगा। कार्तिक में वह अकर्मण्य हो गया। अगहन में मृतप्राय हो गया, और अन्त में आशीर्वचन कह कर अपने देश के लिए प्रस्थान किया।

हे सौभाग्यवती कन्या, तुम्हारा ज्येष्ठ भाई चिरजीवी हो, और तुम्हारा यह अहिवात लाख वर्षों तक अटल रहे।

(४)

नदिया क तीरे-तीरे तुलसीक गाछ
ताहि पर विसहर खेलै जुआसार
जुअहि खेलइत विसहर गेला अलसाय
काग लै गेल मुनरी बकुना लै गेल हार
कान लगलि खीझल विसहर कुमारि
चुप होउ चुप होउ विसहर कुमारि
गढ़ाय देव मुनरी गुंथाय देव हार

नदी के किनारे तुलसी का गाछ है। उसी पर बैठ कर नाग जूआ खेल रहा है।

जूआ खेलते-खेलते वह अलसा गया।

इसी बीच काग चोच में उसकी अगूठी लेकर उड गया, और बगला उसके ले का हार ले गया। फलस्वरूप नाग की बेटी खीझ कर रोने लगी।

कवि कहता है—हे नाग-कन्या, चुप रहो। चुप रहो। मै अंगूठी ढ़ा दूंगा और गले का हार भी गुंथा दूंगा।

(५)

कतय तोर गहवर कतय तोर थान
ककर तू पाँचो बेटी किय तुअ नाम
पुरइन तर गहवर पुरइन तर मोर थान
सेवक क पाँचो बेटी विसहर अछि नाम
तेल दै रे तेली भाय बाती पटिहार
दीप दै रे कुम्हरा भाय लेसब चकमक दीप
जायब सरोवर कात दै अएबो साँझ

कहाँ तुम्हारा गह्वर है? कहाँ तुम्हारा वास-स्थान? तुम किसकी ाँचों बेटियाँ हो, और तुम्हारा क्या नाम है?

पुरइन के नीचे मेरा गह्वर है, और पुरइन के ही नीचे मेरा वासस्थान। म सेवक की पांचों बेटियाँ है, और विसहर (नाग) हमारा नाम है।

रे तेली भाई, तेल दो। रे पटिहार, बत्ती दो। रे कुम्हार भाई, तुम ीपक दो। चकमक दीप जला कर और सरोवर किनारे जाकर मै साँझ ़ूंगी।

प्रारम्भिक काल में 'मधुश्रावणी' की यही रूप-रेखा थी। छन्द-शास्त्र ी दृष्टि से विचार किया जाय तो प्रारम्भिक 'मधुश्रावणी'-पद्धति के अनु-ार किसी भी 'मधुश्रावणी' के चरण की मात्रा निश्चित नहीं थी। गीत की त्येक पक्ति प्राय. भिन्न मात्रा की होती थी, जैसा कि उपर्युक्त उदाहरणो े प्रत्यक्ष है। तुक, यति और लय-विराम के अनावश्यक बन्धन को भी धिक महत्त्व नहीं दिया जाता था। भावो की सम्यक् अभिव्यंजना के नुरूप बौद्धिक भावज्ञता का नियमन ही प्रामाणिकता की कसौटी था।

लेकिन धीरे-धीरे 'पूर्व मधुश्रावणी-काल' के इस विवस्त्र सज्ञाहीन शरीर में नीरव प्रस्फुटन हुआ, उसकी सिकुडी हुई धमनियो में उल्लास नाचने लगा। नव वसन्त के प्रथम स्पर्श-मात्र से उसकी चेतना सजग, सजीव हो उठी। उसकी भाषा और भाव-धारा पर गीति-काव्य का सुन्दर आवरण इस सफाई और हल्केपन से चढा कि लुत्फ दूना हो गया। निम्नलिखित 'मधुश्रावणी' इस नूतनतम शैली की एक सुन्दर रचना है—

(६)

जुगुति जुगुति व्रजनारि आहो राम
पहिरल अति रूप सारी
हाथ लेल वेत-डारि। आहो राम
गवइत गेलि फुलवारि।
सखी सब कैल रग-केलि। आहो राम
चन्द्रवदनि धनि गोरि। आहो राम
मन कह-कह कल जोरि।

व्रजाङ्गनाएँ यत्नपूर्वक कीमती साडियाँ पहने और हाथो में बेंत की डाली लेकर मगल गान करती हुई पुष्पवाटिका में गईं। वहाँ सखियों से मिल कर उनने परस्पर रगरेलियाँ कीं, और उन चन्द्रमुखी गोरी ललनाओं ने करवद्ध होकर अपनी हृदय की बात निवेदित की।

समय पाकर नूतन 'मधुश्रावणी'-काल की इस सरल, सक्षिप्त शैली में भी विकसन हुआ। उसकी चेतना यौवन-रग में प्रमत्त हो उठी। उसके शब्दों की झकार और भी परिष्कृत हुई। यह परिवर्तन केवल 'मधुश्रावणी' के विपुल शब्द-समूह और उसके सुकोमल कलेवर में ही नहीं हुआ, वल्कि उसके स्वरूप और आत्मा में भी रूपात्मक और भावात्मक क्रान्ति हुई।

'उत्तर मधुश्रावणी-काल' के प्रारम्भिक दिनों में प्रत्येक 'मधुश्रावणी' गीत छ या सात खण्ड-पक्तियो के सग्रह होते थे, जैसा कि उपर्युक्त नमूने से प्रत्यक्ष है। और जिसके प्रत्येक चरण भावो की माप के अनुकूल भिन्न-भिन्न मात्राओ के होते थे। लेकिन छन्दो को ललित वनाने के लिए यह

प्राचीन परिपाटी बदल दी गई। अब 'मधुश्रावणी' का प्रत्येक चरण पिंगल के नपे-तुले नियमों में बांध दिया गया। इस सुरुचिपूर्ण दिशा का प्रत्येक चरण बारह-बारह मात्राओं की यति से, अन्त में दो गुरु (ऽऽ), और कहीं-कहीं दो लघु (।।) के साथ आरम्भ हुआ—

(७)

लहु-लहु धर सखि बाती
धड़कए कोमल छाती
लहु-लहु पान पसारह
लहु-लहु दृग दुहुँ झाँपह
मधुर-मधुर उठ दाहे
मधुर-मधुर अवगाहे
'कुमर' करह विधि आजे
'मधुश्रावणि' भल काजे

हे सखी, धीरे-धीरे बत्ती जलाओ। मेरी कोमल छाती धड़क रही है। धीरे-धीरे पान पसारो, और मेरी दोनों आँखों को धीरे-धीरे ढको। और हे सखी, बत्ती की यह शिखा मन्द-मन्द जले, और मैं उसमें मन्द-मन्द अवगाहन करूँ।

कवि 'कुँवर' कहता है—

हे नव-विवाहिते, आज मधुश्रावणी का पवित्र त्योहार है। इसलिए तुम विधिपूर्वक अनुष्ठान करो।

कहीं-कहीं यह नूतन छन्द बारह-बारह मात्राओं का न होकर सोलह और बारह-बारह का भी कर दिया गया—

(८)

शीतल वहथु समीर दिशा दश
शीतल लेथि उसाँसे
शीतल भानु लहु-लहु उगथु
शीतल सरयू जवागे

शीतल सजनि गीत पुनि शीतल
शीतल विधि - व्यवहारे
शीतल मधुश्रावणि विधि होवथु
शीतल वसु एहि गारे
शीतल घृत शीतल बरु बाती
शीतल कामिनि अंगे
शीतल अगर सुशीतल चाननु
शीतल आवथु गंगे
शीतल कर लय नयन झँपावह
शीतल दय दह पाने
शीतल होय अहिवात 'कुँवर' भन
शीतल जल स्नाने

शीतल हवा मन्द-मन्द वहे, और दशों दिशाएँ शीतल-शीतल सांस लें। शीतल सूर्य्य की शीतल किरणें मन्द-मन्द बिखरें और आसमान शीतलता से फूल उठे।

हे सखी, हमारे हृदय-हृदय में शीतलता के भाव उदित हों। हमारे गीत और विधि-व्यवहार सरल और शीतल हों।

'मधुश्रावणी' का यह पवित्र त्योहार शीतल हो। हमारा मानस-जगत शीतलता की सुगन्धि से महक उठे।

हे सखी, हमारी नव-विवाहिता सहेली का अंग-प्रत्यंग शीतल हो। दीपक का घृत शीतल हो, और यह शीतल दीप-शिखा मन्द-मन्द जले। अंगराग और चन्दन शीतल हो, और हमारी शीतल हृदय-गंगा मन्द-मन्द वहे।

कवि 'कुँवर' कहता है—हे नव-विवाहिते, तुम्हारा सौभाग्य शीतल हो। तुम शीतल जल में स्नान करो, और शीतल हाथों में पान के शीतल-शीतल पत्ते लेकर अपने शीतल नेत्रों को ढक लेने दो।

उपर्युक्त गीत-शैली में मनोराग या रागात्मिका वृत्ति का प्रावल्य है। रागात्मिका वृत्ति पिंगल और छदों की चहारदीवारी में कैद न होकर मर्म-स्पर्शी उदात्त भावना और संगीतात्मक अभिव्यजना में रहती है। रागात्मिका वृत्ति के मुख्यतया दो लक्षण है—(१) रसाभास, और (२) रागोद्रेक। रस गीति-काव्य का प्राण है। जब भाव-तरगो के बीच रस केन्द्रीभूत होता है, तब गीति-काव्य हृदयान्तरजनित सरिता-प्रवाह की तरह अनर्गल धारा के रूप में बहने लगता है। पाठक देखें, 'मधुश्रावणी' की उपर्युक्त नूतनतम शैली में कवि का भाव-प्रतिबिम्ब स्पष्ट रूप से बिम्बित हुआ है। भाषा-वैभव और आलंकारिक चित्रण के अभाव में भी इसमें सगीतात्मक भावुकता का सफल निर्वाह है। भाषा दीर्घ समास और अन्वय-काठिन्य-पूरित न होकर रस और भाव के अनुरूप ही सुघड है। अंग्रेजी भाषा के सिद्ध-हस्त कवि पोप ने 'कविता की भाषा कैसी हो?' इस विषय पर अपने (Essay on criticism) नामक निबन्ध में लिखा है—

यह पर्याप्त नही है कि कविता की भाषा में कर्कशता नहीं हो, बल्कि यह भी जरूरी है कि पढते ही शब्दों की एक गूज-सी निकले।

गीति-काव्य की सफलता के लिए, जैसा कि उपर्युक्त उदाहरण से स्पष्ट है, स्वर-सगीत आवश्यक समझा गया है। 'लहु-लहु घर सखी बातीं, धड़-कए कोमल छाती' में सुगीतिता का भाव सतुलित है। 'लहु-लहु' से 'मधु-श्रावणि भल काजें' और 'शीतल बहयु समीर' से 'शीतल जल असनानें' तक आते-आते स्वरो का नाद-स्फोट उत्तरोत्तर ध्वनित हो उठता है। यह स्वर-सगीत उत्तरकालीन 'मधुश्रावणी' के सभी प्रकार के छदों में परिव्याप्त है।

(६)

कदलिक दल मन थर-थर काँपए
मधुश्रावणी विधि आजए
सकल शृंगार सम्हारि सजनि सब

मधुमय सकल समाजे
कमलनयन पर पानक पट दय
नागर जखनहे झाँपए
वध करि हाथ कमल कर वाती
देखि सगर तन काँपए
आजु सुहागिनि सह मिलि वइसल
मुख किय पड़ल उदासे
कुमर नयन में नीर वहावह
गाइन गावतु गीते
वड़ अजगुत थिक मधुश्रावणी विधि
परम कठिन एहो रीते

आज 'मधुश्रावणी' का पवित्र त्योहार है। व्रती तरुणी कदली के पत्ते की तरह थर-थर काँप रही है। उसकी सभी सखियाँ विविध प्रकार के आभूषणो से विभूषित है, और सारा समाज आनन्द में पागल हो रहा है।

जब नव-विवाहिता तरुणी के कमल सरीखे नेत्रो को उसके प्रियतम ने पान के पत्ते से ढक दिया, और उसके बद्ध कर-कमलों में जलती हुई बत्ती दी गई तब उसका अग-प्रत्यग काँप उठा।

वह व्रती नवविवाहिता तरुणी अपनी सहेलियो के बीच सज-धज कर बैठी है। फिर जाने क्यों उसका मुख म्लान है?

कवि 'कुँवर' कहता है कि उसकी आँखों से अविरल अश्रुपात हो रहे है, और गायिकाएँ मगल गान गा रही है।

'मधुश्रावणी' का यह त्योहार सचमुच बड़ा विचित्र है, और उसकी विधि अत्यन्त कठोर।

छठ के गीत

छठ, जिसको कोई-कोई सूर्य-षष्ठी व्रत भी कहते हैं—कार्तिक महीने ; शुक्ल पक्ष की षष्ठी तिथि को होता है। यह व्रत मिथिला में स्त्री-पुरुष ोनों करते हैं। कहीं-कहीं चैत महीने के शुक्ल पक्ष की षष्ठी तिथि को भी ह त्योहार मनाया जाता है। व्रती दिन के चौथे पहर जितेन्द्रिय होकर नदी, कृत्रिम सरोवर या अपने घर में ही स्नान करते हैं, और सन्ध्या को भक्ति-र्वक एकाग्र-चित्त से सूर्य भगवान् को नीबू, केला, नारगी और मिष्टान्न ादि भोज्य-पदार्थों का अर्घ्य देते हैं। कोई-कोई गन्ध आदि पचोपचार ौर पौराणिक मत्रों के द्वारा सूर्य का पूजन करते हैं। प्रात सूर्योदय होने ार पुन अर्घ्य देते हैं, और अपने सामर्थ्य के अनुसार किसी सत्पात्र ब्राह्मण ो दक्षिणा देते हैं।

यह त्योहार कब और कैसे प्रारम्भ हुआ, कहना कठिन है। लेकिन सूर्य-षष्ठी व्रत कथा[1] के इक्कीसवें श्लोक के अनुसार—

> कृतानुसूययाह्येषा अत्रिपत्न्या विधानत
> सौभाग्य पति-प्रेमाप्तिनया लब्ध यथेच्छया

पहले इसका प्रारम्भ अत्रि की पत्नी अनुसूया ने किया और उसको सौभाग्य तथा पति-प्रेम की प्राप्ति हुई।

'छठ' के गीत पूर्णत धार्मिक गीत है। मिथिला के धार्मिक मनोभाव, धर्म के नाम पर प्रचलित वहम, पारिवारिक विचार और मान्यताएँ, घरेलू

---

[1] 'सूर्य-षष्ठी व्रत कथा' किसी पुराण के सत्ताईस श्लोकों का सग्रह है, जिसमे नारद और सूर्य के प्रश्नोत्तर के रूप मे 'छठ' त्योहार मनाने का विधान बताया गया है।

निष्ठा और आत्म-सयम—ये छठ के प्रिय विषय हैं, किंतु धर्म के रगीन चोले में बन्द होते हुए भी छठ की गीत-शैली अपनी सहज वर्णांकित अभि-व्यक्ति के कारण अपनी परिधि में प्राण-पूर्ण है। उसका रचयिता शुष्क और अरसिक नहीं है। उसके हृदय में भी काव्य का सूक्ष्म द्रव फैला हुआ है। उसे भी सगीत की श्रुति-प्रिय ध्वनि में आनन्द आता है। कहना चाहिए, प्रेम का ऊहापोहात्मक-रूप, सूक्ष्म विश्लेषण और कवित्व का चमत्कृत रग यहां मत ढूंढिये। सुन्दरता, कला और कला-विधायक प्रतिभा कहीं और जगह मिलेगी। हार्दिक श्रद्धा, निष्ठा-भरे उल्लास और आत्म-लक्षी उच्चता—इन्हींको यहां देखना है—

(१)

बेरि-बेरि बरजह दीनानाथ हे
बवा हे तिरिया जनम जनि देहु
तिरिया जनम जब देहु हे दीनानाथ
बवा हे सुरति बहुत जनि देहु
सुरति बहुत जब देहु दीनानाथ हे
बवा पुरुख अमरुख जनि देहु
पुरुख अमरुख जब देहु दीनानाथ हे
बवा हे कोखिया बिहुन जनि देहु
कोखिया बिहुन जब देहु दीनानाथ हे
बवा हे सउतिन सउत जनि देहु
सउतिन सउत जब देल दीनानाथ हे
बवा हे कवन अपराध हम कयलौं
बड अपराध तुहुँ कएले अबला
अबला सास निपन पैर देल
कोन अपराध हम कइलौं दीनानाथ हे
बवा कोखिया बिहुन जब देल

वड अपराध तुहुँ कएले अवला गे
अवला ननदी पर हुतका चलओले
कओन अपराध हम कएलीं दीनानाथ हे
ववा हे पुरुख अमरुख जव देल
वड अपराध तुहुँ कएले अवला गे
दूध हो कटिअवे पएर धोएलह
कओन अपराध हम कयलि दीनानाथ हे
ववा हे सुरति वहुत जव देलह
वड अपराध तोहुँ कएले अवला गे
अवला डगरा क वड्गन तोडि लएले

हे सूर्य भगवान, मैंने वार-वार अनुरोध किया कि तुम स्त्री का जन्म मत दो। अगर स्त्री का जन्म दो तो अत्यधिक सौंदर्य न दो। अगर अत्यधिक सौंदर्य दो तो मूर्ख पति न दो। यदि मूर्ख पति दो तो वाँझिन नही वनाओ। अगर वाँझिन वनाओ तो सौतिन नहीं दो।

लेकिन हे सूर्यदेव, तुमने मुझे सौतिन दी। हाय, मैंने कौन ऐसा अपराध किया ?

हे अवला, तुमने वहुत वडा अपराध किया। तुमने सास की लीपी हुई वेदी पर पैर रखा।

हे सूर्य भगवान, मैंने कौन-सा अपराध किया कि तुमने मुझे वाँझिन वनाया ?

हे अवला, तुमने वहुत वडा अपराध किया। तुमने अपनी ननद को घूंसे से मारा।

हे सूर्य भगवान, मैंने कौन-सा अपराध किया कि तुमने मुझे मूर्ख पति दिया।

हे अवला, तुमने वहुत वडा अपराध किया। तुमने दूध से पैर धोया।

हे सूर्य भगवान, मैंने कौन-सा अपराध किया कि तुमने मुझे अत्यधिक सौंदर्य दिया ?

हे अबला, तुमने बहुत बड़ा अपराध किया। तुमने डगरे (बाँस के खपाचों का बना हुआ एक वृत्ताकार पात्र) में बैंगन तोड़ा।

इस गीत से पता चलता है कि धर्म ने किस तरह ग्रामीण स्त्रियों के जीवन पर प्रभाव डाला है। यह धर्म में अन्ध-श्रद्धा का ही परिणाम है कि वे डगरे में बैंगन तोड़ना, और सास की लीपी हुई वेदी पर पैर रखना भी पाप समझती हैं। वस्तुतः धर्म एक ऐसी शक्ति है जो मानव-जीवन और मानव-इतिहास के समानान्तर चल रहा है। किसी भी जाति की सभ्यता उसके धर्म से सर्वथा रँगी होती है। कला-कौशल, साहित्य, विज्ञान, दर्शन-शास्त्र सभी पर और उनकी प्रत्येक अवस्था में धर्म का प्रभाव देखा गया है। टाल्सटाय ने अपनी (what is religion) नामक पुस्तक में लिखा है—

Religion remains what it has been in the past the Chief motor and heart of human societies and without it, as without a heart human life is impossible

धर्म आज भी प्राचीन-काल के समान बना हुआ है। वह मानव-जाति का संचालक और हृदय है। जिस प्रकार बिना हृदय के मनुष्य-जीवन असम्भव है, उसी प्रकार बिना धर्म के भी मनुष्य जीवन असम्भव ही है।

धर्म की इस सार्वभौमिकता के होते हुए भी जब वह अन्ध-विश्वास का रूप पकड़ लेता है तो वह मानव-जीवन के लिए विघातक सिद्ध होता है। इस गीत में अन्ध-भक्त स्त्रियों की कूप-मण्डूकता और धर्म में अन्ध-श्रद्धा की एक क्षीण झलक वर्त्तमान है।

(२)

नदिया क तीरे-तीरे वोअले में राइ
छठी माइ के मृगा चरिय चरि जाइ
बाँधु ञ छठी मइया अपन मिरिगवा
मारतन कओन भइया धनुखा चढाय
कथि केर धनुखा कथिए केर तीर
सोने केर धनुखा रूपे केर हे तीर

रथ जित अवइछथिन कओन वहिन क भाइ
हे छठी माता करव अहाँ क सेवा
भरव अहाँ क डाला
अहाँ क सेवइत निरमल हयत काया

नदी के किनारे-किनारे मैंने राई बोई। हाय! छठी माँ का मृगा उसे नित्य चर जाता है।

हे छठी माँ, तुम अपने मृगा को बाँध रखो, नहीं तो मेरे अमुक भाई उसे अपने तीर का लक्ष्य बनायेंगे।

किस वस्तु का धनुष है? किस वस्तु का तीर?

सोने का धनुष है, और रूपे का तीर।

अहा! मेरी अमुक बहन का भाई दिग्विजय किये आ रहा है।

हे छठी माँ, मैं तुम्हारी विधि-पूर्वक पूजा करूँगी और पुष्पादि मिष्टान्न पदार्थों का अर्घ्य दूँगी, क्योंकि तुम्हारी सेवा करने से ही मेरा शरीर व्याधि-रहित होगा[1]।

(३)

कांच ही बाँस के गहवर हे
आहे सोवरन लागल केवार
ताही में नें निकलु सुरुजमनी
आहे कओन दाइ ऊखम डोलाउ
अरग केर वेर भेल हे
विहने के पहर में डोमिन विटिया हे

---

[1] षष्ठीव्रतचर्येकेचित् करिष्यन्ति समाहिता
दु ख दारिद्रय कुष्ठादि रोग नाशो भविष्यति
—जो एकाग्र मन से इस व्रत का अनुष्ठान करेंगे वह दु ख, दारिद्र्य और कुष्ठादि रोगों से मुक्त हो जायेंगे।
सूर्य-षष्ठी व्रत-कथा—श्लोक २२

वेटिया बनिया दउरिया लए आउ
अरग केर बेर भेल हे
वेटी पिअरी कलसुपवा लय आउ
पुरुब रथी ठाढ़ भेल हे
बिहने के पहर में बनिआइन बेटिया हे
बनिआइन नवका कसइलिया लय आउ
अरग केर बेर भेल हे
बिहने क पहर मे तोंहि मालिन बेटिया
मालिन सतरगा हार लेइ आउ
अरग केर बेर भेल हे
बिहने क पहर मे तोंहि बाभन डेइया हे
बाभन पिअरी जनेउआ लय आउ
अरग केर बेर भेल हे

कांच बांस का गहवर—देवालय है। उसमें सोने के किवाड लगे हैं। उससे सूर्य की मणिमय अशु-मालाएँ निकल रही हैं।

हे सखी, अमुक दादी धूप से बेचैन होकर पखा झल रही है।

अहा! अर्घ्य की वेला हो गई!

हे डोमिन की बेटी, कल प्रातःकाल धानी रग की चंगेरी लाना।

अर्घ्य की वेला हो गई!

और हे डोमिन की बेटी, तुम पीले रग का सूप लाना। वह पूर्व आसमान में सूर्य भगवान का रथ खडा है।

हे बनिआइन की बेटी, कल प्रातःकाल नई सुपारी लाना।
अर्घ्य की वेला हो गई!

हे मालिन की बेटी, कल प्रातःकाल फूलों का सतरंगा हार लाना।

अहा! अर्घ्य की वेला हो गई!

और हे ब्राह्मण देवता, कल प्रातःकाल पीला यज्ञोपवीत लाना।

अहा! अर्घ्य की वेला हो गई!

(४)

खोंइछा के लेल अछता गेरुलि सुघ नीर
चलि भेल कओन देइ पुत माँगे भीख
थोड नही लेव माता वहुत जनि दीउ
एगो पडितवा माइ गे दुइ हर लेव
हरी-हरी परमन होउ हे माता छठि देइ भली

अमुक देवी आँचल में अक्षत और घडे में सरिता का स्वच्छ जल लेकर छठी माँ से पुत्र की भीख माँगने चली।

हे माँ, मुझे थोडा नहीं चाहिए, और मुझे जरूरत से ज्यादा भी मत दो मै एक पडित पुत्र, और दो हल जोतने लायक जमीन माँगती हूँ हे दयाशीला छठी माँ, तुम शीघ्र प्रसन्न हो।

'थोडे नहीं लेव हे माता, वहुत जनि दीउ'—इन पक्तियो में एक नारी हृदय की सहज सतोष-भावना अपने स्वाभाविक रूप में बोल रही है। कबीर कहते हैं—

साईं इतना दीजिये, जामें कुटुम समाय
मैं भी भूखा ना रहूँ, साघु ना भूखा जाय

(५)

विहने के पहर में धरम केर वेरिया सुरुज चलु हे गवने
जएवो मे जएवो कओन शाही के अगना
माइ कनिया देइ के खोइछा
दोहरिओ हथिया वइसल ओहि रे अगना
धरम केर वेरिया सुरुज चलु हे गवने
हे जएवो में जएवो कओन शाही के अगना
दोहरिओ दउरिया भरल ओहि रे अगना
धरम केर वेरिया सुरुज चलु हे गवने

कल प्रातःकाल धर्म की वेला है। हाय! सूर्य भगवान अस्त हो रहे है

मैं अमुक शाही के आँगन में जाऊँगा, और कन्या देवी के आँचल में जाऊँगा। उनके आँगन में मेरे लिए दतार हाथी खड़ा है।

अहा! धर्म की वेला है, और सूर्य भगवान अस्त हो रहे हैं।

मैं अमुक शाही के आँगन में जाऊँगा और कन्या देवी के आँचल में जाऊँगा। उनके आँगन में मेरे लिये फल-फूल और मिष्टान्न से भरी चगेरी रक्खी है।

अहा! धर्म की वेला है और सूर्य भगवान अस्त हो रहे हैं।

(६)

केरवा फरए घौंदसए ऊपर सुग्गा मँडराय
मारवड रे सुगवा धनुख सए सुगा खँसु मुरछाय
उजे केरवा जनु कोइ छूवय छठी माता ला
छठी माइ के जएतइन सनेस अरग देवय ला
उजे काँचए बाँस केर बँहिया रेगमक लागल डोर
भरिया होयतन कओन भइया भार लय पहुँचाय
बाट पुछथिन बटोहिया भइया ई भार केकर जाय
आहे छठि अइसन ठकुराइन ई भार हुनकर जाय
नेमुआ फरए घौंदसए ऊपर सुग्गा मँडराए
मारवड रे सुगवा धनुखसए सुगा खँसु मुरछाए
उजे नेमुआ जनु कोइ छुवए छठी माता ला
छठी माइ के जएतइन सनेस अरग देवय ला
उजे काँचए बाँस केर बँहिया रेगमक लागल डोर
भरिया होयतन कओन भइया भार लय पहुँचाय
बाटहि पुछयिन बटोहिया भइया ई भार केकर जाय
आहे छठि अइसन ठकुराइन ई भार हुनकर जाय

घौंद-के-घौंद केला फला है। उसे चखने के लिए सुग्गा मँडरा रहा है।

रे सुग्गे, मैं तुम्हें तीर से मारूँगी और तुम्हें मूर्च्छा आ जायगी।

केले के घौंद को कोई नहीं छूये। वह छठी माँ के लिये सुरक्षित है। अर्घ्य देने के लिए वह छठी माँ को सौगात जायगा।

काँच बाँस की बहँगी है और उसमें रेशम की डोर लगी है। मेरे अमुक भाई भरिया होंगे और छठी माँ को सौगात पहुँचायेंगे। रास्ते में पथिक पूछेंगे कि यह भार किसका है? तब मेरे अमुक भाई कहेंगे—

'छठी-सी यशस्विनी है। उन्हींका यह भार है।'

यही अर्थ आगे की पक्तियो का भी है। अन्तर इतना ही है कि उसमें केले के स्थान पर नीबू जोड दिया गया है।

सूर्यदेव को अर्घ्य देने की तैयारी हफ्तो से होने लगती है। नारियल, संतरा, अनानास आदि फल-फूल और मिष्टान्न तथा अनेक प्रकार के भोज्य-पदार्थ पहले से ही सुरक्षित रखे जाते है। उन्हें कोई घरेलू जानवर, जैसे—कुत्ते, बिल्ली और कोई पक्षी, जैसे—कौवे, सुग्गे आदि चखने नहीं पाते। प्रात और सध्या सूर्य को अर्घ्य देने के बाद लोग अर्घ्य दी हुई वस्तु को खाते है। इसलिए इस गीत में केले के घौंद पर मँडराते हुए सुग्गे को तीर से मारने की चेतावनी दी गई है।

(७)

चारि पहर राति जल-थल सेविलों
सेविलों छठि गोरथारि छठी माता
परसन होउ न सहाय छठी माता
अपना ला मांगिलों अन-धन लछमी
युगे-युगे मांग अहिवात छठी माता
परसन होउ न सहाय छठी माता
घोडा चढन लागि बेटा मांगिलों
मांगिलों घर-सचिनि पतोहू छठी माता
बयना बहूरे लागि बेटी मांगिलों
पडित मांगिलों दमाद छठी मइया
परसन होउ न सहाय छठी मइया

रात के चारों पहर स्थल और जल में बैठकर मैं तुम्हारे चरण की पूजा करती हूँ।

हे छठी माँ, तुम मुझ पर प्रसन्न होओ।

मैं अपने लिए अन्न-धन, लक्ष्मी माँगती हूँ और मेरा सुहाग युग-युग अटल रहे—यही मेरी साध है।

हे छठी माँ, तुम मुझ पर प्रसन्न होओ।

घोडा पर चढने के लिए बेटा माँगती हूँ और घर के काम-काज सँभालने-वाली पतोहू। बयना वापिस करने के लिए बेटी और पण्डित दामाद माँगती हूँ।

हे छठी माँ, तुम मुझ पर प्रसन्न होओ।

गीत में 'सचनी' और 'बयना' दो शब्द आये हैं। 'सचनी' सस्कृत के 'सचय' शब्द का अपभ्रश है। 'सचनी' का शब्दार्थ है—सग्रह करनेवाली और सचय का अर्थ है—समूह, सग्रह।

मिथिला के गाँवो में जब किसी के कुटुम्ब या मित्र कोई मिष्टान्न या भोज्य पदार्थ अपने सगे-सम्बन्धियो को उपहार भेजते है तो वे उनका स्वय ही उपभोग न कर अपने पडोसियों और मित्रो को भी थोडा-बहुत भेजते है। सगे-सम्बन्धियो को इस उपहार भेजने की प्रथा को ही 'बयना' कहते है।

किसी वस्तु का स्वय ही उपभोग न कर अपने पडोसियों और मित्रों को उपहार भेजने की यह प्रथा बडी सुन्दर है। इसमें हमें ससार के प्राचीनतम ग्रन्थ वेद की 'सगच्छध्व, सवदध्व, स वो मनासि जायताम्' इस आज्ञा की झाँकी मिलती है।

मिथिला में किसी भोज्य-वस्तु के खाने के समय छोटे-छोटे बच्चे निम्न-लिखित तुकबन्दी गाते है—

बाँट-जूट खाये त गगा नहाय
असगर खाये गुह डबरा नहाय

जो कोई वस्तु बाँट कर, हिलमिल-कर खाता है, उसको गंगा-स्नान करने का पुण्य होता है और जो अकेला खाता है, वह पुरीष के डबरे में स्नान करता है।

(८)

छोटि-मोटि धोबिनी क बेटिया कि कँचए कली
तुअवा जँ धोऽहे गे धोबिन सुरुजक जोत
धोए क पसारिहे गे धोबिन चनना विरीछ
सबके डलिअवा दीनानाथ देलि अगुआय
बाँझिन डलिअवा दीनानाथ देलि पछुआय
सासु मारे हुथका दीनानाथ ननद पढे गारि
पर कोख गोतिनि हे दीनानाथ से हो उलहन देय
न लेहि-लेहि गे बाँझिन अँचरा पसार
सासु के हुथका गे बाँझिन गगा वहि जाय
ननदो के गरिया गे बाँझिन दिन दुइ चार
गोतिनि उलहनमा गे बाँझिन देहि न सघाय
देवे के त देलिअइ दीनानाथ छिनि मत लिउ
बाँझिपन छोडउलि हे दीनानाथ मरोछो जनि लगाउ

हे धोबिन की ठिगनी बेटी, तुम अभी कच्ची कली हो।

तुम मेरी चुंदरी सूर्य के प्रकाश की तरह साफ धोना और चन्दन के पेड़ पर सूखने के लिये पसारना।

हे सूर्यदेव, तुमने सभी व्रतियों की डाली आगे कर दी और मुझ बाँझिन का डाला पीछे कर दिया।

हे दीनानाथ, मेरी सास मुझे घूंसे से मारती है और ननद गाली देती है। ग़ैर कोख की जनी गोतनी भी मुझे उलाहना देती है।

हे बाँझिन, आँचल पसार कर पुरस्कार लो। सास के घूंसे से गगा बह जायगी। ननद की गाली दो-चार दिनों के लिए है और गोतनी के उलाहने का जवाब दो।

हे दीनानाथ, कहने के लिए तो तुमने पुरस्कार दिया। लेकिन फिर उसको वापस मत लो। तुमने मेरा वन्ध्यापन दूर कर दिया, लेकिन उसमें रद्दोबदल मत करो।

अरग केर वेर भेल
भले रे रग कोहवर हे

कांच बांस का गहबर है। उसके चारो कोने ईंगुर से चित्रित है।

कैसा अलकृत कोहबर है—री सखी!

ऐसे सुचित्रित कोहबर में पैठ कर सूर्य्य भगवान सोये, और उन्हींको पीठ के नगीच छठी देवी सोईं।

हे सखी, मेरी अमुक बहन ने वहां जाकर कहा—हे भाई, उठो। सुबह हो गई। अर्घ्य की बेला समीप है।

मैंने ऐसी बेहूदी ननद आज तक नहीं देखी। आधी रात को सुबह कह रही है। कहती है अर्घ्य की बेला हो गई।

हे सखी, मेरी मां ने वहां जा कर कहा—हे पुत्र, उठो। सुबह हो गई। अर्घ्य देने की वेला समीप है।

कैसा अलकृत कोहबर है—री सखी!

मैंने ऐसी नासमझ मां आज तक नहीं देखी। आधी रात को सुबह कह रही है। कहती है अर्घ्य की बेला हो गई।

कैसा अलकृत कोहबर है—री सखी?

(१२)

वारि छठि देइ गवने चललि
राति हे छठि कहमा गँवउलि
रात गँवउली कोन मिश्रक अँगना
जहाँ गाइ के गोवर निपन भेल उहाँ
जहाँ दोहरि हथिया वइसन भेल उहाँ
जहाँ दोहरि कुरवार में भरन भेल उहाँ
जहाँ दोहरि कलसुप में अरक भेल उहाँ
जहाँ पीअर वस्त्र पेन्हनन भेल उहाँ
जहाँ उज्जर खस्सी भभूत भेल उहाँ
जहाँ गाइक घिउ में हुमाद भेल उहाँ

द्विरागमन काल में तरुणी छठी देवी विदा हुई।

हे छठी देवि, तुमने आज रात कहाँ गँवा दी?

हे व्रती, मैंने रात अमुक मिश्र के आँगन में गँवाई है, जहाँ गाय के गोवर से आँगन लीपा गया है, जहाँ दो-दो दँतैले हाथी मेरे स्वागत में बिठाये गये हैं, जहाँ अक्षत, केले और नींवू से दो-दो घड़े भर कर मेरी खोछ भरी गई है, जहाँ मुझे दो-दो सुन्दर सूप भर कर अर्घ्य दिया गया है, जहाँ मुझे नवीन पीताम्बर पहनाया गया है, जहाँ मुझे चढ़ावे में सफेद बकरे भेंट किये गये हैं, और जहाँ गाय के घी से होम किया गया है—हे व्रती, मैंने आज वहीं अमुक मिश्र के आँगन में रात गँवाई है।

श्यामा-चकेवा

प्रसिद्ध त्योहार 'छठ' की समाप्ति के बाद कार्तिक महीने के शुक्ल पक्ष में श्यामा-चकेवा के गीत गाये जाते हैं। 'श्यामा-चकेवा' बालक-बालिकाओं का खेल है। मिथिला के कुछ खास-खास गांवों और नगरों में ही यह खेल खेला जाता है। लोक-गीतों के दौरे में पता चला कि एक ही जिले के कुछ गांवों में तो यह खेल प्रचलित है, और कुछ गांवों में इसका नाम तक लोग नहीं जानते। शायद इस सस्कृति-शून्य परिवर्तन के युग में साहित्य, सस्कृति, शिक्षा-विज्ञान (phonetics) और इतिहास के लुप्त होने के साथ-साथ अज्ञात-काल से परम्परा-द्वारा प्रचलित प्राचीन गीत भी धीरे-धीरे भूले जा रहे हैं।

गौर से देखा जाय तो 'श्यामा-चकेवा' एक किस्म का देहाती अभिनय है, जिसमें श्यामा और चकेवा खेल की प्रधान पात्रिका और पात्र हैं। श्यामा बहन है, और चकेवा भाई। 'श्यामा-चकेवा' के अतिरिक्त इस खेल के निम्न-लिखित छ पात्र और हैं—

(१) चुगला
(२) सतभइया
(३) खँडरिच
(४) वन-तीतर
(५) झाँझी कुत्ता
(६) वृन्दावन

(१) 'चुगला' इस खेल का एक दिलचस्प पात्र है। चुगला का अर्थ है—वह व्यक्ति जो किसी की पीठ पीछे निन्दा करे अथवा जो इधर की उधर लगावे और अपना उल्लू सीधा करने के लिए जैसे को जैसा न कह कर वास्त-

स्किता पर पर्दा डाले। हर समाज और देश में ऐसे चुगलखोरों—पीठ पीछे निन्दा करनेवालों का बोलवाला है। दरअसल श्यामा-चकेवा के खेल का उद्देश्य है—भाई-बहन दोनों के हृदय में विशुद्ध प्रेम-भाव का संचार करना और चुंगला अपनी कलुषित चुगलखोर वृत्ति से उस प्रेम पर कुठाराघात करता है। इसीलिए इस खेल में हमारी बहनें चुगला की खिल्लियाँ उड़ाती हैं। चुंगला की मिट्टी की जो मूर्त्ति बनाई जाती है वह बेवकूफों की-सी। उसकी कमर में आर-पार छेद कर पाट के बारीक सूत लगा दिये जाते हैं, जिसको 'श्यामा-चकेवा' के खेल खेलनेवाली लड़कियाँ प्रतिदिन थोड़ा-थोड़ा करके जलाती हैं और निम्नलिखित गीत की बार-बार आवृत्ति करती हैं—

चुगला करे चुगली बिलइया करे म्याऊँ
ब ला चुगला के फाँसी दीउ
जहाँ हमर बाबा बइसे तहाँ चुगला चुगली करे
जहाँ हमर भइया बइसे तहाँ चुगला चोरी करे
बला चुगला के फाँसी दीउ

चुगला चुगली खाता है, और बिल्ली म्याऊँ करती है। चुगला को पकड़ लाओ। फाँसी दे दें। जहाँ हमारे पिता बैठते हैं, वहाँ चुंगला पीठ-पीछे दूसरों की निन्दा करता है। जहाँ हमारे भाई बैठते हैं, वहाँ चुंगला चोरी करता है। इसलिये चुगला को पकड़ लाओ। फाँसी दे दें।

(२) 'श्यामा-चकेवा' से किसी व्यक्तिगत भाई-बहन का ही बोध होता है। इसलिये इस खेल में 'सतभइया' नामक एक नवीन पात्र की कल्पना की गई है। 'सतभइया' का अर्थ है—'सात भाई'। इस नवीन पात्र की कल्पना करने का आशय यह है कि किसी व्यक्तिगत भाई-बहन का गुण गान न कर 'श्यामा-चकेवा' के खेल में भाग लेनेवाली सभी बहनों के भाइयों का व्यापक रूप से गुण-गान किया जाय।

'सतभइया' एक पक्षी भी होता है। लेकिन यहाँ 'सतभइया' को 'सात भाई' कह कर सभी भाई बहनो के लिये व्यापक अर्थवाला इसलिये बताया गया कि 'श्यामा-चकेवा' के खेल खेलने के समय 'सतभइया' की मिट्टी क

जो मूर्त्ति बनाई जाती है उससे किसी पक्षी-विशेष का बोध नहीं होता; 'सतभइया' की आकृति मनुष्य की-सी होती है। उनकी सख्या भी एक नहीं, सात होती है। 'सतभइया' शब्द का अर्थ हम पक्षी-विशेष उस दशा में करते, जबकि उसकी आकृति पक्षी की-सी बनाई जाती, और उनकी सख्या भी एक होती। किंतु, ऐसा नहीं होता।

'सतभइया' पात्र से सम्बद्ध जो गीत है उससे भी इसी कथन की पुष्टि होती है। मुलाहिजा कीजिये—

सामा चाको साम चाको अइह हे
कूँर खेत में वइसिह हे
सब रग पटिया ओछइह हे
ओहि पटिया पर कय-कय जना
सातो जना
एक-एक जना के कय-कय पुरि
एक-एक जना के सात-सात पुरि

ओ साम (श्यामा) चाको (चकेवा)! ओ साम चाको! कूँर खेत में आना, और प्रसन्न होकर बैठना। वहाँ हर रग का बिछावन बिछाना।

उस बिछावन पर कितने भाई बैठे?

सात भाई बैठे।

एक-एक भाई के हाथ में कितनी-कितनी पूरियाँ?

एक-एक भाई के हाथ में सात-सात पूरियाँ।

रेखाङ्कित पक्तियो और उनके अर्थ पर ग़ौर करना चाहिये।

(२) 'खँडरिच' शब्द खञ्जन का पर्याय है। मिथिला के गावों में 'खञ्जन' की जगह 'खँडरिच' ही प्रयुक्त होते हैं। खञ्जन शरद-ऋतु में आता है, और इसी ऋतु में 'श्यामा-चकेवा' के खेल भी खेले जाते हैं। इसलिये 'श्यामा-चकेवा' के खेल खेलनेवाली बालिकाएँ शरद-ऋतु के आगमन का अग्रदूत होने के कारण इसको अपने खेल के पात्रो में स्थान देती हैं, और इसके शुभागमन पर मगलात्मक गीत गाती हैं।

(४) वन-तीतर—'श्यामा-चकेवा' के गीत नदी किनारे, खेतों और वनों में गाये जाते हैं। इसलिए एक वनवासी पात्र की भी कल्पना की गई है। तीतर वन और झाडी-झुरमुटो में ही रहता है। इसीलिये इसको 'श्यामा-चकेवा' के पात्रो में स्थान मिला है।

(५) झाँझी कुत्ता—प्रत्येक व्यक्ति का अपना एक परिवार है। व्यक्ति ईकाई है, और ईकाइयो के जोड का नाम परिवार है। परिवार में मनुष्य, कुत्ते, बिल्ली, गाय, भैंस, बैल सभी शामिल है। गाँवो में जो गृहस्थ है उन सबके घर में प्राय एक पालतू कुत्ता होता है। इसलिए 'श्यामा-चकेवा' के खेल खेलनेवाली स्त्रियाँ जब वन-बागों, खेतों और जगलो में जाती है तो कुत्ते को भी साथ ले लेती है। 'श्यामा-चकेवा' के पात्रो में कुत्ते को स्थान मिलने का एक कारण यह भी है कि वन-बागो और जंगलो में रहनेवाले भेड़िये, सूअर आदि खूनी जानवरो से आत्म-रक्षा की जाय।

(६) 'वृन्दावन' का आशय वन-विशेष से है। लेकिन इसकी आकृति मनुष्य के मुख की-सी बनाई जाती है, और इसके शरीर में पतली-पतली लम्बी सींकें लगा दी जाती है। जब गीत गाती हुई लडकियाँ वन-बागो और खेतो में जाती है, तो इन सींकों में आग लगा देती है, और निम्न-लिखित पंक्तियो की जोर-जोर से आवृत्ति करती है—

वृन्दावन मे आग लागल कोइ न बुझावय हे
हमरा मे कोन भइया तिनहि बुझावय हे

वृन्दावन में आग लग गई है। हाय! कोई नहीं बुझाता। हमारे अमुक भाई है, वही इसे बुझायेंगे।

उपर्युक्त पात्रो को मूंज अथवा बांस के खपाचो की बनी चँगेरियो में रख कर खेल में शरीक होनेवाली लडकियाँ उनमें चिराग जला देती है, और उन्हें सिर पर लेकर झूमती हुई अपने टोले-मुहल्लो तथा गाँव की गलियो की परिक्रमा करती है। परिक्रमा की समाप्ति पर लडकियाँ लहलहाते हुए खेतो के किनारे, तुलसी के चबूतरे के निकट अथवा आम, इमली या नीम की छाँह में बैठ कर 'श्यामा-चकेवा' के पात्रो को अपनी-अपनी चगे-

रियों से निकाल कर जमीन पर रखती है, और उन्हें हरी दूब की नन्हीं-नन्हीं फुनगियां चरने को देती है। इस प्रकार पात्रों को चराने के बाद लड़कियां अपने-अपने ठिकाने लौट आती है।

'श्यामा-चकेवा' का खेल कार्तिक महीने के शुक्ल पक्ष की सप्तमी तिथि से प्रारम्भ होता है, और महीने के अन्त में अर्थात् कार्तिक की पूर्णमासी को समाप्त हो जाता है। पूर्णमासी के दिन खेल में भाग लेनेवाली बालिकायें केले के थम्भ का बेड़ा बनाती है, और अपने-अपने पात्रों को तोड़-फोड़ कर उस पर रख देनी है तथा रास्ते में पात्रों के कलेवे के लिए मिट्टी के एक बक्स में चावल, दूसरे में चूरा, और तीसरे में मिठाई और दही रख कर बेडे पर रख देती है। इसके बाद बेड़े को गांव के निकटवर्ती तालाब या नदी में छोड़ देती है। इस समय जो गीत गाये जाते हैं, वे 'श्यामा-चकेवा' की विदाई के गीत के नाम से प्रसिद्ध है।

यहां 'श्यामा-चकेवा' के कुछ चुने हुए गीत दिये जाते है—

(१)

जइसन नदिया सेमार तइसन भइया असवार
जइसन केरवा क थम्भ तइसन भइया क जाघ
जइसन धोबिया क पाट तइसन भइया का पीठ
जइसन रेशम क रेश तइसन भइया क केश
जइसन आम क फांक तइसन भइया क आंख
जइसन चन्ना विरीछ तइसन भइया हाथ क लाठी
जइसन जरल जराठी तइसन चुगला हाथ क लाठी

जिस प्रकार नदी के वक्ष स्थल पर सेवार छा जाता है, उसी प्रकार मेरा भाई घोड़े की पीठ पर सवार है।

जैसा केले का थम्भ होता है, वैसी ही मेरे भाई की जांघ है। जैसा धोबियों के कपड़ा साफ करने का लकडी का मजबूत पाट होता है, वैसी ही मेरे भाई की पीठ है।

जिस तरह रेशम के रेशे चिकने और मुलायम होते हैं, उसी तरह मेरे भाई के केश हैं। जैसी आम की फाँक होती है, वैसी ही मेरे भाई की आँख हैं।

जैसा चन्दन का वृक्ष होता है, वैसी ही मेरे भाई के हाथ की लाठी है, और जैसी अधजली जराठी होती है, वैसी ही चुगले के हाथ की लाठी है।

उपमायें वे ही हैं, जो ग्राम या ग्राम के आस-पास दीख पड़ती हैं। इसमें किसी प्रकार की टीमटाम या तड़क-भड़क नहीं।

(२)

किनकर हरिअर-हरिअर डिभवा गे सजनी
कोन बहिनो के चरइछइन चकेउआ गे सजनी
शरदेन्दु भइया के इहो हरिअर डिभवा गे सजनी
मणि बहिनो के चरइछन चकेउआ गे सजनी
किनकर राज-महाराज गे सजनी
किनका राजे खेलबइ झुमरिया गे सजनी
किनकर राज दुखराज गे सजनी
किनकर राजे कतवइ चरखवा गे सजनी
बवाक राज महाराज गे सजनी
भइया राजे खेलबइ झुमरिया गे सजनी
ससुरक राज दुखराज गे सजनी
स्वामी राज कतवौ चरखवा गे सजनी

हे सखी, यह किसकी जौ और गेहूँ की हरी-भरी कोपलें हैं? और किस बहन का यह चकेवा चर रहा है?

उसकी सखी ने उत्तर दिया—

हे सखी, यह शरदेन्दु भाई की जौ और गेहूँ की हरी-भरी कोपलें हैं, और मणिमेखला बहन का यह चकेवा चर रहा है।

हे सखी, किसका राज्य सुखमय होता है? किसके राज्य में श्यामा-चकेवा के खेल खेलूंगी? किसके राज्य में दुख झेलूंगी, और किसके राज्य में चर्खा कातूंगी?

उसकी सखी ने कहा—

हे सखी, पिता का राज्य सुखमय होता है। भाई के राज्य में 'श्यामा-चकेवा' के खेल खेलूंगी। श्वसुर के राज्य में दुख झेलूंगी, और अपने सजन के राज्य में चर्खा कातूंगी।

इस गीत से जान पडता है कि स्त्रियाँ श्वसुर के राज्य में कष्ट पाती हैं। सास-ससुर का व्यवहार बहू के प्रति प्राय रूखा होता है। मिथिला के गाँवो में ऐसी विरले ही सास है, जो अपनी बहू से सहानुभूति की दो बातें करें। गीत की अतिम पक्ति 'स्वामी राज कतवो चरखवा गे सजनी'–'हे सखी, मै सजन के राज्य में चर्खा कातूंगी' से पता चलता है कि वर्त्तमान चर्खा-आन्दोलन-युग के पहले भी हमारे यहाँ चर्खे चलाने का चलन था। और राजकुमारियाँ और रानियाँ तक चर्खे चलाना उन्नति और पर्दापोशी का साधन समझती थीं।

(३)

धान-धान-धान त भइया कोठी धान
चुगला कोठी भुस्सा
आरे वृन्दावन जारे वृन्दावन
भइया मुख पान चुगला मुख कोइला
मटर-मटर-मटर त भइया कोठी मटर
चुगला कोठी फटर
आरे वृन्दावन जारे वृन्दावन
भइया मुख पान चुगला मुख कोइला
चाउर-चाउर-चाउर त भइया कोठी चाउर
चुगला कोठी छाउर
आरे वृन्दावन जारे वृन्दावन
भइया मुख पान चुगला मुख कोइला
उरीद-उरीद-उरीद त भइया कोठी उरीद
चुगला कोठी फुरीद

आरे वृन्दावन जारे नृन्दावन
भइया मुख पान चुगला मुख कोइला

हमारे भाई की कोठी में धान भरे, और चुगले की कोठी में भूसा।

हे सखी, आओ हम वृन्दावन चलें। हमारे भाई के मुंह में पान पड़े, और चुगले के मुंह में कोयला।

हमारे भाई की कोठी मटर से भरे, और चुगले की कोठी में चूहे डड पेलें।

हे सखी, आओ हम वृन्दावन चलें। हमारे भाई के मुंह में पान पड़े, और चुगले के मुंह में कोयला।

हमारे भाई की कोठी में चावल पड़े, और चुगले की कोठी में राख।

हे सखी, आओ हम वृन्दावन चलें। हमारे भाई के मुंह में पान पड़े, और चुगले के मुंह में कोयला।

हमारे भाई की कोठी उर्द से भरे, और चुगले की कोठी में चूहे डड पेलें।

हे सखी, आओ हम वृन्दावन चलें। हमारे भाई के मुंह में पान पड़े, और चुगले के मुंह में कोयला।

इस प्रकार प्रत्येक अन्न का नाम जोड कर इस गीत की आवृत्ति की जाती है, और खेल में भाग लेनेवाली बालिकाएँ चुगले की खिल्लियाँ उडाती हैं।

(८)

सामा खेले गेलो मे इन्दुशेखर भइया केर टोल
चन्द्रहार हेराइ गेल हे भइया डलवा लय गेल चोर
चोरवा क नाम गे वहिनी वताए देहु हे मोर
चोरवा से चोरवा हो भइया अनजानु रइया वरजोर
गाडे यान्ह वन्हिया हो भइया रेशम केर हे डोर
जूता चढि मारिह हे भइया करेजवा मानाए मोर

अमुक भाई के मुहल्ले में मैं सामा खेलने गई।

हे भाई, वहाँ मेरा चन्द्रहार भूल गया, और मेरी चँगेरी किसी ने चुरा ली। भाई ने पूछा—हे बहन! कहो, उस चोर का नाम क्या है?

बहन ने कहा—हे भाई ! अमुक राय चोर हैं। उन्होंने मेरी चँगेरी और चन्द्रहार चुराये हैं। हे भाई, आप उसे कस कर रेशम के रस्से में बाँधें, और जूते से उसकी ख़बर लें। वह काँटा बन कर मेरे कलेजे में चुभ रहा है।

कभी-कभी ऐसा होता है कि 'श्यामा-चकेवा' के खेल खेलनेवाली बालिकाएँ अपने मिट्टी के पात्रों को जमीन पर रख कर गाती हुई दूर निकल जाती हैं, जब गाँव के शरारती लड़के उन्हें चिढाने के लिए उनके पात्रों को चुरा लेते हैं। इस गीत की गायिका ने किसी लड़के की इसी शरारत से तंग आकर अपने भाई से शिकायत की है, और उसको सीनाज़ोरी के लिए उसको उपयुक्त सजा देने का अनुरोध किया है।

(५)

सामा खेले गेलौं इन्दुशेखर भइया आँगन हे
आहे कनिया भउजो लेल लुलुआय
इहाँ रे कहाँ आएल हे
त जनि लुलुआउ भउजो जनि
पारु गारिओ हे
जयखन रहव माए-बापक राज
तयखन सामा खेलव हे
छूटि जयतइ माय-बाप क राज
छोड़व अहाँक आँगन हे
एतना वचनिया जब सुनलन भइया
भइया मारे लगलन तिरवा घुमाय
वहनिया मोरा पाहुन हे

हे सखी, अमुक भाई के आँगन में मैं सामा खेलने गई। वहाँ नवोढ़ा भाभी ने मुझे दुत्कारा कि तुम यहाँ कहाँ आई हो ?

मैंने कहा—हे भाभी, तुम मुझे इस तरह मत फटकारो। और न मुझे गाली दो। जब तक मैं माँ-बाप के राज्य में हूँ, तभी तक सामा खेलती हूँ। जब माँ-बाप का राज्य छूट जायगा, तो तुम्हारा आँगन भी छोड़ दूँगी।

जब मेरे अमुक भाई ने यह सुना तो वह आगबबूला हो गये, और तीर लेकर भाभी को मारने दौड़े। फिर उन्होंने भाभी को समझाया कि तुम बहन को इस तरह मत फटकारो। क्योंकि बहन हमारी पाहुन है।

इस गीत में दिखलाया गया है कि बहन के प्रति भाई के हृदय में कितना अगाध प्रेम होता है, और भाभी अपनी ननद के साथ कैसा रूखा सलूक करती है। निम्न-लिखित पद्य—

जबसन बहन माय-बाप क राज तब्बन नामा सोख्व हे
छूटि जयतः माय-बाप क राज छोटब जहाँ पर आँगन हे

बड़े ही मार्मिक और करुण-रस-पूर्ण हैं।

(६)

नदिया के तीरे-तीरे कौन भइया खेलत शिकार
कहि पठवथिन माइ हे मणि बहिनो
के समाद हे माइ
भइया अवथिन मेहमान गे माइ
माइ कोठी नहि बासम चउरवा
पनबसना नहि बीड़ा पान गे माइ
कोना राखब माइ कौन भइया केर मान
माइ हाट बाजार सं चउरवा मँगायब
तमोलिन घर बीड़ा पान
भरि विधि राखब बेटी
कौन भइया केर मान

नदी-किनारे अमुक भाई खेल रहे हैं।

हे सखी, उन्होंने मणिमेखला बहन को अपने आने की सूचना भेज दी है।

बहन ने जाकर अपनी माँ से कहा—

हे माँ, आज मेरे भाई आ रहे हैं। लेकिन न तो तुम्हारी कोठी में महीन चावल है, और न पान-पात्र में पान के बीड़े। फिर हे माँ, तुम किस तरह अमुक भाई का स्वागत करोगी?

माँ ने कहा—हे बेटी, बाजार से मैं महीन चावल मँगाऊँगी, और तमोलिन के घर से पान के बीडा। और इस तरह मैं तुम्हारे अमुक भाई का स्वागत करूँगी।

(७)

सामा खेले गेलो माइ हे कोन भइयक टोल
गोखुलक कँटवा लुबुकि धएलक सडिया
छाड छाड़ कँटवा लगउलि बड हे देरिया
मोर पछुअरवा दरजिया भइया हितवा
नान्हे टोपे सिइह दरजिया मोर चित्र सडिया
सडिया सिअउनि बहिनि की ए देब दनमा
चढे के घोडा देबौ काने दुनु सोनमा
अगिया लगएबो बहिनि काने दुनु सोनमा
जब हम जएबौ दरजिया अपन ससुररिया
सासु देबो दनमा ननद देबो दछिना

हे सखी, अमुक भाई के मुहल्ले में मैं सामा खेलने गई। वहाँ गोखुले के पैने काँटे से मेरी साडी क्षत-विक्षत हो गई।

हे काँटे, तुम मेरी साडी छोड दो। घर वापस जाने में मुझे बडी देर हो गई।

मेरे घर के पिछवाडे बसे हुए हे दर्जी, तुम मेरे हितचिन्तक हो। मेरी इस फटी हुई चित्रित साडी को बारीकी से सी दो।

दर्जी ने कहा—हे बहन, अगर मैं तुम्हारी साडी सी दूं, तो उसके पुरस्कार में तुम मुझे क्या दोगी?

नायिका ने कहा—हे दर्जी, चढने के लिए घोडा दूंगी, और तुम्हारे दोनों कान सोने से अलकृत करूँगी।

दर्जी ने कहा—हे बहन, चढने के घोडा में आग लगे, और तुम्हारे सुनहले आभूषण पर वज्र गिरे (मैं इन दोनो में से कुछ न लूंगा)।

तब नायिका ने कहा—हे दर्जी, तुम मेरी साड़ी भी दो। जब मैं अपने श्वसुरगृह जाऊँगी, तो साड़ी सीने के पुरस्कार में तुम्हें अपनी सास और ननद दूँगी।

गीतों में सास और ननद बहू की आँखो की किरकिरी होती है, ठीक उसी तरह जैसे सास और ननद की आँखो की किरकिरी बहू। इसीलिए इस नायिका ने दर्जी को कपड़े सीने के पुरस्कार में अपनी सास और ननद भेज देने का वचन दिया है। क्या गजब की सूझ है! न रहेगा बांस, न बाजेगी बांसुरी। घर में न सास और ननद रहेंगी, और न झगड़े होंगे। यदि सास और ननद इस गीत से नसीहत लें, और अपनी बहू के साथ शिष्टता से पेश आयें, तो यह आपस का टटा-बखेडा सदा के लिए मिट जाय।

(८)

हमरो से कोन भइया चतुरि सेयान हे
बमे ले लन कगजा दहिने खतियान हे
अपना लागि लिखिह भइया अन-धन लछमी हे
हमरा लागि लिखिह भइया सामा-जोट चकेवा हे
हमरा से कोन भइया चतुरि सेयान हे
बमे ले लन कगजा दहिने खतियान हे
अपना लागि लिखिह भइया चढने के घोड़वा हे
हमरा लागि लिखिह भइया हसा-जोड़ि चकेउआ हे

हमारे अमुक भाई, जो बड़े कुशाग्रबुद्धि और चतुर है, बायें हाथ में कागज और दायें में खतियान (एक तरह की देहाती बही) ले कर बैठे।

हे भाई, आप खतियान में अपने लिए अन्न-धन और लक्ष्मी, तथा मेरे लिए 'श्यामा-चकेवा' लिखें।

हमारे अमुक भाई, जो बड़े कुशाग्रबुद्धि और चतुर है, बायें हाथ में क़ाग़ज और दायें में खतियान लेकर बैठे।

हे भाई, आप खतियान में अपने लिए सवारी का घोडा लिखें, और मेरे लिए 'श्यामा-चकेवा' की जोडी।

यह गीत 'श्यामा-चकेवा' के खेल प्रारम्भ होने के दिन से एक-दो रोज पहले ही गाया जाता है। इसमें बहन ने अपने भाई से 'श्यामा-चकेवा' की जोड़ी खरीद लाने की फरमायश की है। इस गीत को पढने से पता चलता हैं कि हमारी बहनें 'श्यामा-चकेवा' के खेल खेलने की कितनी उत्सुक होती हैं।

(९)

आगे डिहुली आगे डिहुली सामा जाइछइ ससुरा कुछ
गहना चाहि गे डिहुली धला कोन सोनार के
गढवाइए देवउ गे डिहुली आगे डिहुली आ गे डिहुली
सामा जाइछइ ससुरा कुछ पौती चाहि गे डिहुली
धला कओन लोहार के बनवाइए देवउ गे डिहुली

हे सखी, सामा अपने श्वसुरगृह जा रही है, कुछ गहने की जरूरत है। उसकी सखी ने कहा—हे सखी, तुम अमुक सोनार को पकड लाओ। मैं उससे सामा के लिए गहने गढवा दूंगी।

हे सखी, सामा अपने श्वसुरगृह जा रही है। कुछ पिटारी की जरूरत है। उसकी सखी ने कहा—हे सखी, तुम अमुक लोहार को पकड लाओ। मैं उससे सामा के लिए पिटारी बनवा दूंगी।

यह सामा की विदाई का गीत है। कार्त्तिक पूर्णमासी के दिन जब 'श्यामा चकेवा' के खेल खेलनेवाली स्त्रियाँ केले के थम्भ का बेडा बना कर नदी-किनारे 'श्यामा-चकेवा' को विदा करने जाती हैं, तो यह गीत गाती हैं।

(१०)

निम्न-लिखित गीत में किसी बहन ने अपने भाई और भाभी की तारीफ के पुल बांधे हैं, और चुंगला तथा उसकी पत्नी की मखौल उड़ाई है। इनका मखौल उडाने का ढंग बडा आकर्षक होता है। दस-दस या सोलह-सोलह

युवतियों की टोलियाँ दो गिरोहो में बँट जाती हैं। फिर एक गिरोह की
युवतियाँ दूसरे गिरोह की हमजोलियों से व्यंग्यात्मक प्रश्न करती हैं—

हमर भइया कइसे अवें ?

अर्थात्, हमारा भाई किस प्रकार आवे ? दूसरे गिरोह की युवतिय
उत्तर देंगी—

हाथी पर बइस हँसइत आवें
पान में दाँत रगइत आवे
रुमाल में मुह पोछइत आवे
कँघी में केश झाडइत आवे

हाथी पर बैठ कर मुसकिराता हुआ आवे। पान से दाँतो को रँगत
हुआ आवे। रुमाल से मुँह साफ करता हुआ आवे। और कँघी से बा
सँवारता हुआ आवे।

हमर भऊजी कइसे आवे ?

अर्थात् हमारी भाभी किस प्रकार आवे ?

पालकी में बइस हँसइत आवे
सेनुर में माँग भरइत आवे
अयना में मुँह देखइत आवे

पालकी में बैठ कर हँसती हुई आवे। सिर में सिन्दूर-बिन्दी लगाती हु
आवे। और दर्पण से चेहरा देखती हुई आवे।

चुगला भँड़ुआ कइसे आवे ?

अर्थात् चुगला भँडुआ किस तरह आवे ?

गदहा पर बइस कनइत आवे
कोइला में दाँत रगइत आवे
कम्बल में मुँह पोछइत आवे
छूरा में केश ओछइत आवे

गधा पर बैठ कर रोता हुआ आवे। कोयला से दाँतों को रँगता हुआ आवे
कम्बल से मुँह पोंछता हुआ आवे। और उस्तरे से केश मुंडवाता हुआ आवे

चुगला वहू कइसे आवे ?

और चुगला की पत्नी किस तरह आवे ?

खटुली चढल मँड़ुहि कनइत आवे
कोइला मँ माँग भरइत आवे
खपडी सँ मुँह फोडइत आवे

खटोली पर चढ कर रोती हुई आवे। कोयला से मुँह काला करती हुई आवे। और खपडी (भँडभूजे का वर्तन) से सिर फोडती हुई आवे।

(११)

माइ गगा रे जमुनवा के चिकनिओ माटी
माइ आनि देहु कओन भइया गगा पइसि माटी
माइ वनाए देहु कनिया भउजो सामा हे चकेवा
माइ खेले जयता कओन बहिनो चारो पहर राती
कथि केर दियरा कथिए सुत वाती
कथि केर तेलवा जरए सारि राती
माटी केर दियरा पटम्बर सुत वाती
नेहवा के तेलवा जरए सारि राती
खेले लगलन मणि वहिनो चारो पहर राती
जरे लागल दिअरा झमके लागल वाती

गगा और यमुना की मिट्टी चिकनी होती है। हे अमुक भाई, गगा में पैठ कर मिट्टी ला दो न ?

और हे नवोढा भाभी, तुम मेरे लिए एक 'श्यामा-चकेवा' की मूर्त्ति बना दो। अमुक बहन आज रात के चारों पहर 'श्यामा-चकेवा' के खेल खेलेंगी।

किस वस्तु का चिराग है ? और किस वस्तु की वत्ती ? और उसमें किस वस्तु का तेल सारी रात जलेगा ?

मिट्टी का चिराग है, और रेशम की वत्ती। और उसमें प्रेम का तेल सारी रात जलेगा।

इस प्रकार चिराग़ जला कर मणिमेखला वहन रात के चारो पहर 'श्यामा- चकेवा' के खेल खेलने लगी। चिराग दुप-दुप कर जल उठा, और रेशम की वर्त्तिका झलमलाने लगी।

यह गीत उस समय गाया जाता है, जव वहन अपने भाई से 'श्यामा-चकेवा' की मूर्त्ति वनाने के लिए चिकनी मिट्टी लाने का अनुरोध करती है।

(१७)

डाला ले वहार भेलि वहिनो सुमित्रा वहिनो
शरदेन्दु भइया लेल डाला छीन सुनू राम सजनी
समुआ वइसल अहाँ वावू वरइता चाचा वरइता
अहँक पुता लेल डाला छीन सुनु राम सजनी
कथिए के तोहर डलवा गे वेटी दउरिआ गे वेटी
कथिए लगाओल चारु कोन सुनू राम सजनी
काच हो वाँस केर डलवा हो वावा
चम्पा-चमेली चारो कोन सुनु राम सजनी
दहु हे पुता वहिनिया के डलवा
सामा खेले जयति वडी दूर सुनू राम सजनी

हे सखी, सुमित्रा वहन सामा खेलने के लिए चँगेरी ले कर वाहर निकली। शरदेन्दु भाई ने उसकी चँगेरी छीन ली।

सुमित्रा वहन ने अपने पिता से जाकर फरियाद की—

हे शामियाने में वैठे हुए मेरे पूज्य पिता और चाचा, आपके वेटे ने मेरी चँगेरी छीन ली है।

पिता ने पूछा—हे वेटी, किस वस्तु की तुम्हारी चँगेरी है। और उसके चारो किनारे किस वस्तु से मढे है?

वेटी ने कहा—हे पिता, कांच वांस की मेरी चँगेरी है; और उसके चारो किनारे चम्पा-चमेली से मढे हैं।

पिता ने अपने वेटे को वुला कर कहा—हे पुत्र, तुम अपनी वहन की चँगेरी लौटा दो। वह सामा खेलने वहुत दूर जायगी।

कभी-कभी जब बहनें 'श्यामा-चकेवा' के खेल खेलने के लिए वन-बागो में निकलती है, तो अपने अल्पवयस्क भाइयों को भी साथ ले लेती हैं। खेल में प्राय: मतभेद हो जाया करते हैं, और भाई-बहन की पटरी नहीं बैठती। ऐसे मौकों पर यदि भाई तगडा पडा, तो वह अपनी बहन की चँगेरी छीन कर तोड-फोड डालता है। अगर बहन तगडी पडी, तो वह अपने भाई की खूब मरम्मत करती है। खेद के साथ लिखना पडता है कि हमारे इस गीत की बहन कमजोर है। इसीलिए उसने अपने भाई को दंड दिलाने के लिए पिता से फरियाद की है।

(१३)

कओन भइआ के इहो घनि फुलवडिया हे
कि कओन बहिनि लोढत चमेली फूल हे

यह घनी फुलवाडी किसकी है और यह कौन बहन चमेली का फूल लोढ रही है।

दूसरी बालिका जवाब देती है—

मोहन भइआ के इहो बाडी-फुलवाडी हे
कि चम्पा बहिनि तोडत चमेली फूल हे

यह मोहन भाई की फुलवाडी है, और यह चम्पा बहन चमेली का फूल लोढ रही है।

तीसरी कहती है—

फूलवा लोढइत बहिनिआ मोरा घामल हे
कि घामि गेल सिरक मेनुरवा हे
कि घामि गेल नयनक कजरवा हे
छतवा ले ले दउडल अवथिन मोहन भइया हे
कि बइसु बहिनि ए हो जुडि छँहिया हे
कि पनिया ले ले दउडल अवथिन कनिया भउजो हे
कि पिउ हे ननद इहो शीतल पनिया हे

कनिया भउजी के केसिया चँवर सन हे
कि ए हि केश गूँथबो चमेली फूल हे

फूल चुनते-चुनते मेरी यह सुकुमार वहन पसीने से तर हो गई है। उसके माथे की सिन्दूर-विन्दी और आँखों का स्नेहमय काला काजल भी पसीज (पिघल) गया है। और अपनी सुकुमार वहन को धूप से व्याकुल देख कर यह मोहन भाई छाता लेकर दौड़े आ रहे हैं और उसे छाँह में आराम करने को कह रहे हैं। अपनी ननद को पिलाने के लिए यह सुधा-सा शीतल पानी लेकर कनिया भौजी दौड़ी आ रही है। उनके श्वेत वाल चँवर के-से हैं। मैं उसमें चमेली का फूल गूथूंगी।

जट-जटिन

'जट-जटिन' एक ग्रामीण पद्य-बद्ध अभिनय है जिसमें 'जट-जटिन' प्रधान पात्र-पात्रिका है। आश्विन और कार्त्तिक के महीने में खिली हुई चाँदनी की रोशनी में मिथिला के अधिकाश गाँवों में यह अभिनय किया जाता है। इसमें केवल लडकियाँ और युवती स्त्रियाँ भाग लेती है। हाँ, पुरुष पात्र 'जट' का अभिनय करने के लिए एक लडका भी शरीक कर लिया जाता है। लडके 'जट' का अभिनय करते है, और लडकियाँ 'जटिन' बनती है। 'जट' कुमुदिनी के फूल का श्वेत हार और सिर में श्वेत मुकुट पहन कर सुसज्जित होता है। 'जटिन' भी फूल के गहने पहन कर अलंकृत होती है। दोनों पाँच-पाँच या छै-छै हाथ के फासले पर आमने-सामने खडे होते है। उनके अगल-बगल (जट-जटिन दोनों पक्ष से) प्राय एक-एक दर्जन युवतियाँ पक्ति-बद्ध खडी होती है, और परस्पर पश्नोत्तर के रूप में गीत गाती हुई अभिनय करती है।

'जट-जटिन' का प्लाट सक्षिप्त एकागी नाटक का-सा है। इसमें 'जट-जटिन' के वैवाहिक जीवन की गुत्थियाँ, सुख-दुख की धूप-छाँह, पुरुषों की पाशविक बलात्कारी प्रवृत्ति की बर्बरता, यौवन की विषम समस्याओ की अन्तर्ध्वनि आदि जीवन की अनेक अनुभूतियाँ स्वाभाविक ढग से चित्रित हुई है। 'जट-जटिन' के स्टेज डिरेक्शन्स सक्षिप्त है। भाषा चुलबुली और विनोदपूर्ण व्यग्य लिये है। 'जट' जो खेल का प्रधान पात्र है—बलात्कारी प्राणी है। वह 'जटिन' के साथ प्रणय-सूत्र में बँधने के पूर्व 'जटिन' के स्वाधीन व्यक्तित्व को कुचल देना चाहता है। दोनों में द्वन्द्व उठ खडा होता है। अन्त में 'जटिन' 'जट' के हाथ की कठपुतली बन जाती है, और उसके जीवन का स्वतत्र प्रवाह रुक जाता है।

कुछ उदाहरण देखिये।

(१)

जट और जटिन के विवाह का जिक्र छिड़ा हुआ है। दोनो के हृदय में एक दूसरे के प्रति प्रेम है। दोनो प्रणय-सूत्र में बँधना चाहते हैं, लेकिन जट एक ऐसी प्रेमिका की तलाश में है, जो प्राचीन आर्य-ललनाओ की तरह बुरी और भली सभी बातो में उसका अनुसरण करे। उसे उद्धत तथा अल्हड़ प्रेमिका पसन्द नहीं। अत वह विवाह की मनचाही शर्तों को भावी प्रेमिका जटिन के सामने पेश करता है—

(१)

नवहि पड़तउ हे जटिन
नवहि पड़तउ हे
जइमें नवतऽ धानक शिशवा
वइसे नवबे हे

नहिए नवबउ रे जटवा
नहिए नवबउ रे
बाबूक दुलारी बेटी
ऐंठिक चलबउ रे

नवहि पड़तउ हे जटिन
नवहि पड़तउ हे
जइमें नवतऽ केरक घौंदवा
वइसे नववय हे

नहिए नवबउ रे जटवा
नहिए नवबउ रे
जइमे चलतऽ बाँसक कोपरा
वइमे चलबउ रे

नवहि पडतउ हे जटिन
नवहि पडतउ हे
जइसे नवतइ कौनिक शिशवा
वइसे नवने हे

नहिए नवबउ रे जटवा
नहिए नवबउ रे
जइसे रहइ पोखरक पानि
वइसे रहबउ रे

हे जटिन, विवाह होने पर तुमको झुक जाना पडेगा। नम्र बन जाना पडेगा। जिस तरह धान की बाल फलने पर झुक जाती है, ठीक उसी तरह तुम्हें भी झुक जाना पडेगा।

किन्तु, जटिन को जट की शर्त्त पसन्द नहीं। बचपन से ही पिता के यहां स्वतंत्र वायुमंडल में पलने के कारण वह काफी अल्हड और गर्वीली हो गई है। अभी उसके बचपन का भोलापन दूर नहीं हुआ। उसके दिमाग में अपनी सखी-सहेलियों की अठखेलियां और धमाचौकडी घर किये हुई है। किसीके सामने झुक कर चलने का कभी उसे मौका ही नहीं मिला। वह कह रही है—

'रे जट, मैं अपने पिता की लाडली बेटी ऐंठ कर चलूंगी।'

जट कहता है—हे जटिन, तुमको झुकना पडेगा। झुकना ही पडेगा। जिस तरह केले के घौंद फलने पर झुक जाते हैं, ठीक उसी तरह विवाह के बाद तुम्हें भी झुक जाना पडेगा।

जटिन कहती है—हे जट, मैं कभी नहीं झुकूंगी, कभी नहीं झुकूंगी। जिस तरह बांस की कोंपल सीधी, ऊपर की ओर बढती है, उसी तरह मैं भी सीधी निर्भीक होकर चलूंगी।

जट कहता है—हे जटिन, तुमको झुकना ही पडेगा। झुकना ही पडेगा। जिस तरह कौनी (एक प्रकार का नाज जो फलने पर झुक जाता है) के शीश झुक जाते हैं, ठीक उसी तरह तुम्हें भी झुक जाना पडेगा।

जटिन जवाब देती है—हे जट, मैं कभी नहीं झुकूँगी। जिस तरह पोखरे का पानी गम्भीर और स्थिर रहता है, उसी प्रकार मैं भी दृढ़ और गम्भीर रहूँगी।

यह सार्वभौमिक सत्य है कि मनुष्य परतंत्र रहना पसंद नहीं करता। परतंत्रता एक अभिशाप है जो जीवन में अवसाद पैदा करती है। अचेतन पशु-पक्षी भी जो विवेक-बुद्धि से रहित हैं, जंजीर या किले की चहारदीवारी में बन्द रहना पसन्द नहीं करते। इस गीत की नायिका जटिन भी स्वाधीनता और समान अधिकार पाने की इच्छुक है जो स्वाभाविक है। लेकिन जट ने अपनी भावी पत्नी जटिन की बराबरी की शर्तों पर विवाह करने के प्रस्ताव का विरोध कर अपनी बलात्कारी प्रवृत्ति का परिचय दिया है। वास्तव में मनुष्य एक बहुपत्नीक बलात्कारी पशु है जो स्त्री से बलवान होने के कारण उस पर आधिपत्य रखता है। इंगलैंड के सुप्रसिद्ध तात्विक जान स्टुअर्ट मिल ने अपनी 'Subjection of women' नामक पुस्तक में लिखा है—

'मेरा विश्वास है कि स्त्रियों को आजाद करने में पुरुषों को इस बात का डर नहीं है कि स्त्रियाँ विवाह न करना चाहेंगी, लेकिन उनको ऐसी दहशत जरूर है कि वे बराबरी की शर्तों पर विवाह करने का हठ करेंगी।'

(२)

जट और जटिन दोनों दाम्पत्य-सूत्र में बँध चुके हैं—एक दूसरे से हिलमिल गये हैं। जटिन गहने पहनने को लालायित है। वह अपनी यह माँग जट के सामने पेश करती है—

जटा रे जटिन रे मँगवा भेल खाली
मगटिकवा तुहुँ कब लयबे रे

जटिन हे सोनरा छउ तोहर उजार
मगटिकवा त पेन्हाय देनउ हे

जटा रे जटिनि क डँडवा भेल खाली
मडिअवा तुहुँ कब लयबे रे

जटिन हे बजजा छउ तोहर इआर
मड़िअवा त पेन्हाय देतउ हे

जटा रे जटिनि क हथवा भेल खाली
चुड़िअवा तुहुँ कब लयबे रे

जटिन हे मनिहरवा छउ तोहर इआर
चड़िअवा त पेन्हाय देत हे

रे जट, तुम्हारी प्रियतमा जटिन का सिर खाली है। तुम मांगटीका कब लाओगे ?

जट कहता है—हे जटिन, सोनार तुम्हारा दोस्त है ही। वह मांग-टीका पहना देगा।

जटिन कहती है—हे जट, तुम्हारी प्यारी जटिन की कमर खाली है। चुंदरी कब लाओगे ?

जट जवाब देता है—हे जटिन, बजाज तो तुम्हारा यार है ही, वह तुम्हें चुंदरी पहना देगा।

जटिन कहती है—हे जट, तुम्हारी प्रियतमा जटिन के हाथ खाली है। चूड़ी कब लाओगे ?

जट कहता है—हे जटिन, चुड़िहारा तो तुम्हारा दोस्त है ही, वह तुम्हें चूड़ी पहना देगा।

(३)

जटिन की फिजूलखर्ची के कारण जट दिवालिया हो गया। उसके सिर की टोपी, हाथी के हौदे और हाथ के रूमाल तक बिक गये। जीविका का कोई अन्य उपाय न देख कर जट नौकरी करने के लिए परदेश जाने को अमादा है —

हाथी पर के हौदा बेचवओले हे जटिन
बेचवओलह हे जटिन
अब जटा जाइछइ विदेश

ओहु में उत्तम बनवा देबहे जटा
बनवा देब हे जटा
अब जटा नइ जाउ विदेश

हाथ क रूमलवा बेचवओल्हे हे जटिन
बेचवओल्ह हे जटिन
अब जटा जाइछड़ विदेश

ओहु में उत्तम हम भी देब हे जटा
हम भी देब हे जटा
अब जटा नइ जाउ विदेश

सिर के पगरिया बेचवओल्हे हे जटिन
बेचवओलह् हे जटिन
अब जटा जाइछड़ विदेश

ओहु सें उत्तम खरीद देब हे जटा
खरीद देब हे जटा
अब जटा नइ जाउ विदेश

जट कहता है—हे जटिन तुमने (फिजूलखर्ची के कारण) हाथी की पीठ का हौदा विकवा दिया। हाथी की पीठ का हौदा विकवा दिया। अब तुम्हारा प्रियतम जट परदेश जा रहा है।

जटिन जिसकी यदि कोई कामना है तो प्रेम की और जो अपने प्रियतम का वियोग सहन करने में असमर्थ है, जवाब देती है—हे प्रियतम, मैं उससे भी उम्दा हौदा बनवा दूंगी। उससे भी उम्दा बनवा दूंगी। तुम मत जाओ।

जट कहता है—हे लाडली जटिन, तुमने मेरे हाथ का रूमाल विकवा दिया। हाथ का रूमाल भी विकवा दिया। अब तुम्हारा प्राण परदेश जा रहा है।

जटिन जवाब देती है—प्रियतम, मैं उससे भी उम्दा रूमाल सी दूंगी। उससे भी उम्दा सी दूंगी। तुम परदेश मत जाओ।

जट कहता है—हे जटिन, तुमने मेरे सिर की पगड़ी बिकवा दी। तुमने मेरे सिर की पगड़ी बिकवा दी। तुम्हारा प्रियतम जट परदेश जा रहा है।

जटिन जवाब देती है—हे जट, मैं उससे भी उत्तम पगड़ी खरीद दूँगी। उससे भी उत्तम खरीद दूँगी। तुम परदेश मत जाओ।

(८)

तो कहाँ-कहाँ जाइछे बिरवा बाँधऽक
हम मोरंग जाइछी बिरवा बाँधऽक
तू किय-किय लयबे बिरवा बाँधऽक
हम टिकवा लायब बिरवा बाँधऽक
केकरा पेन्हयबे बिरवा बाँधऽक
हम जटिन के पेन्हायब बिरवा बाँधऽक
हम तोड़क नेरायब बिरवा बाँधऽक
हम फेर क गड़ायब बिरवा बाँधऽक

जटिन—हे जट, तुम बिस्तर बाँध कर कहाँ जा रहे हो?
जट—हे जटिन, मैं मोरंग देश जा रहा हूँ।
जटिन—हे जट, तुम मेरे लिए उपहार में कौन-सी वस्तु लाओगे?
जट—हे जटिन, मैं तुम्हारे लिए माँगटीका उपहार में लाऊँगा।
जटिन—हे जट, तुम माँगटीका किसे पहनाओगे?
जट—हे जटिन, मैं तुम्हें ही माँगटीका पहनाऊँगा।
जटिन—हे जट, मैं माँगटीका पहन कर तोड़ दूँगी।
जट—हे जटिन, मैं फिर माँगटीका गढ़ा दूँगा।

जट-जटिन का दाम्पत्य-जीवन प्रथम दर्शन-जनित अनुराग से रँगा हुआ है। स्त्रियाँ गहने पहनने की कितनी इच्छुक होती हैं, यह गीत इस बात का प्रमाण है। जटिन माँगटीका पहन कर तोड़ देने के मिस जट के प्रेम की परीक्षा लेना चाहती है। जट प्रेम की शिला पर आरूढ़ है। जट-जटिन का दाम्पत्य प्रेम गुण-श्रवण-जनित रागांकुरित अवस्था से विकसित हुआ है। वह फिर माँगटीका गढ़ा देने का वचन देकर अपनी व्यवहार-शील-सम्पन्नता

का परिचय देता है। जटिन की हठवादिता और निर्भीकता को देख कर हमारी सहानुभूति की मन्दाकिनी जटिन के प्रति उतनी नहीं उमडती, जितनी जट की सहनशीलता से उद्वेलित भावसकुलता की ओर।

(५)

जाय देहि हे जटिन देश रे विदेश
तोरा लागि लयबौं जटिन हँसुलि सनेश
हँसुलि तऽ रे जटा तरबऽक धूर
ठाढि रहि रे कुलबोरना नयनक हुजूर
जाय देहि हे जटिन देश रे विदेश
तोरा लागि लयबौं जटिन
सिकरी सनेश
सिकरी त रे जटा तरबक धूर
ठाढि रहि रे कुलबोरना नयनक हुजूर
जाय देहि हे जटिन देश रे विदेश
तोरा लागि लयबौं जटिन सडिया सनेश
सडिया त रे जटा तरबऽक धूर
ठाढि रहि रे कुलबोरना नयनऽक हुजूर

जट—हे जटिन, तुम मुझे परदेश जाने दो। मैं तुम्हारे लिए हँसली उपहार में लाऊँगा।

जटिन—कुल को पतन की खन्दक में गिरानेवाले रे जट, हँसली तो मेरे तलवे की धूल है। तुम मेरे हुक्म की तावेदारी में खडे रहो।

जट—हे जटिन, तुम मुझे परदेश जाने की इजाजत दो। मैं तुम्हारे लिए सिकडी उपहार मे लाऊँगा।

जटिन—रे कुल को पतन की खन्दक में गिरानेवाले जट, सिकडी तो मेरे तलवे की धूल है। तुम मेरे हुक्म की तावेदारी में खडे रहो।

जट—हे जटिन, तुम मुझे परदेश जाने की इजाजत दो। मैं तुम्हारे लिए चुँदरी उपहार में लाऊँगा।

जटिन—रे कुल-कलंक जट, चुंदरी तो मेरे तलवे की धूल है। तुम मेरे हुक्म की ताबेदारी में सदा खड़े रहो।

(६)

दूर - दूर रे जटा
दूर रहि हे रे जटा
मडल चाउर रे जटा
राख - छाउर रे जटा
बइगन भाँटी रे जटा
जुलुफ सँवारइत चल अइहे रे जटा
दूर - दूर हे जटिन
दूर रहिहे हे जटिन
सडल भात हे जटिन
सडल तीमन हे जटिन
सडल भाँटी हे जटिन
केशवा गुहइत चल अइह हे जटिन
दूर - दूर रे जटा
दूर रहिहे रे जटा
सडल चाउर रे जटा
राख - छाउर रे जटा
बइगन भाँटी रे जटा
धोतिया पेन्हइत जल अइहे रे जटा
दूर - दूर हे जटिन
दूर रहिहे हे जटिन
मडल भात हे जटिन
सडल तीमन हे जटिन
मडल भाँटी हे जटिन
टीकवा पेन्हइत चल अइह हे जटिन

जटिन—रे जट, तुम दूर हो जाओ। तुम मुझसे दूर ही रहो।

रे जट, तुम सड़ा हुआ चावल हो। बदबूदार बैंगन हो, और भस्म हुआ क्षार हो।

रे जट, तुम जुल्फ सँवारते हुए परदेश से लौटना।

जट—हे जटिन, तुम दूर हो जाओ। मुझसे दूर ही रहो।

हे जटिन, तुम सड़ा हुआ भात हो। सड़ी तरकारी, और सड़ा बैंगन हो। तुम वेणी सँवारते हुए मेरे पास आना।

जटिन—रे जट, तुम दूर हो जाओ। मुझसे दूर रहो।

रे जट, तुम सड़ा हुआ चावल हो। बदबूदार बैंगन हो, और भस्म हुआ क्षार हो।

यही अर्थ तीसरे और चौथे पदों का भी है। अंतर इतना ही है कि उनमें जुल्फ और केश के स्थान पर धोती और माँगटीका के नाम जोड़ दिये गये हैं।

(७)

बाँकीपुर के टिकवा रे जटा
केऊ-केऊ निरेखे रे जटा
केऊ-केऊ परेखे रे जटा
बाँकीपुर के टिकवा हे जटिन
हमहिं निरेखब हे जटिन
हमहिं पहिनायब हे जटिन
कटक क उ जे ककन रे जटा
केऊ-केऊ निरेखे रे जटा
केऊ-केऊ परेखे रे जटा
कटक क उ जे ककन हे जटिन
हमहिं निरेखब हे जटिन
हमहिं पहिनायब हे जटिन
सूरत क उ जे मोती रे जटा

केऊ-केऊ निरेखे रे जटा
केऊ-केऊ परेखे रे जटा
सूरत क उ जे मोती हे जटिन
हमहिं निरेखब हे जटिन
हमहिं पहिनाएब हे जटिन

जटिन—रे जट, बाँकीपुर का माँगटीका कोई बडभागी ही देख पाता है। कोई पारखी ही उसकी परख करता है।

जट—हे जटिन, बाँकीपुर का माँगटीका मैं ही देखूँगा, और मैं ही तुम्हें पहनाऊँगा।

जटिन—रे जट, कटक का कंकण कोई बडभागी ही देख पाता है, और कोई पारखी ही उसकी परख करता है।

जट—हे जटिन, कटक का कंकण मैं ही देखूँगा, और मैं ही तुझे पहनाऊँगा।

जटिन—रे जट, सूरत का मोती कोई बडभागी ही देख पाता है, और कोई पारखी ही उसकी परख करता है।

जट—हे जटिन, सूरत का मोती मैं ही देखूँगा, और मैं ही तुझे पहनाऊँगा।

(८)

अते त कमएले जटा की भेलउ न
सुनु मोरा जटा
जटिनि के मँगवा उदास लागय न
अते त कमइलि जटिन अहाँ लागि न
सुनु मोर जटिन
टिकवा गढाक सन्दुक में धएलि न
अते त कमएले जटा की भेलउ न
सुनु मोरा जटा

जटिनि के कनमा उदास लागय न
अते त कमइलि जटिन अहाँ लागि न
सुन मोर जटिन
तरकि गढा क सन्दुक मे धएलि न

अर्थ स्पष्ट है। इस गीत में जटिन ने गहने नहीं लाने के कारण जट को उलाहना दिया है।

(६)

चल-चल रे जटा यमुने के किनार
पान खइहे रे जटा पिक नेरइहे रे जटा
चल-चल हे जटिन यमुने के किनार
टिकवा बिकाइछइ लहरदार हे जटिन
त पेन्हे के पड़ी
टिकवा के नगवा भेल भारी रे जटा
त फेरे के पड़ी
चल-चल रे जटा यमुने के किनार
पान खइहे रे जटा पिक नेरइहे रे जटा
चल-चल हे जटिन यमुने के किनार
कठा बिकाइछइ लहरदार हे जटिन
त पेन्हे के पड़ी
कठा के बुन्दा बड भारी रे जटा
त फेरे के पड़ी

जटिन—रे जट, यमुना के तट पर चलो। वहाँ पान खाना, और पीक फेंक देना।

जट—हे जटिन, यमुना के तट पर चलो। वहाँ बहुत कीमती माँग-टीका बिकता है। तुम्हें पहनना होगा।

जटिन—रे जट, माँगटीका में जड़ा हुआ नग भद्दा लगता है। उसे बदलना होगा।

आज गुलाम जटिन वस करताह
हमरा जटा स मत वोलु जी।

जटिन-पक्ष—हमारी जटिन की मांग में टिकली शोभा देती है, वह अटा पर बैठती है। सडक पर हवा खाती है। आज वह जट को गुलाम बना कर रहेगी। हमारी जटिन से कोई मत बोले।

जट-पक्ष—हमारे जट के कान में कुडल शोभा देता है। वह घोडे पर चढ कर निकलता है। बैलगाडी पर हवा खाता है। आज वह जटिन को लौंडी बना कर रहेगा। हमारे जट से कोई मत बोले।

जटिन-पक्ष—हमारी जटिन के कानों में तरकी चमक रही है। वह अटा पर चहलकदमी करती है। सडक पर हवा खाती है। आज वह जट को गुलाम बना लेगी। हमारी जटिन से कोई मत बोले।

जट-पक्ष—हमारे जट की कलाई में घडी सुशोभित है। वह घोडे पर चढ कर निकलता है। बैलगाडी पर हवा खोरी करता है। आज वह जटिन को दासी बनाकर रहेगा। हमारे जट से कोई मत बोले।

इसी लडी के एक और गीत में जटिन अपनी भद्दी सूरत के कारण जट के हृदय में स्थान नहीं पाने की आशकाओं से उदास, चिंतित हो रही है। जट के साथ उसके प्रथम मिलन की आकुल उत्कठा घोर निराशा में परिणत हो गई है—

(१३)

नथिया गढयली अनमोल
नाक मोरा नीके न।
कोना जयवइ जटा क पलग पर
सूरत मोरा नीके न।
तरकी गढ़यली अनमोल
कान मोरा नीके न।
कोना जयवइ जटा के पलग पर
सूरत मोरा नीके न।

फुववा गढवयली अनमोल
माँग मोरा नीके न !
कोना जयवऽ जटा के पलग पर
सूरत मोरा नीके न !

नय तो मैंने अनोखी गढ़वायी, मगर मेरी नाक तो मोटी है। मैं जट के पलंग पर कैसे जाऊँ? सूरत तो मेरी भद्दी है।

तरकी तो मैंने अनोखी गढवायी, मगर कान तो मेरे टेढे हैं। मैं जट के पलग पर कैसे जाऊँ? सूरत तो मेरी भद्दी है।

शीशफूल तो मैंने अनमोल गढ़वाये, मगर मेरा सिर तो चिपटा है। मैं जट के पलंग पर कैसे जाऊँ? सूरत तो मेरी भद्दी है।

बारहमासा

पावस ऋतु में जो आनन्दोन्मत्त सगीत गाये जाते है वे 'बारहमासा', 'छौमासा' और 'चौमासा' के नाम से प्रसिद्ध है। 'बारहमासा' में वर्ष-भर का, 'छौमासा' में छै महीने का प्राकृतिक सौन्दर्य-वर्णन और 'चौमासा' में आषाढ, सावन, भादो और आश्विन महीने का प्रकृति-चित्रण होता है। सावन और भादो महीने में जब आसमान धुएँ के बादलो से आच्छन्न हो जाता है, पेडों के झुरमुट में कोयल कूकने लगती है, मेढक ठुमकियाँ भरता है, और रास्ता कीचड़ से लथ-पथ होकर मुलायम गलीचा बन जाता है तब खेतों में धान रोपते हुए मजदूर और घर में हिंडोला डाले हुई ग्रामीण देवियाँ अपनी रसीली तानों से सुधा टपका देती है।

'बारहमासा' मैथिली लोक-साहित्य की अनुभूत्यात्मक अभिव्यजना है। इसके नैसर्गिक सौन्दर्य के सामने कीट्स की हल्के पैर, गहरे नीलरग की बनफशा-सी आँखें, काढे हुए बाल, मुलायम पतले हाथ, श्वेत कंठ और मलाईदार वक्षप्रदेशवाली नायिका भी फीकी पड जाती है। 'बारहमासा' की भाव-धारा पुरानी शराब-सी चोखी, और चित्र देवदारु-सा स्वच्छ है। पद में शृगार की रोचक सरसता है। जिस तरह ग्रामीण वधू की लज्जाभ आँखों में काले रग का काजल उसके लावण्य में निखार ला देता है, उसी तरह वसन्त की पुष्प-श्री-सी रँगीन ग्रामीण कलाकारों की सूक्ष्म वृत्तियो ने 'बारह-मासा' के मुख-मरकत पर पन्ने का पानी चढा दिया है। अथवा कहिये कि जैसे नीलम पर धूप पडने से उसकी लावण्य-मुद्रा खिल जाती है, वैसे ही ग्रामीण कवियों की पारदर्शी आँखों का बिम्ब पडने से 'बारहमासा' के अवगुंठनमय सौन्दर्य में कला की कमनीयता आ गई है।

उदाहरणस्वरूप इस शैली के कुछ नमूने देखिए—

(१)

चैत हे सखि चरन चचल
चित्त नहि थिर चयन रे
मधुप गुजय बरिस मधु चुवि
रस-भगिन दुहुँ नयन रे

बङ्गाल्व जँ नवरग शोभा
आम दरगन देल रे
कुसुम सह-मह महक मह मह
श्याम कत चल गेल रे

जेठ वारिद नवल नवि-नवि
मदन रस वरसाय रे
रङनि वरि अन्हिआरि हे सखि
प्रान तनहि सुखाय रे

अषाढ घेरल पुहुमि भरि सखि
ताप तपल बुझाय रे
लता तरु सँ देखु लपटलि
पिउ कतए बिरमाय रे

सावन अहिनिशि वरिस बादरि
सून पहुँ बिनु खाट रे
कत दिना गत भेल हे सखि
सून पहुँ कर खाट रे

भादव गत सन भेल हे सखि
केहनि चमकत राति रे
बितल चारिहुँ मास वरसा
देल पिउ जिव साति रे

आसिन घर-घर वाज मगल
सकल ललना गाय रे
पुरल सवके आस कहु किय
करम हमर लिखाय रे

कातिक सखि सव मुदित खेलय
श्याम चकवा खेल रे
हम कतय वसि मेज पर सखि
नयन नीरम भेल रे

मास अगहन सवहिं ललना
फलित देखल भाग रे
ललित खेल पसार पहुँ सँग
विरह मन मोर जाग रे

पूस लघु दिन राति वडि थिक
केहन सुन्दर जोग रे
सुतलि रहितहुँ कत सग सखि
करम नहिं मोर भोग रे

माघ लहु-लहु शीत लागय
कुसुम फूटल झारि रे
हमर कत विदेश वस सखि
गेल मे परतारि रे

मास फागुन 'कुमर' भन पिउ
कतए करतो हे वास रे
केहन वासल रग राखल
व्यर्थ वारह मास रे

हे सखी, चैत का महीना आ गया। मेरे चरण चचल हो उठे, और मन व्याकुल हो गया। भौंरे गुञ्जार करने लगे। मधु चू-चू कर वरसने लगा और मेरी दोनो आखें आनन्द से नाच उठी।

वैशाख में नारगी की शोभा में निखार आ गया, और आम में वौर लग गये। फूलो की सुगध से दिशा-विदिशायें गमक उठीं। हाय! इस शुभ अवसर पर मेरे श्याम कहा है?

जेठ में वादल उमड-घुमड़ कर काम-रस की वर्षा करने लगे। हे सखी, आज की रात्रि वडी ही भयावनी लगती है। मेरे प्राण सूख रहे हैं।

हे सखी, आषाढ में जल से जमीन का चप्पा-चप्पा भींग गया, और तपी हुई पृथिवी की ज्वाला शान्त हो गई। देखो, लता वृक्षों से लिपट कर उनका आलिगन कर रही है। हाय! इस समय मेरे प्रियतम कहाँ रम रहे हैं?

सावन में वर्षा की झड़ी लग गई। मेरी सेज प्रियतम के विना सूनी है। हे सखी, प्रियतम के विना सेज सूनी हुए जाने कितने दिन वीत गये।

हे सखी, भादो दवे पांव खिसक चला। भादो की चाँदनी रात कितनी सुहावनी लगती है। धीरे-धीरे वर्षा के चारों महीने वीत गये, और मेरे निर्मोही प्रियतम ने मुझे गैरहाज़िरी की सख्त सज़ा दे दी।

आश्विन में घर-घर मगलमय वाजे वजने लगे। सखियाँ मगल गान गाने लगीं। लोगो की आशा पूरी हुई। लेकिन हे सखी, विधाता ने मेरा भाग्य कैसा खोटा वनाया?

कार्तिक में सखियाँ प्रसन्न होकर 'श्यामा-चकेवा' के खेल खेल रही है। हे सखी, हम इस सूनी सेज का अव किस प्रकार उपभोग करें। हाय! मेरी आँखें प्रियतम की इन्तज़ारी में दुख रही है।

अगहन में सखियो ने भाग्य का सौफल्य प्राप्त किया। वे अपने-अपने प्रियतम के साथ अनेक प्रकार के मनोरजन करती है जिससे मेरे मन में विरह की आग प्रज्वलित हो उठती है।

पूस में रात वडी और दिन छोटे हो गये हैं। अहा! यह कैसा सुन्दर

वइसाख हे सखि पिया नहि आयल
विरह कुहकत गात हे
दिन जँ कटए रामा रोवत-रोवत
कुहुकन वितए सारि गत हे

जेठ हे सखि आय वलमुआ
पूरल मन केर आश हे
सारि दिना सखि मगल गावति
रएन गँवाय पिया साथ हे

हे सखी, आषाढ का प्रथम महीना है। जल-धारायें सज-धज कर फूट वही हैं। राम ने सीता की इसी अटूट प्रीति के कारण समुद्र में पुल बाँधा था।

हे सखी, सुहावना सावन आ गया। रिमझिम बूदें बरस रही हैं। सब के प्रियतम अपने घर लौट आए, लेकिन मेरे प्रियतम अभी प्रवास में ही हैं।

हे सखी, भादों की भयावनी काली रात आ गई। आकाश में बादल कडक रहे हैं, और रह-रह कर बिजली चमक उठती है, जिसे देख-देख कर मेरा हृदय दहल रहा है।

हे सखी, आश्विन आया। लेकिन मेरी आशा पूरी नहीं हुई। आशा तो मेरी सौतिन कुबड़ी की पूरी हुई जिसने मेरे प्राणनाथ को भुला रक्खा है।

हे सखी, कार्तिक का शुभ महीना है। चलें हम गंगा-स्नान करें। लोगों ने नये-नये रेशमी परिधान पहने हैं। लेकिन मैं पुरानी—फटी गुदडी पहन कर ही दिन काटती हूँ।

हे सखी, अगहन की सुहावनी हरियाली निखर पड़ी। खेतों में चारों ओर हरे-हरे धान लहरा रहे हैं। चकवी-चकवा प्रेम-विभोर हो कर लालसा : मद में मत्त हो रहे हैं, जिसे देख-देख कर मेरा हृदय वाँसों उछल रहा है।

हे सखी, पूस आ गया। ओस की नन्हीं-नन्हीं बूँदें टपक रही हैं। मेरे

लम्बे-लम्बे केश भींग गये है। जाडा सुई की तरह प्रतिक्षण मेरा शरीर छेद रहा है, और मेरा कलेजा थर-थर कांपता है।

हे सखी, माघ आया। वसन्त ऋतु भी आई। जाडा दवे पांव धीरे-धीरे खिसक चला। यदि आज मेरे प्रियतम होते तो मुझको अपने कलेजे से लगा लेते, और यह जाड़ा आसानी से कट जाता।

हे सखी, फागुन में हमारी हमजोलियां रग घोल कर अपने-अपने प्रियतम के माथ रगरेलियां करती है, जिसे देख-देख कर मेरा मन तरस रहा है। वताओ, मैं किससे रग खेलूं?

हे सखी, चैत में वन-उपवन खिल उठे। नसो में विजली-सी दौड गई। देखो, गुलाव के फूल भी चिटख़ रहे हैं। हमारी हमजोली सखियां भी अपने-अपने प्रियतम के साथ प्रसन्न हो रही है। लेकिन मेरा फूल-शरीर ग़मगीन है।

और वैशाख भी आ गया। लेकिन मेरे निर्मोही प्रियतम नहीं आये। विरह की आग से मेरा शरीर भस्मीभूत हो रहा है। हे सखी, दिन तो रोते-रोते कटते हैं, और रात सिसकते-सिसकते बीतती है।

हे सखी, जेठ आया। मेरे प्रियतम भी आये, और मेरी आशा भी पूरी हुई। हमारी हमजोली सखियां दिन-भर मंगल गाती है। और, मैंने भी आज रात अपने प्रियतम के साथ विताई है।

(३)

आली रे घनश्याम विना व्याकुल राधा
जेठ मास नहि भावए चीर
मजु मनोहर यमुना तीर
ओढे मृगछाला योगिनि वेप
पुष्प हार छवि अति सुख देत
व्याकुल राधा

अपाढ मास घन गरजत घोर
रटत पपिहरा नाचत मोर

वक्साख ऊधव नहिं आय श्याम
कोना काटब हम ऊखम घाम
सूरश्याम आवत यदुराय
राधा मिलथि अग लगाय
आली रे घनश्याम बिना

हे सखी, घनश्याम के बिना राधा विरहाकुल हो रही है।

जेठ का महीना है। राधा को चुदरी नहीं भाती। वह मनोरम यमुना के तट पर मृगछाला धारण किये योगिनी बनी हुई है। फूल की माला उसके लावण्य को चारचाँद लगाती है।

हे सखी, घनश्याम श्रीकृष्ण के बिना राधा वियोगाकुल हो रही है।

आषाढ का महीना है। आसमान में बादल उमड रहे हैं। पपीहा 'पिऊ-पिऊ' की रट लगा रहा है, और मोर नाच रहे हैं। हे सखी, इस आषाढ महीने में श्रीकृष्ण के बिना चन्द्रिका और मोती के हार भार-से प्रतीत होते हैं। रत्न के सिंहासन में रेशम की डोर लगी है, और उसके चारों ओर मोतियों की झालर है। फिर भी यह हिंडोला कटक-सा खल रहा है।

सावन का महीना है। सखियों के साजन उनकी बाँह पकड कर उन्हें अपनी गोद में बिठा रहे हैं। हे सखी, घनश्याम श्रीकृष्ण के बिना राधा वियोगाकुल हो रही है।

भादों की भयावनी रात है। सेज सूनी है। बिजली कडक रही है। बादल का उमडना देख कर शरीर काँप उठता है। नदी और तालाब लबलबा कर उमड बहे हैं, और मेरा वियोगाकुल मन भी अधीर हो उठा है।

आश्विन में शरद्-ऋतु की ठड बढ गई। आसमान में चाँदनी छिटक गई, जिसे देख कर मेरा मन दुख रहा है। हे सखी, सुग्गे और चकोर बोलने लगे। हाय! मेरे नन्दकिशोर कहाँ चले गये?

कार्त्तिक में सुन्दरी नव सूत्र में गजमुक्ता के हार पिरोकर शृगार कर रही है। हाय! माधव नहीं आये। मै उन्हें आने के लिये सन्देश लिख भेजूंगी। न मालूम क्यों उनके छत्र-मुकुटकी शोभा स्मरण कर हृदय में शूल हो रहा है।

अगहन का महीना सुहावना लगता है। राधा श्रीकृष्ण के बिना विरहाकुल है। इस वार उनकी मुरली रग लायेगी,और मै उनके साथ अरण्य और वन-उपवन की सैर करूँगी।

पूस में ऊधो आये। उन्होने गोपांगना राधा को श्रीकृष्ण का पत्र दिया। राधिका श्रीकृष्ण का पत्र वांचती है,और उसकी आंखो से झर-झर अश्रुपात हो रहे हैं। राधिका कहती है—हाय ! मै श्रीकृष्ण के विना कैसे जिऊँगी ? गरल-पान कर शरीर त्याग दूंगी।

हे ऊधो, माघ आया। लेकिन मेरे प्रियतम नही आये। हाय ! मै किसके साथ वसन्त की वहार लूटूं ? अव मै योगिनी वन कर अलख जगाऊँगी और श्रीकृष्ण को योग का सन्देश लिख भेजूंगी।

फागुन में हमारी सखियां रग-क्रीडा में रत हो गईं। हे सखी, मै भी अपने अंग पर चन्दन और इत्र लगाऊँगी। व्रजागनाएँ चिन्ता-मग्न हो रही हैं कि हम अवला हैं और श्रीकृष्ण हमारी सौतिन कुब्जा के साथ रँगरेलियां करते हैं।

हे ऊधो, चैत का महीना आ गया। वन में गुलाव के फूल चिटख गये। मै फूल चुन-चुन कर हार गूथूंगी, और आज ही शुभ मुहूर्त्त विचार कर और शर्म को तिलाजलि दे कर मधुपुर जाऊँगी।

हे ऊधो, वैशाख आया। लेकिन मेरे सलोने श्याम नहीं आये। हाय ! मै चिलचिलाती हुई धूप की दोपहरी कैसे विताऊँ ? सूरदास कहते हैं—हे राधे, श्रीकृष्ण अवश्य आयेंगे और तुझसे प्रेमपूर्वक मिलेंगे।

(४)

उमडि वादल घिरे चहुँ दिशि
गरजि-गरजि सुनावही
श्याम ऐसो निठुर वालम
मास अषाढ ने आवही

सावन रिमझिम मेघ वरिसय
जोर सँ झरि लावही

मैथिली लोकगीत

चहुँ ओर चक्रित मोर बोले
दादुर शब्द सुनावहीं

भादव गरजत झहरि बरिसत
जोरि दमसत दामिनि।
श्याम बिनु सून सेजिया
रात डरपत कामिनि।

आसिन हे सखि आस लगाओल
श्याम अजहुँ न आवहीं
ताल भरि-भरि नीर हे सखि
विदित वर्षा हो गई

कातिक कामिनि रटत पिउ
निशि अकेली हम खई।
हम जिअव कोन हेत ऊधो
जोग वस ज्वानी गई

अगहन हे सखि श्याम नहिं
किछु कहि गेल
श्याम जी के कठिन हृदय
मोहि दुख दय गेल

पूस ऊधो जाहु मधुपुर
कोन जोगिनि वस किय
जाय हिलमिल केर किन्हा
हमरो के दुख दय गिय

माघ जाडा शीत गहरा
काहु के न पठाइय

छोड़ु सखि सब लाज तन के
चलहु मधुपुर छाइय

फागुन हे सखि होरि आयल
उर में उमडत आगिया
नाक बेसर सुरग चोली
तिलक थिक भल भाँतिया

चैत हे सखि पुहुप फूलय
से देखि भौंरा लुभाइय
रूप सुन्दर सिमहु सेवल
चलत मन पछताइय

बइसाख ऊधो जाहु मधुपुर
हरि सँ विपति जनाइय
हम त अबला दुखित हरि बिनु
हरि के आनि मिलाइय

जेठ ऊधो भेंट होय गेल
पुरल मन के आशिया
सूर कहे भजु कृष्ण राधा
पुरल बारहमासिया

आसमान में बादल उमड़ कर घिर आये—गरज-गरज कर घुमड पड़े। हाय! मेरे श्याम ऐसे निठुर हैं कि इस आषाढ महीने में भी नही आये।

सावन का महीना है। मेघ रिमझिम-रिमझिम बरस रहा है। बूँदियों की झड़ी लग गई है। मयूर और दादुर चारों ओर चकित होकर शब्द-संधान कर रहे हैं।

भादों का महीना है। बादल गरज-गरज कर डकार रहे हैं। दामिनी

जोरों में दमक रही है। हाय! श्याम के बिना मेरी सेज सूनी है, और भादों की इस भयावनी रात में मै अबला दहल रही हूँ।

हे सखी, आश्विन में मैंने आशा लगा रक्खी थी। लेकिन मेरे श्याम आज भी नहीं आये। हे सखी, नदी और तालाब जल से लबालब भर गये। यह दृश्य वर्षा की प्रसिद्धि की सूचना देते है।

कार्त्तिक का महीना है। और मै अबला 'पिऊ-पिऊ' की टेर लगा रही हूँ। सूनी रात है, और मै अकेली खड़ी हूँ। हे ऊधो, अब मै किसलिए जिऊँ? सावना में ही मेरे यौवन का अन्त हो गया।

हे सखी, अगहन का महीना है। मेरे सलोने श्याम बिना मुझसे कुछ कहे ही चले गये। हाय! श्याम का हृदय कितना कठोर है। वह मुझ अबला को दु:ख देकर चले गये।

हे ऊधो, पूस का महीना है। आप मधुपुर जायें, और देखें कि मेरे श्याम को किस योगिनी ने लुभा रक्खा है। वे स्वय तो वहाँ जा कर प्रेम-क्रीडा करने लगे, और मुझे दु:ख-समुद्र में डुबो गये।

माघ का महीना है। जाडे के आधिक्य के कारण जोरों की ठड पड़ रही है। हे सखी, अब वहाँ किसी दूसरे को न भेजो। चलो हम स्वय शर्म की जजीर तोड कर मधुपुर में जा विराजें।

हे सखी, फागुन का महीना है। चारो ओर होली की बहार है। हृदय में विरहाग्नि प्रज्वलित हो रही है। सखियाँ नाक में बेसर, और शरीर में सुन्दर कचुकी तथा माथे पर ईंगुर-बिन्दी धारण कर आनन्द-मग्न हो रही है।

हे सखी, चैत का महीना है। फूल चिटख गये है, जिसे देख-देख कर मधु-लोलुप मधुप गुन्जार करते है। और निर्गन्ध, पर चित्ताकर्षक शाल्मलि सुमन की सुन्दरता पर ये भौंरे लट्टू है, और वहाँ से हटने में पश्चात्ताप करते हैं।

हे ऊधो, वैशाख का महीना है। आप मधुपुर जायें, और श्रीकृष्ण से हमारी विपत्ति-वार्ता सुनावें। हम अबला श्रीकृष्ण के बिना गमगीन हो रही हैं। अत आप श्रीकृष्ण को ला कर हमें मिला दें।

हे ऊधो, जेठ में श्रीकृष्ण मिल गये, और मन की मुराद पूरी हुई। कवि 'सूरदास' कहते हैं कि इस प्रकार बारह महीने पूरे हुए।

(५)

चनन रगरु सुहागिन
गला मोहर माल
मोतियन माँग भरो रे
आयल मुख मास अषाढ
सावन अति दुख भारी
दुख सहलो ने जाय
एहो दुख सह रानी कुवरो
भादव रात अधरिया
मेघ बरिसन लागु
आसिन आस लगाओल
आनो न पुरल हमार
एहो आस पुर रानी कुवरो
जिन कत राखल लुभाय
कार्त्तिक निज पूर्णिमा
चलु सखि गगा स्नान
गगा नहाइत लट घुरमय
रावा मन पछताय
अगहन अग्र महीना
लयलन अग्रक चीर
चीर खोलि धयलो मन्दिर घर
मनमा मोर भेल उदास
पूसहि फूँह पड़िय गेल
भिजि गेल अग्रक चीर

जे लयलन विदेशी वालम
जिओ कत लाख वरीस
माघहिं निज पूर्णिमा
करितो व्रत त्योहार
हार सिंगार नव करितो
करितो व्रत त्योहार
फागुन फगुआ जँ खेलितो
रहितो रँगरेजवा क पास
इत्र गुलाव रग खेलितो
घोरितो वटाभरि अवीर
चैतहिं वेला फुलिय गेल
फुलि गेल सब रग फूल
फूल देखि भौंरा लोभाय गेल
गमकय हमर शरीर
बइशाखहि वँसवा कटइतो
छवइतो नवरगी बँगला
ओहि रे वँगलवा पइसि सुतितो
करितो भोग-विलास
जेठहिं हेठ होइय गेल
पुरि गेल वारहो जँ मास
'सुरहिंदास' वलिहारी
लेखा लेहु न विचार

हे सुहागिन, चदन घिसो। गले में मणि का हार पहन लो, और मोतियो से माँग सजाओ। आषाढ का सुखमय महीना आ गया। सावन में दुख का आधिक्य है। यह दुःख सहा नहीं जाता। यह दुःख का भार दासी कुब्जा ही सहे।

भादो की अँधेरी रात्रि है। झमाझम मेघ वरस रहे हैं।

आश्विन में मैंने आशा लगा रक्खी थी, लेकिन वह पूरी न हुई। आशा तो रानी कुब्जा की पूरी हुई, जिसने मेरे प्रियतम को लुभा रक्खा है।

आज कार्तिक की पूर्णिमा है। हे सखी, चलो गगा-स्नान कर आवें। गगास्नान करते समय राधा के घने रेशम से वाल नाच रहे है और वह मन-ही-मन पछता रही है।

अगहन का सर्वश्रेष्ठ महीना है। प्रियतम ने मेरे लिए एक बढ़िया साड़ी ला दी। मैंने वह चीर खोल कर मन्दिर में रख दी, और मेरा मन उदास हो गया।

पूस में ओस की बूंदें गिरीं। मेरी वह सुन्दर चीर भींग गई। इस चीर को मेरे प्रवासी प्रियतम लाये थे। हे सजन, तुम लाख वर्ष जियो।

माघ की पूर्णमासी है। काश मैं भी अपनी हमजोलियों की तरह व्रत-त्योहार करती। और अपने प्रियतम के पास रह कर फागुन में फाग की वहार लूटती। कटोरा-भर अवीर घोल कर तथा इत्र और गुलाव से रँग खेलती।

चैत में वेले के फूल खिल गये, और अन्य सभी प्रकार के रग-विरगे फूल देख कर भौंरे लोट-पोट हो रहे हैं, और मेरा शरीर भी सुगन्धि से महक रहा है।

मैं वैशाख में वाँस कटवा कर नौरगी बँगला छवाऊँगी। और उसी बँगला में रह कर प्रियतम के साथ क्रीडा करूँगी।

जेठ का महीना अत्यन्त हेय है। लो, ये वारह महीने पूरे हुए। कवि 'सूरदास' कहते हैं कि मैं तुम्हारी वलैया लूँ।

पद के अन्त में 'सूरदास' का नाम आया है। लेकिन यह साहित्य-ससार के चिर परिचित 'सूरदास' नहीं हैं।

(६)

चौमासा छन्दपरक

वितल वसन्त सखि कत विनु
लेल ग्रीषम प्रवेश

आवन अवधि व्यतित भेल
अव मोंहि लागु अन्देश
लागु डर जिय दमकि दामिनि
वरिसु जलधर नीर यो
विजुलि चमकत हृदय हहरत
वहत कठिन समीर यो
कारि रैनि भयाओन पहुँ विनु
शून्य सेज न भाव यो
जेठ जीवन झूठ पहुँ विनु
पलटि गृहि नहिं आव यो
जीवन धन जन योवन
तन मन सव हरि लेल
भूषण वसन शयन सुख
सव उत्तम लय गेल
कीन्ह सुख स्वारथ सभै
पहुँ दीन्ह दुख तन भार यो
अकेलि कामिनि कारि यामिनि
यौवन जीवक जजाल यो
रैनि चैन ने होय पहुँ विनु
वोलत दादुर मोर यो
वोलय पिहुआ विछुडि पहुँ सौं
पहुँ अषाढ ने आव यो

वारि वयस पहुँ तेजि गेल
वृद्ध वयस नहिं आय
परदेश परवस भेल पहुँ
सुधि वुधि सकल भुलाय

आवि घर की करत वालम
वारि वयस त्रिताय कै
पर नारि वश भेल परदेश
हमर सुधि विसराय कै
आव जौं पहुँ पलटि आओत
जीवत मोहि नहि पाव यो
विरह व्याधि उपाधि मनमिज
सावन सुख निराश यो
कतेक सहव दुख पिया विनु
अव दुख सहलो ने जाय
काहि कहव के वूझत
के पहुँ देत वजाय
पापी प्रान न जाय पहुँ विनु
नयन झहरत नीर यो
मासु मासा रहल तन मे
रुधिर न रहल शरीर यो
नासा धीर समीर निकसत
भवन भादव त्रास यो
मनमोहन नहि मिलत वालम
फेरि न जीवनक आस यो

अर्थ स्पष्ट है।

(७)

चैत हे सखी कुहुकि कोकिल
हृदय काम जगाव यो
कठिन श्याम कठोर मानस
ऋतु वसन्त विदेश यो

वइशाख हे सखी देखि उपवन
ललित कुसुम विकास यो
देखि निज कुच कुमुम मउलल
रहत धीर न थीर यो

जेठ कर सखि लेत चन्दन
पकज लेप शरीर यो
विनु नाथ चन्दन शीतलादिक
धधकि जारत देह यो

अषाढ हे सखी झहरि झमकत
नीर विजली जोर यो
देखि काँपत देह थर-थर
नयन-धारा-नीर यो

आयल सावन मेघ वरिसत
घुमडि घोर समीर यो
सुमरि योवन उमडि आवत
प्राणपति नहि साथ यो

भादव जलधर ठमकि ठमकत
खँसल च्योंकि अचेत यो
काहि कहु अव श्याम विनु सखि
जात जीवन मोर यो

आश आसिन अन्त कै सखि
गेल कन्त दुरन्त यो
शरद चन्द्रक चाँदनी लखि
जीवित चचल मोर यो

देखि कार्त्तिक नारि इक सखि
तान मर रतिनाथ यो
करत आकुल जीव छन-छन
कठिन कन्त हीं वन गयो

लखि जात धान समान अगहन
कमल-सम कुच कोर यो
रहि नाथ हाथ मरोरि कै सखि
देखि मेजि न थीर यो

पूस ओस बेहोश सखि सब
रहति बालम कोर यो
हम अकेली सून गृहि बिच
कोन विधि काटब रात यो

माघ कर्मक बात हे सखि
जुलुम करि गेल कन्त यो
अग-अग तन ज्वाल उठत
हृदय मे अति पीर यो

फागुन हे सखि आस पूरल
करब आज विहार यो
पिउ सग उड़त रग-अबीर यो

हे सखी, चैत का महीना है। कोयल अपनी काकली से हृदय में प्रेम-भावना का सचार करती है। हाय! निर्मम श्याम का हृदय कितना कठोर है कि वसन्त ऋतु में वह प्रवासी जीवन बिता रहे हैं।

हे सखी, वैसाख का महीना है। देखो, वन-उपवनो में ललित कुसुम चिटख गए। लेकिन अपने मन-कुसुम को म्लान देख कर चित्त का धैर्य जा रहा है।

जेठ में सखियां अपने कर-कमलो से चन्दन ले कर शरीर में लेप रही है। किन्तु, हाय! प्रियतम के बिना चन्दन की शीतलता भी मेरे शरीर को भस्मीभूत करती है।

हे सखी, आषाढ में वर्षा की झडी लग गई है, और बिजली जोरो में कडक उठी, जिसे देख कर मेरा शरीर थर-थर कापता है, और आंखो से अविरल अश्रु-धारा प्रवाहित हो रही है।

सावन आया। मेघ उमड-घुमड कर बरसने लगे, और वायु की गति तीव्र हो गई। हाय! यह स्मरण होते ही कि प्राणनाथ साथ में नहीं है, मेरे जोवन कडक उठते है।

भादो में बादल कडक-कडक कर कोलाहल करते है, जिसे सुन कर मै बेसुध हो रही हूँ। हे सखी, यह किससे कहूँ कि श्याम के बिना अब मेरे जीवन का ही अन्त हो रहा है।

हे सखी, आश्विन की आशा पर पानी फेर कर मेरे प्रियतम दूर देश में जा विराजे। हाय! शरद-चन्द्र की चाँदनी देख कर मेरा यौवन चचल हो रहा है।

हे सखी, कार्तिक में एक निस्सहाया अबला को देख कर रतिनाथ शर-सधान करते है जिससे मेरे प्राण प्रतिक्षण अधीर हो रहे है। हाय! मेरे कठोर प्रियतम मुझे छोड कर परदेश चले गये।

हे सखी, जिस प्रकार अगहन में धान के शीश फल कर झुक जाते हैं, ठीक उसी तरह मेरे कमल के समान प्रफुल्ल दोनों दुर्वह कुच झुक गये है। हे सखी, प्रियतम अनुपस्थित है, यह सोच कर मै हाय मसोस कर रह जाती हूँ और सेज सूनी देख कर मेरा धैर्य जाता रहता है।

हे सखी, पूस की ओस से बेहोश हो कर सभी स्त्रियां अपने प्रियतम की गोद में सुख के खर्राटे ले रही है। लेकिन मै एकाकिनी इस शून्य भवन में किस प्रकार रात विताऊँ?

हे सखी, माघ में मै अपने हालात क्या कहूँ? मेरे प्रियतम अन्धेर की

आंधी उठा कर गजब ढा गये। मेरे अंग-प्रत्यंग से विरह की ज्वाला उठ रही है जिससे हृदय में पीड़ा होती है।

हे सखी, फागुन में मेरी मुराद पूरी हुई। आज मैं अपने प्रियतम के साथ अबीर और गुलाल से रंग-क्रीडा करूँगी।

(८)

चौमासा छन्दपरक

नवल नव-नव विमल तरुअर
खेत धान पथार ए
क्रूर भानुक ताप लाघव
रइनि केहनि उजार ए
एहन अपरुब जोग हे सखि
कह कतय रह कन्त ए
वारि वयस बिताय वाला
कन्त वमल दुरन्त ए
आरे अगहन शीत पडल किछु आध
हम सखि पडलहुँ विरह अगाध

सगर जगरस वरिस हे सखि
सुरस वारिस भेल ए
आज वसि पिक कुंज में सुन
राग पंचम देल ए
सगरि राति बिताय जागय
हमहिं अबला नारि ए
झटिति आयब लिखब पाँती
गेल कहि परतारि ए
पूसहिं आयल जारक मास
सग मग शयन करब छल आस

शीत अविरल झरल नभ सँ
तनक ताप बढाय ए
नवल पात रसाल पाओल
हमर कमल सुखाय ए
पीत पटतर सग शयनक
भाग नहि विह देल ए
जाउ कहु गए चलहु पामर
रमनि झामरि भेल ए
माघक शीत लगय वर जोर
लेत कखन पिउ जामिनि कोर

मास फागुन रँगल तरु सब
जगत रग पसार ए
अबिर अओर गुलाव कुकुम
भरल जगत पथार ए
पहुँक सग खेलाय सखि सभ
निहत हमरहुँ आस ए
'कुमर' बरसक सारि मे इहो
पास चारिहु मास ए
ऋतुपति फेकल कुसुमक पास
रसमय आयल फागुन मास

नये-नये कोमल किसलय के निकल आने से वृक्षो की सुन्दरता निखर पडी। खेतो में धान का लावण्य फूट पडा। जलते हुए प्रचण्ड सूर्य के प्रखर प्रकाश में भी कुछ शीतलता आ गई, और अँधेरी रात्रि का अँधेरापन शुक्ल आभा में सन गया। हे सखी, इस अपूर्व अवसर पर कहो मेरे प्रियतम कहाँ विराज रहे हैं? बालिका ने किशोरावस्था विता कर युवावस्था में पदार्पण किया, और उसके प्रियतम दूर देश में छाये हुए हैं। अगहन में धीरे-

धीरे जाड़ा की मात्रा बढ़ने लगी। और हे सखी, लो मैं विरह की विषम घाटी से होकर गुजर रही हूँ।

हे सखी, सारे संसार में रस की धारा फूट बही है, और आज कोयल कुंज में पंचम तान में अलाप रही है। मैं अबला सारी रात जाग कर बिताती हूँ; क्योंकि मेरे प्राणनाथ यह आश्वासन दे कर चले गये कि वहाँ से शीघ्र वापिस आऊँगा, और पत्र-द्वारा कुशल-क्षेम लिखता रहूँगा। पूस आया, और जाड़े का मौसम भी आ गया। आशा थी कि अपने प्रियतम के साथ शयन करूँगी, लेकिन वह पूरी न हुई।

शरीर का विरह-अग्नि को प्रज्वलित करती हुई आसमान से अनवरत रूप से ओस की बूँदें झरने लगीं। आम के पेड नये-नये पत्तों से लद गये। लेकिन मेरा मुख-कमल म्लान हो गया। हाय! पीताम्बर के नीचे सुख-पूर्वक खर्राटे लेने का सौभाग्य विधाता ने मुझे नहीं दिया। हे सखी, तुम जाओ, और मेरे निर्मोही प्रियतम से जाकर कहो कि तुम्हारी प्रियतमा तुम्हारे वियोग में खिन्न हो रही है। माघ की ठंड बड़ी भीषण होती है। न मालूम मेरे प्रियतम कब मुझे अपनी गोद में लेंगे?

फागुन का महीना आया। पेड-पौधे अनुराग के रंग में रंग गये, और संसार भी राग-रंजित हो गया। सर्वत्र अबीर, गुलाल और कुंकुम की ढेर लग गई। हमारी हमजोलियाँ अपने प्रियतम के साथ रंग-क्रीड़ा करती हैं। लेकिन मेरी मनोकामना पूरी नहीं हुई। 'कुमर' कवि कहते हैं कि यह वर्ष चौपड का खेल है, और ये चारों महीने उस खेल के चारो पासे हैं। कामदेव ने कुसुम के पासे फेंके और यह फागुन का रसमय महीना आ गया।

यह चौमासा है। इसमें अगहन, पौष, माघ और फागुन महीने के ऋतु-सौन्दर्य का चित्रण है।

(६)

आय असाढ़ घटा घन घोर
चहुँ दिशि झींगुर मेढक शोर

पिया परदेशी तजय घर मोर
विनु पिया कडकत जोवन मोर
जिअव हम कयमे
मोर कन्त दुरन्तर छाय प्रीति शर लागे
सावन सुन्दरि सजत सिंगार
श्याम विना सव शोक अपार
वादल वरिसे नाचे वन मोर
पिउ पिउ रटत पपिहा चहुँ ओर
पिआ नहिं आवे
मोर कन्त दुरन्तर छाय प्रीति शर लागे
भादव भवन भयावन भेल
भाग्यहीन मोहि विधि कय देल
भजन अव करिहो धरि जोगिन भेस
छाय रहो पिया नित परदेश
मिल्यो नहिं हमसे
मोर कत दुरन्तर छाय प्रीति शर लागे
आसिन आस नाथ दय गेल
आस नास पिया विनु भेल
सुनु सव सखिया जिअव केहि भाँति
कठिन कठोर लगे दिन राति
नीद नहिं अँखिया
मोर कत दुरन्तर छाय प्रीति शर लागे
कातिक काम करत उपदेश
आगम शीतक वटत कलेश
मदन सर मारे लगे उर तीर
कन्त विना मोहि हरत के पीर
चीर नहि भावे

मोर कत दुरन्तर छाय प्रीति शर लागे
अगहन आय हेमन्तक रीत
मूढ प्राणपति तेजल प्रीत
रीत नहि जाने रसक कछु वात
प्राण पिया विनु किछु न सोहात
रात कोना कटिहो
मोर कत दुरन्तर छाय प्रीति शर लागे
पूस पडत पल-पल मे तुसार
प्राणनाथ विनु जाड अपार
पार कोना जइहो रहिवो केहि सग
पीतम कैल सवहि सुख भग
जग मद वान्हो
मोर कत दुरन्तर छाय प्रीति शर लागे
माघ मदन तन वढ़त तरग
सखि सव पिय सग रहत अनन्द
रगमहल में नित करत विहार
तरुनि तेजल मोहि तरुन गमार
विचार नहि उनके
मोर कत दुरन्तर छाय प्रीति शर लागे
फागुन हे सखि फाग वहार
रग अवीर अतर के विसार
सव दिन मे सुख मूल के दिन
त्याग पिया भे गेल परवीन
खीन भय रहिहो
मोर कत दुरन्तर छाय प्रीति शर लागे
चैत चमेली गुलाव नेवार
मजरल आम फूलल कचनार

हार गूथि लइहो देबो शकर शीश
पूजन के फल मिलत असीस
शीश पै रखिहो
मोर कत दुरन्तर छाय प्रीति शर लागे
माधव मोहन छाय दुरन्त
माधव के सग जीवक अत
कन्त बिनु पाय करि कोटि उपाय
मदन दहन तन गेल समाय
काय जरि जंहो
मोर कत दुरन्तर छाय प्रीति शर लागे
पहुँच अमावस जेठक मास
जीवननाथ पहुँच गेल पास
रास अब करिहो दुख भेल विनास
'बवन' भनथि यह वारहमास
आस सब पूरे
मोर कत दुरन्तर छाय प्रीति शर लागे

आषाढ़ आया। आसमान में घनघोर घटा घिर आई। चारो ओर झींगुर और मेढक कोलाहल करने लगे। मेरे प्रवासी प्रियतम ने मेरा परित्याग कर दिया। बिना प्रियतम के मेरा जीवन कढक रहा है। मैं प्राण रक्षा कैसे करूँ ?

मेरे प्रियतम दूर देश में छाये हुए है, और मुझे प्रीति के बाण घायल कर रहे हैं।

सावन का महीना है। सुन्दरियाँ, श्रृंगार करती है। श्याम के बिना शोक के बादल उमड रहे हैं। मेघ बरसते हैं। वन में मोर नाचते है। चारों ओर पपीहा 'पिऊ-पिऊ' की रट लगा रहा है। फिर भी मेरे प्रियतम नहीं आये।

हाय ! मेरे प्रियतम दूर देश में छाये है, और मुझे प्रीति के वाण घायल कर रहे हैं।

भादो में भवन की भयानकता बढ गई। विधाता ने मुझे भाग्यहीन बना दिया। मैं अब योगिन का वेष धारण कर भजन करूँगी। हे मेरे प्रियतम, यदि तुम्हारी यही मर्जी है, तो तुम अब परदेश में ही रमो, और मुझसे नहीं मिलो।

मेरे प्रियतम दूर देश में छाये हैं, और मुझे प्रीति के बाण घायल कर रहे हैं।

आश्विन का महीना है। प्रियतम मुझे झाँसा देकर चले गये, और मेरी मुराद उनके बिना पूरी न हुई। हे सखी, सुनो अब मेरे जीवन की रक्षा कैसे होगी? दिन-रात पहाड-से लग रहे है, और आँखो में नींद नहीं आती।

मेरे प्रियतम दूर देश में छाये हैं, और मुझे प्रीति के बाण घायल कर रहे हैं।

कातिक में कामदेव प्रेम का उपदेश देते हैं। जाडे के आगमन से क्लेश की मात्रा बढ जाती है। कामदेव तीखे तीरों की बौछार लगाते हैं, जो सीधे मर्मस्थल को बेधते हैं। हाय! प्रियतम के बिना मेरी वेदना का अन्त कौन करेगा? हे सखी, अब तो चीर भी नहीं भाती।

मेरे प्रियतम दूर देश में छाये हैं, और मुझे प्रीति के बाण घायल कर रहे हैं।

अगहन आया। हेमन्त ऋतु भी आई। हाय! मेरे वज्रदिल प्रियतम ने नेह का बन्धन तोड लिया। वह रस की रीति कुछ नहीं जानते। उनके बिना अब कुछ भी नहीं भाता। हाय! अब मैं रात कैसे काटूँ?

मेरे प्रियतम दूर देश में छाये है, और मुझे प्रीति के बाण घायल कर रहे हैं।

पौष आया। तुषार की वर्षा होने लगी। प्रियतम के बिना जाडा असह्य हो गया। मैं दिन कैसे काटूँ—किसके संग रहूँ? मेरे प्रियतम ने मेरे सारे सुखो का मूलोच्छेद कर दिया। उफ्! मेरे यौवन के उफान ने कठिन संग्राम छेड दिया है।

मेरे प्रियतम दूर देश में छाये हैं और मुझे प्रीति के वाण घायल कर रहे हैं।

माघ आया। शरीर में मदन तरंगित हो उठा। हमारी सखियां अपने प्रियतम के साथ सुखपूर्वक दिन बिताती हैं, और रंगमहल में क्रीड़ा करती हैं। मेरे नव-वयस्क प्रियतम ने मुझ नवयुवती का परित्याग कर अपनी जडता का परिचय दिया है। उन्हें कुछ भी ज्ञान नहीं है।

हाय, मेरे प्रियतम दूर देश में छाये हैं, और मुझे प्रीति के बाण घायल कर रहे हैं।

हे सखी, फागुन का महीना है। अबीर, गुलाल और इत्र की धूल उड रही है। यह दिन सभी दिनों की अपेक्षा सुखमय है। लेकिन मेरे साजन मेरा विस्मरण कर न मालूम कहां छा रहे हैं? हाय! अब मैं खिन्न हो कर दिन बिताऊँगी।

मेरे प्रियतम दूर देश में छाये हैं, और मुझे प्रीति के बाण घायल कर रहे हैं।

चैत में चमेली, गुलाब और नेवारी की बहार है। आम में बौर लग गये हैं, और कचनार के फूल खिल गये हैं। मैं हार गूँथ कर भगवान शंकर को चढाऊँगी, जिसके पुरस्कार में मुझे आशीर्वचन मिलेंगे। और मैं उन्हें सादर स्वीकार करूँगी।

मेरे प्रियतम दूर देश में छाये हैं और मुझे प्रीति के बाण घायल कर रहे हैं।

वैशाख आया। मेरे प्रियतम दूर देश में जा विराजे। हाय! प्रियतम के साथ ही मेरे जीवन का अंत हो जायगा। मैंने लाखों तदबीर की, लेकिन मेरे प्रियतम नहीं आये। काम की आग में इस शरीर ने प्रवेश किया और अब यह शरीर जल कर ही रहेगा।

हाय! मेरे प्रियतम दूर देश में छाये हैं, और मुझे प्रीति के वाण घायल कर रहे हैं।

जेठ की अमावश्या तिथि आ गई। मेरे प्राणनाथ भी आ गये। मैं अब रास-क्रीडा करूँगी और आज मेरे दु:ख का अन्त होगा। 'बबन' कवि कहते हैं कि यह बारहमासा पूरा हुआ, और वियोगिन नायिका की आशा भी पूरी हुई।

(१०)

आयल मास अषाढ़ रे
वर्षा ऋतु आयल[१]
शोच करे ब्रजनागरि रे
प्रीतम नहिं आयल

सावन शरद मोहावन रे
बरषे दिन राती
झिंगुर देत झकोरा[२] रे
सालै मोर छाती

भादव भवन भयावन रे
विरहिनि दुख भारी
दामिनि दमसि[३] डरावय रे
बिनु पुरुषक नारी

आसिन आस लगाओल रे
आसो ने पूरल हमार
कोन वैरिन वैरि सधाओल[४] रे
रोकल[५] नन्दकुमार

---

[१] आ गयी। [२] झकार। [३] दमक कर। [४] बदला लिया। [५] रोक रक्खा।

कातिक कन्त दुरन्त[1] गेल रे
लिखियो ने भेजल पाँती
घर घर दीप जरैत छल रे
जत छलिह अहिवाती

अगहन अग्र मोहावन रे
सखि सब गौनमा के जाय
हमहुँ अभागलि नारी रे
वैसलहुँ[2] देहरि झमाय[3]

पूसक जाड ठाढि भेल रे
मोरा बुते[4] सहलो ने जाय
झाडि-झाडि पलगा ओछावितहुँ रे
जौं गृह रहितथि मुरारी

माघहिं चढल वसत रे
यदुपति नहिं आय
एहन जीवन नहिं जीयव[5] रे
मरव जहर विष खाय

फागुन फगुआ खेलैतहुँ रे
सखि सब रग बनाय
अविर गुलावक मारि रे
सखि सब धूम मचाय

चैतहिं चित मोरा चचल रे
फूल फूल कचनारी

---

[1] दूर, प्रवास मे। [2] वैठ गई। [3] गमगीन होकर। [4] मुझसे। [5] जिऊँगी।

पिया मोर गेल परदेशवा रे
जे छल देशक ओरी

वैशाखक धूप मतौना[1] रे
मोरा बुने सहलो ने जाय
ऊँच कय बगला छववितहुँ[2] रे
हेरितहुँ बलमुजिक बारी।

जेठ मास बरसाइन रे
सखि सब बर[3] तर जाय
'सुकविदास' गुन गाओल रे
पूरल बारहमास

(११)

सात सखी अगली रामा सात सखी पिछली
चलि भेल यमुनाक तीर हे
एक सखी के रामा गागर फूटल
सब सखी मन पछताय हे
एक सखि अगिली रामा एक सखि पिछिली
सुनु सखि वचनि हमार हे
हमरो वचनिया सखि सासु आगु कहिह
कहिह मे वचनि बुझाय हे
छोटकि ननदिया रामा बड तिलबिखनी
दउडल जाय अम्मा जी के पास हे
तोहरो जँपुतहुँ अम्मा बिरहा के मातल
गागर अलथुन ह गँवाय हे

---

[1]मूर्च्छित कर देनेवाली। [2]छवाती। [3]वट-वृक्ष।

अइया खइअउ भइया खडअउ छोटकि पुतहुउआ
गागर वदल गागर देहु हे
तव हयत गृहि तोहर वास हे
खोइछा मे वन्हलि ढेउआ कउडिया
चलि भेल कुम्हरा दुआर हे
कहाँ गेले किए भेले कुम्हरा रे भइया
गागर के वदल गागर देहु हे
तव हयत गृहि हमर वास हे
छोटकि ननदिया रामा वड तिलविखनी
दउडल जाय भइया जी के पास हे
तोहर तिरइया रामा विरहा के मातल
गागर अलथुनह गँवाय हे
हरवा जोतइत वहिनि फरवा हेराय गेल
वयला के टुटि जाय नाथ हे
घोडवा जँ चले वहिनि टपटप उठय
हथिया चलय मघु चाल हे
पनिया भरइत वहिनि गागर फूटल
तिरिया क कोन अपराध हे
वएला के ताजन बहिनि वमे दहिनमे
घोडवा क ताजन लगाम हे
हथिया क ताजन वहिनि दुइ चार अँकुसा
तिरिया ताजन आधि रात हे

सात सखी आगे और सात सखी पीछे—इस तरह पक्ति-बद्ध हो कर यमुना-किनारे चलीं। उनमें एक सखी की गागर फूट गई, जिससे सव सखियाँ पश्चात्ताप करने लगीं। गागर फूट जाने के कारण वह अत्यन्त खिन्न हुई। उसने अपनी हमजोलियो से कहा—

हे पक्ति की अगली और पिछली सखी, सुनो हमारा वचन हमारी

सास से समझा कर कहना। हे सखी, मेरी छोटी ननद जहर की बुझी है। वह मेरी चुगली खाने माँ जी के पास दौड़ी जाती है।

ननद ने अपनी माँ से शिकायत की—

हे माँ, तुम्हारी पतोहू विरह से मतवाली है। उसने गागरी फोड़ दी है।

यह सुनते ही उसकी सास आगबगूला हो गई। उसने अपनी पतोहू से कहा—मैं तेरी मा और भाई को खाऊँ। मुझे मेरी गागर के बदले नई गागर ला दे। तभी तुम्हारा इस घर में वास होगा।

सास की यह दुत्कार सुन कर उसकी पतोहू आँचल में कौड़ी बाँध कर कुम्हार के घर गागर खरीदने चली।

हे कुम्हार भाई, तुम कहाँ हो? कहाँ गये? फूटी गागरी के बदले एक नई गागर गढ़ दो। तभी हमारा अपने घर में वास होगा।

हे सखी, मेरी छोटी ननद विष की बुझी है। वह मेरी चुग़ली खाने अपने भाई जी के पास दौड़ी जाती है।

ननद ने अपने भाई से शिकायत की—

हे भाई, तुम्हारी स्त्री विरह से मतवाली है। उसने गागर फोड़ दी है।

उसके भाई ने कहा—

हे बहन, हल जोतने के समय फाल खो जाती है, और बैल की नाथ टूट जाती है। और जब घोड़ा चलता है, तब उसके पैर से 'टप टप' आवाज होती है। हाथी की चाल धीमी होती है। इसलिए हे बहन, अगर पानी भरने के समय गागर फूट गई, तो इसमें पनिहारिन का क्या कसूर?

हे बहन, अगर बैल अपराध करे, तो उसकी सजा क्या है? यही न कि उसको जूए में दायें से बायें और बायें से दायें जोत दिया जाय, और घोड़े की सजा लगाम है। हे बहन, हाथी की सजा उसकी गरदन में अंकुश चुभाना है, और स्त्री की सजा यह है कि उसकी आधी रात में खबर ली जाय।

(१२)

प्रथम मास अषाढ हे सखि
राम अजहुँ न आवही
लषण के सग विकल हे सखि
सिया अति दुख पावही

मातु कोशिला करत आरती
सावन मोहि न भावती
कैकेयी गुण गायव हे सखि
जिय अति समुझावही

भादव हे सखि रइनि भयावन
लछमन धनुष चढावही
दामिनि दमसे मेघ बरसे
राम दरश देखावही

आसिन में सियाहरण हे सखि
राम अति दुख पावही
अजनिसुत हनुमान हे सखि
प्रीति बहुत लगावही

कार्तिक के असनान हे सखि
तीर्थ व्रत न भावही
विकल देखि सुग्रीव हे सखि
प्रीति से उर लावही

अगहन में सिया बक हे सखि
लकपुरि में छावही
उतर निशाचर घोर हे सखि
वानर भालु डरावही

पूस मे सिया फुल्ल हे सखि
कुम्भकरण जगावही
तजि शरासन लेल रघुवर
वाण बूंद झरि लावही

माघ मे सव ओर हे सखि
विषम जाडा लागही
रामलषण दुर देश हे सखि
खवर किछु ने पावही

फागुन मे सखि खेलत होरी
ताल मृदंग वजावही
आजु अवधपुर सून हे सखि
राम विनु नहिं भावही

चैत मे सव नहइत हे सखि
जे दयाफल पावही
राम लषण दूर देश हे सखि
खवर किछु ने जनावही

वइशाख में हनुमान हे सखि
लंकगढ़ झहरावही
जारि लंका भस्म कैलन्हि
राज विभीषण पावही

जेठ मे सिया भेंट हे सखि
राम अति सुख पावही
'दास गोपाल' एहो वारहमासा
सुयश तिहुँपुर गावही

हे सखी, आषाढ का प्रथम महीना है। आज राम नहीं आये। लक्ष्मण के साथ राम न जाने क्यों अधीर हो रहे हैं, और सीता अत्यन्त ही ग़मगीन हैं।

माता कौशल्या आरती उतारती है, और कहती हैं कि मुझे सावन नहीं भाता। हे सखी, हृदय बार-बार समझाता है कि कैकेयी के दुर्व्यहार पर दृष्टिपात न कर उनके गुण ही गाऊँ।

हे सखी, भादों की रात्रि इतनी भयावनी है कि लगता है जैसे लक्ष्मण धनुष पर बाण चढा रहे हों। बिजली चमकती है। मेघ बरसते है, और यह दृश्य राम की याद दिलाते हैं।

हे सखी, आश्विन में सीता का हरण हुआ, और राम के सिर पर दुःख का पहाड़ टूट पड़ा। राम की इस दुखद अवस्था में अजनि-पुत्र हनुमान उनके साथ सहानुभूति दिखा रहे हैं।

हे सखी, कार्त्तिक का स्नान और यह तीर्थ-व्रत नहीं भाता। हे सखी, राम को व्याकुल देख कर सुग्रीव उनसे मित्रता का सम्बन्ध स्थापित करते हैं।

हे सखी, अगहन में विपदग्रस्ता सीता लका में दिन काट रही है। और निशाचरों के दल बादलो की तरह उमड कर बन्दर-भालुओ को भयभीत कर रहे हैं।

हे सखी, पौष में सीता प्रफुल्ल दीखती है, और रावण अपने भाई कुम्भ-करण को युद्ध के लिए जगा रहा है। सग्राम छिड गया है, और रामचन्द्र धनुष-वाण सधान कर वाण-वर्षा करते हैं।

हे सखी, माघ में सभी जगह विषम जाडा का प्राबल्य है। हे सखी, राम-लक्ष्मण दूर देश में विराज रहे हैं, और उनकी कोई खबर नहीं मिली।

हे सखी, फागुन में सब होली खेल रहे है, और झाल-मृदग बजाते हैं। आज मेरी अयोध्या नगरी सूनी है, और राम के बिना उदासी छायी है।

हे सखी, चैत में सब सुखपूर्वक स्नान कर पुण्य-फल लूटने लगे। राम-लक्ष्मण दूर देश में हैं। वहाँ की कोई खबर नहीं मिलती।

हे सखी, वैशाख में हनुमान लका के दुर्ग को कम्पायमान कर रहे हैं।

लंका का गढ़ जल कर क्षार हो गया, और रावण का भाई विभीषण गद्दीनशीन हुआ।

हे सखी, जेठ में राम और सीता का मिलन हुआ। दोनों अत्यत प्रसन्न हैं। कवि 'गोपालदास' कहते हैं कि इस बारहमासे का कीर्त्तिगान तीनों लोक में व्याप्त हो।

(१३)

कोना हम रइनि गँवाऊ हे ऊधो
नहि आयल घनश्याम हरी
आय अषाढ उमडि गेल वदरा
वरिसत वूंद सघन घहरी

साओन सखि सव डारे हिंडोरा
झूलि झूलि रहय पिया सग में
हम धनि सोचत ठाढि अटरिया
हमरो विरह तन दय कुवरी
दादुर मोर मदन सर जोरे
उठत विरह तन गात जरी

भादव ताल तरग उमडि गेल
देखि देखि सखि सव सोच भरी
आजु सेआम सलोने न अयताह
खयवो जहर विस घोर मरी

आसिन आस रहे भरि पूरन
मोतिया मँगाय गूँथव चोटी
गिरिजा के स्वामी आयल मनमोहन
सखिया सहित मन मोद भरी

ऊधो, मैं रात कैसे काटूं? मेरे घनश्याम कृष्ण नहीं आये।

आषाढ़ आ गया। बादल उमड पडे। बूंदें रिमझिम-रिमझिम बरस रही हैं। हे ऊधो, मैं रात कैसे काटूं? मेरे घनश्याम कृष्ण नही आये।

सावन आ गया। सखियां हिंडोले डाल-डाल कर अपने-अपने प्रियतम के साथ झूला झूलती हैं। और हे प्रियतम, मैं अपनी अटारी पर खडी-खडी चिन्तामग्न हूँ। कुब्जा ने हमें विरहाकुल कर दिया है। दादुर और मोर मदन के तीखे तीर से बेध रहे हैं, और विरह की ज्वालाएँ शरीर को जला रही हैं। हे ऊधो, मैं रात कैसे काटूं? मेरे घनश्याम कृष्ण नहीं आये।

भादों भी आ गया। तालाब उमड बहे, जिसे देख-देख कर सखियां चिन्तित हो रही हैं। यदि आज मेरे सलोने श्याम नहीं आये तो ज़हर पान कर शरीर त्याग दूंगी। हे ऊधो, मैं रात कैसे काटूं? मेरे घनश्याम कृष्ण नहीं आये।

आश्विन आ गया। मेरी आशा भी पूरी हो गई। मैं आज मोतियो से अपनी कवरी सँवारूँगी। मेरी सखी गिरिजा के प्रियतम मनमोहन भी आ गये। वह भी अपनी हमजोलियों के साथ उत्सव मना रही है।

(१४)

सखि रे बिति गेल तरुण तरग
परदेशि मनमोहन रे
चैत मदन धनुषा शर लय
मोहि मारत है दिन रात
विरह के गान चढे तन मे
छन जुग सम विति जात
परदेशि मनमोहन रे
माधव मधुकर गेल मधयपुर
आवन दिन नहि देल
मन मँह सोचि रहे मदमाती
मस्त वसन्त विति गेल
परदेशि मनमोहन रे

जेठ जड़ित तन विरहक ज्वाला
उत्तम लगय दिन रैन
पल-पल पिय-पिय रटत पपिहरा
पिय बिनु जिव नहिं चैन
परदेशि मनमोहन रे

आय अषाढ न आयल पिय घर
दामिनि दमकत जोर
चहुँ दिशि बादल उमड़ि घुमड़ि गे
झिंगुर भेढक शोर
परदेशि मनमोहन रे

सावन सखि सब श्याम घटा लखि
साजत सकल सिंगार
मन सन पवन लगय सर उर मे
तेजि गेल तरुणि गवार
परदेशि मनमोहन रे

भादव भवन भयावन भामिनि
भय गेल वर्षा क भीर
चिहुँकि चकित चहुँ ओर निरेखे
कतहुँ न भेंटय पहुँ वीर
परदेशि मनमोहन रे

आसिन अब नहि अचरज
अगक अत करव हिय हाय
आस पुरे नहिं काह पुकारो
भसम करव तन जार
परदेशि मनमोहन रे

कातिक कन्त कठोर हृदय कत
कामिनि करत कलोल

कमल कली कुच कोमल काँपे
सुखत कपोल अमोल
परदेशि मनमोहन रे
शीत वढे सव शालि सम्हारत
विहरत सखि पिय सग
अजहुँ ने आवत अगहन वीते
हम न जिअव विनु कत
परदेशि मनमोहन रे
प्राणपिया परदेश तजे नहि
पडत तुपार अपार
पलग पकडि पछतावत वीते
पिय विनु पुसक वहार
परदेशि मनमोहन रे
माघ मनोरथ पुरत भामिनि
मन जनि करिय उदास
मनमोहन मधुपुर तजि मिलिके
करत विपति केर नास
परदेशि मनमोहन रे
फागुन फाग खेलो तुअ नागरि
नागर पहुँचल पास
फागुन आस प्रियतम सग पूरे
पुरि गेल वारहमास
परदेशि मनमोहन रे

चैत का महीना है। मदन धनुष-वाण सन्धान कर मुझे दिन-रात अपना लक्ष्य वना रहा है। शरीर में विरहाग्नि धू-धू कर धधक रही है, और एक-एक क्षण युग के समान प्रतीत होता है। हाय! मेरे मनमोहन प्रवासी हैं, और हे सखी, मेरी तरुणाई की तरग शिथिल पड रही है।

वैशाख में मेरे प्रियतम मधुपुर चले गये। वहाँ से लौटने की तिथि भी निर्धारित नहीं की। मैं मद में बौरी प्रतिक्षण शोक-सिन्धु में डूबती-उतराती हूँ। हाय। आज वसन्त का महीना भी बीत गया।

जेठ में विरह की ज्वाला से मेरा शरीर जल रहा है। ताप की अधिकता के कारण दिन-रात उष्ण प्रतीत होते हैं। पपीहा प्रतिक्षण 'पिऊ-पिऊ' की रट लगाता है, और प्रियतम के बिना जी बेचैन है।

आषाढ़ का महीना आ गया। लेकिन प्रियतम घर वापिस नही आये। दामिनी जोरों में दमक रही है। आसमान में बादल चारो ओर उमडते हैं तथा मेंढ़क और झींगुर शब्द-शर-सन्धान कर रहे हैं।

सावन में आसमान में उमडती हुई काली घटा देख कर सभी सखियाँ अपने को अलकृत करती हैं। सन-सन बहती हुई वायु हृदय में तीर की तरह लगती है। हाय! मेरे नादान प्रियतम ने मुझ अबला का परित्याग कर दिया।

भादों के महीने में नायिका का भवन भयावना हो गया। वर्षा की झडी लग गई। विरहिणी चौंक-चौंक कर चारो ओर आश्चर्य-चकित हो देख रही है। फिर भी उसके प्रियतम कहीं दृष्टिगोचर नहीं होते।

आश्विन का महीना आया। आश्चर्य नहीं कि मैं अपने शरीर का अन्त कर दूँ। हाय! मेरी चिर-सचित आशा पूरी न हुई। मैं इस दारुण विपत्ति में किसे पुकारूँ? हे सखी, अब इस शरीर को जला कर क्षार कर दूँगी।

हा! कार्त्तिक के महीने में मेरे कठोर-हृदय प्रियतम कहाँ किस रमणी के साथ विहार कर रहे हैं? कमल की कली के समान मेरे ये कोमल वक्ष-प्रदेश काँप रहे हैं, और मेरे अनमोल कपोल सूख रहे हैं।

शीत का आगमन हुआ। सब अपने-अपने खेतों से धान सँभाल कर ला रहे हैं, और मेरी हमजोलियाँ अपने प्रियतम के साथ विहार करती हैं। इस तरह धीरे-धीरे अगहन भी बीत चला। लेकिन मेरे प्रियतम आज भी नही आये। मैं प्रियतम के बिना कैसे जिऊँगी।

मेरे प्रियतम परदेश का परित्याग नहीं करते। तुषारपात बड़े जोरों में हो रहा है। हाय! मैं अपनी सेज पर तड़प रही हूँ कि प्रियतम के बिना पौष की बहार यों ही बीत गई।

कवि कहता है—हे नायिके, ग़मगीन न हो। माघ में तुम्हारी मनोकामना पूरी होगी। मनमोहन मधुपुर छोड़ कर तुमसे मिलेंगे और तुम्हारी विपत्ति का नाश होगा।

हे सुन्दरी, लो तुम्हारे प्रियतम आ गये। अब फागुन में होली की बहार लूटो, और प्रियतम के साथ तुम्हारी आशा पूरी हो। इस तरह ये बारह महीने पूरे हो गये।

(१५)

चैत चित लै चोर चलि गेल
चातक चन्द्र चकोर यो
चन्द्रमुखि चकुआन चहुँदिशि
दैव दुख देल मोर यो

माधव मधुकर मारि गेलाह
नदन मदनन बोल यो
नंद माधव मोहि कहि गेल
मास कठिनहि आय यो

जेठ जगमग जडित ज्वाला
युगल कुच जगाय यो
जलद जल लय जीव के देल
कंत डुमरिक फूल यो

असाढ आयल आदि वर्षा
आदि काम अपार यो

अब बनि नहि धर्म बाँचत
साजि नाचत मोर यो
सावन सुन्दरि सेज काँपत
पंच सर मत साजि यो
सरस वनिता सर सताओल
अजहुँ पति नहि आय यो

भादव भदवा भय भयानक
भवनपति नहि भाव यो
भेक भुवि रव मार भामिनि
काटब आब कोना रात यो

आसिन आसक अखिर आयल
आस भेल निराश यो
आस अब मोहि पूर नहिं भेल
प्राणनाथ बिसारि यो

कातिक काम कठोर कामिनि
काम कोप अकुलाय यो
कंत आयत काम कहि देहु
देब अधरक पान यो

आयल अगहन अवधि आयो
सबके काँपल अंग यो
अंग बिनु हम अंग जारब
धरब जोगिनि भेष यो

पूस पल छिन परत पाला
प्राणपति नहि पास यो

पलग पर दुख पाय विनु
जोर जोवन जाड यो

माघ मनसिज मन मनोरथ
मदन चलल विमान यो
मूढ मधुकर मोहि मारल
हमर नहि किछु दोष यो

फागुन फगुआ कत आयल
खेलब फागुन फाग यो
भनथि 'नेवालाल' फागुन
पुरल बारहमास यो

चैत में प्रियतम चोर-सा मेरा चित्त चुरा कर चले गये, और मैं चन्द्र के चकोर की तरह चकित हो गई।

वह चन्द्रमुखी चारों दिशाओ में चकित हो कर देख रही है, और कहती है—हाय! दैव ने मुझे कितना दुख दिया?

वैशाख में मेरे प्रियतम मुझे निष्प्राण कर चले गये, और यह मद-मत्त मदन अपना शर-सन्धान कर रहा है। मेरे निर्बुद्धि प्रियतम मुझे झूठी दिलाशा दे कर चले गये, और यह कठिन महीना आ पहुँचा।

जेठ की चिलचिलाती हुई धूप की प्रचड ज्वाला। मेरे युगल उरोज तरंगित हो रहे हैं। जलद जल देकर जीवन-दान करता है, और मेरे प्रियतम गूलर के फूल हो रहे हैं।

आषाढ का प्रारम्भिक वर्षा-काल आ पहुँचा। कामदेव ने अपने दल-बल के साथ आक्रमण किया। नर्त्तक मयूर सज-धज कर नृत्य करने लगे। हे सखी, अब धर्म बचना असम्भव प्रतीत होता है।

सावन का महीना आया। सुन्दरी अपनी सेज पर कांप रही है। हाय! मुझ अबला पर कामदेव ने एक साथ सैकडो बाण लेकर आक्रमण किया, और मेरे प्रियतम आज भी नहीं आये।

भादों का महीना भयावना होकर आया। प्रियतम की गैरहाजिरी में मुझे कुछ नहीं भाता। दादुर के ये कर्णकटु शब्द घायल कर रहे हैं। हाय! मैं अबला रात कैसे काटूं?

आश्विन में मेरी आशा का अंत हो गया। मेरी मनोकामना पूरी न हुई। हाय! मेरे प्रिय प्राणनाथ ने मेरा विस्मरण कर दिया।

कार्त्तिक महीने में कठोर-हृदय काम ने मुझ अबला को व्याकुल कर दिया। हे कामदेव, मेरे प्रियतम से जा कर कहो कि वे आवें, और मैं उन्हें अधर-पान कराऊँ।

अगहन का महीना आया। लोग जाडा के आक्रमण से कांपने लगे। मैं अगहीन अनग के सूक्ष्म अग को जला दूंगी, और स्वय योगिनका वेष धारण करूँगी।

पौष में पाला की बारिश होने लगी। हाय! मेरे प्राणपति मेरे पास नहीं हैं। मैं अपनी सूनी सेज पर खिन्न हो रही हूँ, और बिना प्रियतम के मेरा जोबन ठड से प्रकम्पित हो रहा है।

माघ में कामदेव ने अपने विमान पर आरूढ होकर मेरे मन में उथल-पुथल मचा दी। हाय! मेरे बुजदिल प्रियतम ने मेरा सब तरह से हनन किया। यद्यपि मैं सर्वथा निर्दोष हूँ।

फागुन आया। मेरे प्रियतम भी आ गये। मैं उनके साथ होली की बहार लूटूंगी। कवि 'नेवालाल' कहते हैं कि इस प्रकार ये बारह महीने पूरे हुए।

(१६)

प्रथम मास अषाढ़ हे
वर्षा ऋतु आयल
शोच करथि व्रजनारिन हे
अजहुँ ने मिलल कन्हाय

सावन सर्व सुहावन
मेघवा बरिस दिन राति

झिंगुर डारे झरोइत हे
ताहि डरल मोरि छाति

भादव रइनि भयावन हे
दोसर दामिनि दुख भारि
दामिनि दमिसि डरावय हे
बिना रे पुरुपवा क नारि

आसिन आस लगाओल हे
आशो न पुरल हमार
कोन जोगिनिआ वैरिन भेल
हे राखि लेल वनवार

कातिक कत परदेश गेल
लिखियो ने भेजल पाँत
घर-घर दिअरा लेसयलो
जाहि दिन रहलि अहिवात

अगहन दिन सुदिन भेल
सब सखि गोना क जाय
हमरो करम जरिय गेल
ककरा सँ कहवो वुझाय

पूस क जार ठार भेल हे
तेजि गेल गिरिधारि
रचि-रचि पलगा ओछएलो
हे तेजि गेल गिरिधारि

माघ में पाला वसत भेल
से हो दुख महलो ने जाय

हम त तिरिया अभागल
मरिवो माहुर विस खाय

फागुन फगुआ के दिन भेल
सखि सव धूम मचाय
उडत गुलाव अविरवान
देखि देखि जिव ललचाय

चैतहि चित मोर चचल
फुलि गेल चन्द्र चकोर
माधव खेलै त मधुपुर
मोर लेखे किछु ने मोहाय

उखम आयल वइसाख हे
से हो दुख सहलो ने जाय
खट रस वयरि मधुर रस
अग पर लेपितो चढाय

जेठ प्रभु जी सँ भेट भेल
पुगि गेल मन केर आस
सुर नर मुनि सव गाओल
पुरि गेल वारहमास

पावस ऋतु। आषाढ़ का महीना। व्रजागनाएँ विरहाकुल हो कर कह रही हैं—अब तक श्री कृष्ण नहीं आये।

सावन का सुहावना महीना। दिन-रात मेघ झहर रहे हैं। झींगुर की झंकार सुन कर मेरा हृदय वारम्बार काँप उठता है।

भादों की भयावनी रात। दामिनी की दमक दुखद प्रतीत होती है। दामिनी दमक-दमक कर मुझ पुरुष-हीन अवला को जाने क्यों भयभीत कर रही है?

आश्विन में मैंने आशा लगा रक्खी थी, किन्तु वह पूरी न हुई। न मालूम वह कौन-सी बैरिन जोगिन है जिसने मेरे प्रियतम को लुभा रक्खा है।

कार्त्तिक में प्रियतम परदेश चले गये। मिलन की प्रथम रात्रि में उन्होंने घर-घर में चिराग जला कर उत्सव मनाया था। लेकिन वहाँ जाने पर एक पत्र तक नहीं लिखा।

अगहन का मगलमय दिन। हमारी सखियां द्विरागमन में पति-गृह जा रही है। हाय! मेरी तकदीर कितनी खोटी है। मै अपने दिल की बात किससे कहूँ?

पौष। कडाके का जाडा। इस कठिन अवसर पर मेरे प्रियतम मेरा परित्याग कर प्रवासी हो गये। मैंने रच-रच कर सेज सँवारी है। लेकिन प्रियतम परदेश चले गये।

माघ का जाडा बसन्त का-सा ही विरह-वेदन पैदा करता है जो मेरे लिए असह्य है। मै अभागिन हूँ। जहर पान कर शरीर त्याग दूंगी।

फागुन का महीना। होली की बहार। हमारी सखियाँ रग-क्रीडा करती है। चारों ओर कुकुम और गुलाल उड रहे है, जिन्हें देख-देख कर मन तरस रहा है।

चैत में चित्त चचल हो उठा। चाँद-प्रेमी चकोर उछल पडे। प्रियतम मधुपुर में भूल गये। मुझे कुछ नहीं भाता।

वैशाख में भीषण गर्मी पडने लगी। यह दुख मुझसे सहा नहीं जाता। षट्रस व्यजन दुश्मन हो गये। यदि इस समय शरीर पर शीतल चन्दन का लेप किया जाता तो फिर क्या कहना?

जेठ में प्रियतम से भेंट हो गई। मुराद पूरी हुई। मनुष्य, देवता सभी ने मिल कर 'बारहमासा' गाये, और इस प्रकार ये बारह महीने पूरे हुए।

(१७)

चैत हे सखि फूलल वेली
भँओरा लेल निज वास हे

तेजि मोहन गेल मधुपुर
हमर कोन अपराध हे

वैशाख हे सखि उखम ज्वाला
घाम में भिजल शरीर हे
रगरि चन्दन अग लेपो
जौं गृहि रहितो मे कत हे

जेठ हे सखि हेठ वरसा
श्याम हमर विदेश हे
सुमिरि हरि विनु जीव तरसय
नयन झहरत नीर हे

अषाढ हे सखि बूंद घन घन
दादुर रग मचाव हे
पाहुन पहुना अवइत देखल
श्याम मधुपुर छाव हे

सावन हे सखि लिखल पाँती
ऊधो पठवल मोहि हे
चलहु सखि सब घाट यमुना
देखब कदम चढि वाट हे

भादव हे सखि रइनि भयावन
दूजे अँधेरिया रात हे
घर पछुअरवा कुम्हराक डेरवा
नित उठि छानन दूकान हे

आसिन हे सखि आस लगाओल
आसो ने पुरल हमार हे

एहो आस पुरल कुवरि जोगिनिया
जिन कत राखल लोभाय हे

कार्त्तिक हे सखि कत परदेश गेल
नयन भरल दुनु नीर हे
ककरा दुअरिया रामा ठाढि होएवों
ककरा सँ बोलव वात हे

अगहन हे सखि सारि बुधि भुलि गेल
फुटि गेल सभ रग घान हे
हसा चकेउआ रामा केरि करय
कोयलि करथि किरकार हे

पूस हे सखि कूहि परि गेल
भिजे गेल तनमा क चीर हे
एकत भिजे रामा कटावक चोलिया
जीवन भेल गति हीन हे

माघ हे सखि पाला परि गेल
थर थर कांपय आठो अँग हे
हम धनि काँपत टुटलि मरइया
पिया कांपय परदेश हे

फागुन हे सखि मास वारह
कृष्ण उतरथि पार हे

हे सखी, चैत में वेली खिल गई। उन पर भौंरे ने बसेरा लिया। मुझे छोड कर मोहन मधुपुर चले गये। मेरा क्या अपराध?

हे सखी, वैशाख की प्रचड ज्वाला। शरीर पसीने से लथपथ। यदि इस समय मेरे प्रियतम होते तो मैं चन्दन घिस कर उनके अग पर छिडकती।

हे सखी, जेठ में थोडी-बहुत वर्षा होने लगी। मेरे श्याम प्रवासी हैं। उनका स्मरण कर मेरा जी व्याकुल हो उठता है, और आँखों से अश्रुपात होने लगते हैं।

हे सखी, आषाढ में बडी-बडी बूँदें गिरने लगीं। दादुर बोलने लगे। हमारी सभी सखियो के साजन घर लौट आये। लेकिन मेरे प्रियतम अभी मधुपुर में ही हैं।

हे सखी, सावन में मैंने प्रियतम के लिए पत्र दे कर ऊधो को भेजा। चलें हम सब यमुना-किनारे कदम्ब के वृक्ष पर बैठ कर उनकी राह देखें।

हे सखी, भादों की रात अत्यंत भयावनी है। तिस पर अन्धेरी रात और भी अन्धेर कर रही है। मेरे घर के पिछवाडे कुम्हार का घर है जो नित्य प्रातःकाल उठ कर दूकान छाना करता है।

हे सखी, आश्विन में मैंने आशा लगा रक्खी थी। लेकिन वह पूरी न हुई। आशा तो सौतिन कुब्जा की पूरी हुई, जिसने मेरे प्रियतम को भुला रक्खा है।

हे सखी, कार्त्तिक में मेरे प्रियतम परदेश चले गये। मेरी दोनों आँखो में आँसू छलछला आये। अब मैं किसके द्वार पर खडी हूँगी। किससे हँस कर बातें करूँगी?

हे सखी, अगहन में मेरी अक्ल हैरान हो गई। सब प्रकार के धान फूट गये। हंस और चकेवा क्रीडा करने लगे। कोयल कूकने लगी।

हे सखी, पौष में कोहरा गिरने लगा। चुँदरी भींग गई। एक तो मेरी कटीली चोली गीली हो गई, और दूसरे मेरा दीवाना जोवन कुम्हला गया।

हे सखी, माघ में पाला पडने लगा। अग-प्रत्यंग थर-थर काँपने लगे। मैं तो अपनी टूटी झोपडी में काँप रही हूँ, और मेरे प्रियतम परदेश में काँप रहे होंगे।

हे सखी, फागुन मे वारह महीने पूरे हो गये। मेरे सलोने श्रीकृष्ण भी आ ही रहे हैं।

(१८)

बारहमासा छंदपरक

साओन सर्व सोहाओन सखि रे
फुललि बेलि चमेलि यो
रभसि सौरभ भ्रमर भ्रमि भ्रमि
करय मधुरस केलि यो
आ रे केलि करथु पहुँ मन दय
सखि अधिक विरह मन उपजय

भादव घन घहराय दामिनि
गरजि गरजि सुनावि यो
बरसु घन झहर बुद रिमिझिम
मोहि किछु नहि भाव यो
आ रे भामिनि भय घन दमसय
सखि मुरुछि मुरुछि खसु महिमय

परिणाम कोन उपाय हे सखि
करब कोन परकार यो
मास आसिन अधिक ज्वाला
विरह दुख अपार यो
आ रे कतेक सहब दुख पहुँ विनु
सखि ककरो नाह विछुडि जनु

नाह विछुडल मोर हे सखि
हयत जीवक अन्त यो
अरुण कातिक धसिय धायब
जतय लुबुधल कन्त यो
आ रे कत जोहय हम जायब
सखि जतय उदेश हम पाएब

अगहन हे सखि सारि लुबुवल
लवल जोवन मोर यो
योगिनि भय हम जगत जोहव
जतय जुगलकिशोर यो
आ रे युक्ति जौं प्रभु अओताह
सखि कर गहि कठ लगओताह

पूस धैरज वरय चाहिय
भमर रटल विदेश यो
हुनि विदेशी मुखहि खेपताह
हमर तरुण वयस यो
आ रे विदेशहि वैसि गमओताह
हमर गृह नहि अओताह

माघ झिहिर पवन डोलय
देह झाझर मोर यो
हँसथि वसन उघारि सखि सब
कहथि मोहि विजोर यो
आरे शोक वियोग मनहि मन
सखि चित नहि रह थिर एको छन

अग अगित देह मजित
विरह कम्पित गात यो
आवि पहुँचल मास फागुन
आव करव जिवघात यो
आरे राखव प्राण विपम सम
सखि योवन जोर विकलतम

यौवन जोर चकोर प्रभु विन
चैत चचल अति घना

कोयल कुहुकय मधुर शब्दय
करय कुतूहल उपवना
आरे कडकि पत्र लय लिखितहुँ
सखि प्रियतम ताहि पठवितहुँ

कडकि कमल मसिहान विरहिनि
पत्र लिखल बनाय यो
आयल मास वैशाख हे सखि
उखम सहल नहिं जाय यो
आरे आजुक रैनि नहिं अओताह
सखि प्रातकाल नहिं पओताह

जेठ हे सखि अधिक ऊखम
पिय बिन आव नहिं जीव यो
आनि यम धरि हृदय लगाएव
विर्षाहि घोरि हम पीव यो
आरे पिय विनु विष कर घोरि
सखि विनती करू कर जोरि

कर जोरि विनती मोर हे सखि
हमर की अपराध यो
कोन विधि अषाढ खेपव
परम दुख अगाध यो
आरे मूर्च्छित खसि भटकि कर
सखि हम धनि पडलहुँ सरोवर

जाहि सरोवर थाह कतहु नहिं
नयन वहय जलधार यो
भनहि 'कुलपति' रसिक अनुमति
चितहि धरिय अवधारि यो

आरे पल पल प्राण विकल अति
सखि कुब्जा हरल पहुँ गति मति

हे सखी, श्रावण में सर्वत्र सुहावना लगता है। फुलबाड़ियों में वेली और चमेली के फूल चिटख गये हैं। भ्रमर घूम-घूम कर फूलों के सौरभ का पान कर रहे हैं, और फूलो के साथ रभस-रभस कर प्रेम-क्रीडा करते हैं।

हे सखी, इसी तरह मेरे प्रियतम भी मेरे साथ मनमाना क्रीडा करें। क्योंकि मन अत्यंत विरहाकुल हो रहा है।

भादों में वादल आसमान में गरज रहे हैं। विजली कौंध-कौंध कर कडक रही है। वादल झहर-झहर कर वरस रहे हैं। हे सखी, अब मुझे कुछ नहीं भाता।

हम तरुणियो के लिए भयकारी ये वादल रह-रह कर गरज उठते हैं। और हे सखी, मैं मूच्छित हो-हो कर पृथिवी पर गिर जाती हूँ।

अव प्राण की रक्षा करने के लिए किस नुस्खे को काम में लाऊँ? आश्विन में काम की ज्वाला जोरो में भडक उठी है, और विरह का दुःख सीमा का लंघन कर गया है।

हाय! प्रियतम की गैरहाजिरी में अब और कितनी पीड़ा बरदास्त करूँ? हे सखी, कभी किसी का प्रियतम न विछुडे?

हे सखी, मेरे प्रियतम मुझसे विछुड गये। अव मेरे प्राण शरीर से जुदा हो जायेंगे। इस अरुण कात्तिक में मैं वहाँ आतुर होकर जाऊँगी, जहाँ मेरे प्रियतम रम रहे हैं।

हे सखी, जहाँ कहीं प्रियतम के रहने की खबर मिलेगी, मैं वहाँ-वहाँ ही उनकी टोह में जाऊँगी।

हे सखी, अगहन में धान फल कर खेतो में लहराने लगे। इधर मेरे दुर्वह जोवन भी झुक गये। (सच कहती हूँ) मैं जोगन हो कर प्रियतम की खोज में दुनियाँ की खाक छान डालूँगी।

काश, युक्ति करने से प्रियतम से साक्षात्कार होता तो वह मेरी वाँह पकड कर मुझे गले लगा लेते।

पौष में मैंने चित्त को चैन में लाना चाहा, लेकिन मेरा भ्रमर प्रवास में है। चैन कैसे मिले? वह प्रवास में अपना समय सुखपूर्वक बितायेंगे, ऐसा विश्वास है, और यहाँ मेरी तरुणाई तूफान बरपा कर रही है।

हे सखी, क्या मेरे प्रियतम प्रवास में ही सारा समय बिता डालेंगे? क्या वह यहाँ पुन नहीं आयेंगे।

माघ में पवन झिहिर-झिहिर बह रहा है। शरीर सूख कर झांझर हो गया। मेरी हमउम्र सहेलियाँ मुझे एकाकिनि कह कर और मेरे शरीर के वस्त्र खींच-खींच कर मेरा उपहास कर रही है।

मन शोक से अभिभूत और वियोग-वेदना से आकुल हो रहा है। हे सखी, क्षण-भर के लिए भी चित्त स्थिर नहीं रहता।

काम के ज्वार से अग-प्रत्यग तरगित और विरह की पीडा से प्रकम्पित हो उठे। हे सखी, लो यह फागुन महीना भी आ पहुँचा। अब मैं निश्चय ही आत्म-घात कर लूँगी।

हे सखी,तरुणाई की पीडा से व्याकुल इस प्राण की अब बडी कठिनाई से रक्षा कर सकूँगी।

चैत महीने में प्रियतम रूपी चकोर की गैरहाजिरी में चित्त अत्यत चचल हो उठा। कोयल कूक-कूक कर उपवन में क्रीडा करने लगी। हे सखी, काश मैं विरह की पाँती लिख कर प्रियतम को भेजती?

कमल-पत्र पर स्याही से विरहिणी ने प्रेम में शराबोर पत्र लिखा। हे सखी, वैशाख आ गया। अब गर्मी बरदास्त नहीं होती।

हे सखी, यदि आज की रात मेरे प्रियतम नहीं आये तो वह कल मुझे प्रातःकाल जीवित नहीं पायेंगे।

हे सखी, जेठ में बहुत ज्यादा गर्मी पडने लगी। अब प्रियतम के विना जीवित नहीं रहूँगी। जहर घोल कर पी लूँगी, और साक्षात् मौत का आलिंगन करूँगी।

हे सखी, प्रियतम के विरह में मैं गरल-पान कर लूँगी। मैं करबद्ध प्रार्थना करती हूँ। तुम इसमें दस्तन्दाजी मत दो।

हे सखी, मै करबद्ध प्रार्थना करती हूँ। मेरा क्या कसूर है कि प्रियतम ने मेरा परित्याग कर दिया? तुम्हीं वताओ, आषाढ महीने के इस असीम कष्ट को मैं किस तरह झेलूँ?

हे सखी, प्रेम के पथ में भटक-भटक कर अत में मैं विरह के अगाव सरोवर में गिर गई।

जिस सरोवर के असीम तल की माप नहीं। हाय! मेरी आँखो से आँसू प्रवाहित हो रहे है। कवि 'कुलपति' कहते हैं—हे विरहिणी, चित्त को चैन में लाओ।

विरहिणी नायिका कहती है—हे सखी, मेरे प्राण प्रतिक्षण विरहाकुल हो रहे हैं। हाय! कुब्जा ने मेरे प्रियतम की सारी सुध-बुध हर ली।

(१६)

चौमासा छन्दपरक

को[1] सुनि कान्ह[2] गमन कियो
मदन दहत[3] तन जोर
चचल नयन विलम्बित पथ
चितवहु पिय तोर
पथ विपाद हे सखि श्याम गेल[4] परदेश यो
शून्य सेज निकन्त[5] देखल कोना भेजव सनेश यो
दादुरा घन धनहि रोवै झग झिंगुर वाज यो
नव नेह अकम हृदय साले[6] प्रथम मास अषाढ यो
सावन सर्व सोहावन
कानन वोले मोर
तापर दछिन पवन वहे
कठिन हृदय पिया तोर

---

[1] क्या। [2] कृष्ण। [3] जलना। [4] गया। [5] कन्त-रहित। [6] शूल पै॰ होना।

कठिन और कठोर बालम दर्द किछु नहिं जान यो
कह परायल[1] विरह दुख सँ काम देल अनेक यो
काम देल अनेक हहरत प्राण अतिसय मोर यो
विरह प्रीति समुद्र जल में दुखित रैनि गमाव[2] यो
भादव रैनि भयावनि
कारि रैनि अन्हियारि[3]
चित्र विचित्र हिंडोला
झूले सोहागिनि नारि
गावि गावि झुलावे सखि सब अधर भरि पान यो
हीन छीन मलीन पिया बिनु कडक पाँचो वान यो
दसय[4] चाहत कारि नागिनि प्राण पाथर मोर यो
विकलि कामिनि पहुँ बिनु नयन झहरत नीर यो
शरद समय जल आसिन
पन्थुक सचर मन डोल
सूतलि धनि उठि वैसली
काग कदम पर बोल
बोलु कागा कदम क्योला पास कब हरि आव यो
उर्ध्व बाँहु निवास सखि करहिं मगल गान यो
राधिका मुख कमल विकसित शेष सुर मुनि गाव यो
'जयदेव स्वामी' चरण वन्दहिं शरण राखु गोविन्द यो

(२०)

चैत हे सखि फुललि वेली
भँमर लेल निज वास यो
तेजि मोहन गेल मधुपुर
हमर कोन अपराध यो

---

[1] भागा, [2] विताना । [3] अंधेरी । [4] डँसना ।

वैशाख हे सखि कोइलि चहुँ दिशि
कुहुकि मदन जगाव यो
सुमिरि नित हिय मोर कडके
उठय विरहक ज्वाल यो

जेठ चहुँ दिशि श्याम वादर
देखि मोहि डर लाग यो
जानि मोहि अनाथ विरहिनि
मेघ गरजि सुनाव यो

मेघ गरजय चमकि चमकय
विजुलि मास अषाढ यो
मोर के रव शोर अति घन
घोर सहलो न जाय यो

साओन सननन पवन सनकय
दादुर टर्र टर्र शोर यो
वुन्द झहरय भ्रमर भनकय
नयन टपकय नीर यो

भादव हे सखि भरल नदिया
घेरल चहुँ दिशि देश यो
के लय जायत मोर पाँती
कन्त देत वुझाय यो

आसिन हे सखि आस लगाओल
आओत ने जिवि देश यो
कैल हे सखि भोग भोगलहुँ
भेलहुँ आव निराम यो

अनुक्रमणिका

अनुक्रमणिका

उ

ऋ

ए

ग

घ

च

घ

न

प

फ

ब

ह

ह

अनुक्रमणिका